कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 51 अंक : 9 | जुलाई 2005 | मूल्य : सात रुपये

भारत में जनसंख्या की समस्या : कारण और निवारण

ऊर्जा नीति - वैकल्पिक स्रोतों का बढ़ता महत्व

भारत में जल विद्युत की अपार संभावनायें

ग्रामीण क्षेत्रों में पोलियो के प्रति जागरूकता

रोज़गार को बढ़ावा देता जटरोफा

आर्थिक समृद्धि का सम्बल - हस्तशिल्प का संरक्षण

प्रमुख फैसले और पहलें

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार–स्तंभ है। हालांकि कृषि का भारत के कुल घरेलू उत्पाद में केवल एक चौथाई हिस्सा ही योगदान देता है, लेकिन यह 58.4 प्रतिशत लोगों को रोजगार देता है और 65 करोड़ लोग इसके सहारे जीविकोपार्जन करते हैं। इस समय यह क्षेत्र कई चुनौतियों का सामना कर रहा है जिसका उत्पादन पर प्रतिकूल असर पड़ा है। कृषि क्षेत्र की उत्पादकता का अर्थव्यवस्था के विकास में महत्व देखते हुए विभाग ने वर्ष 2005–06 की योजना राशि को 4178.32 करोड़ रुपये कर दिया जो 2650 करोड़ रुपये के विगत वित्तीय वर्ष के अनुमानित बजट के मुकाबले 57.7 प्रतिशत अधिक है।

कृषि ऋण परिदृश्य

सरकार द्वारा 18 जून, 2004 को एक व्यापक ऋण नीति की घोषणा की गई। इसमें ऋणगति को अगले तीन वर्षों में दुगना करने का फैसला किया गया जिससे किसानों को राहत मिले। वर्ष 2004–05 के लिए लक्षित ऋण दायरा 105 हजार करोड़ रुपये था। इसके मुकाबले बैंकिंग क्षेत्र के (निजी क्षेत्र से अलग) 1,06,866,48 करोड़ रुपये मार्च के अंत या 3005 तक कृषि ऋण के रूप में प्रदान किए। यह निर्धारित लक्ष्य का 101.87 प्रतिशत था। इसके अलावा निजी क्षेत्र के अध्ययन और वाणिज्यिक बैंकों ने फरवरी के अंत 2005 तक 8276.32 करोड़ रुपये कृषि ऋण उपलब्ध कराए। 50 लाख किसानों के निर्धारित लक्ष्य के मुकाबले 78.84 लाख नए किसानों को वाणिज्यिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों और सरकारी बैंकों की ओर से वित्तीय ऋण की मदद की गई। इसमें 16,758 वे किसान भी शामिल थे जो साहुकारों के कर्ज से दबे हुए थे।

लघु अवधि सहकारिता ऋण ढांचे की कायापलट के लिए प्रोफेसर ए. वैद्यनाथन की अध्यक्षता में एक कार्यदल का गठन किया गया। इसकी सिफारिशों को सरकार ने सिद्धांततः स्वीकार कर लिया है। अब इस कार्यदल को लंबी अवधि के सहकारिता ऋण ढांचे का अध्ययन करने और उसे अधिक सुदृढ़ करने के बारे में सुझाव देने का दायित्व सौंपा गया है।

सहकारिता को मजबूत बनाना

संप्रग सरकार के न्यूनतम साझा कार्यक्रम के अनुसार सरकार यह सुनिश्चित करेगी कि सरकारी संस्थाएं, लोकतांत्रिक, स्वायत्तशासी और व्यावसायिक ढंग से कार्य करें। यह तय किया गया कि संविधान में आवश्यक संशोधन किए जाएंगे जिससे सहकारी संस्थाओं को अधिकार संपन्न बनाने के साथ स्वयंसेवी आधार, स्वायत्तशासन, लोकतांत्रिक नियंत्रण, और पेशेवर प्रबंधन का प्रावधान किया जा सके।

फसलों का बीमाकरण

राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना (एनएआइएस) किसानों को प्राकृतिक आपदा, कीट और रोगों के कारण बर्बाद हुई फसलों का बीमा और वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता है। यह योजना खाद्य फसलें (अनाज, दालें और जौ–ज्वार आदि), तिलहन, जिसमें सोयाबीन भी आता है, सालाना व्यावसायकि/उद्यान–कृषि फसलें जैसे आलू, गन्ना, कपास, अदरक, प्याज, हल्दी, मिर्च, अनानास, केला, जूट इत्यादि पर लागू की गई है। 23 राज्य तथा 2 केंद्र शासित क्षेत्र इसे कार्यान्वित कर रहे है। पिछले वर्षों के फसलों के मौसम जैसे रबी (1888–2000) से खरीफ (2004) के दौरान 588 लाख किसानों का इस योजना के तहत 52763 करोड़ रुपए का बीमा किया गया। करीब 160 लाख किसानों ने 4,887 करोड़ रुपये का अपना–अपना दावा किया।

प्रधानमंत्री कार्यालय के निर्देशों के अनुसार फसल बीमा योजना को और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए विभाग द्वारा एक संयुक्त समूह का गठन किया गया है। इसके सुझावों के आधार पर एक प्रारूप बनाकर मंत्रालय की स्वीकृति के लिए भेजा गया।

सूखा–क्षेत्र कृषि पर विशेष कार्यक्रम

हालांकि 60 प्रतिशत भारतीय कृषि अभी भी मानसून पर निर्भर है। देश के सूखा तथा सूखा–प्रभावित क्षेत्रों की समस्याओं को सुलझाने की बहुत आवश्यकता है। विभाग ने तदनुसार एक नई योजना प्रस्तावित की है– सूखाक्षेत्र/वर्षा पर निर्भर कृषि प्रणालियों को उन्नत करना। इस योजना के अंतर्गत वर्षा के जल को संचित कर उसका प्रभावशाली उपयोग, मिट्टी में नमी के साथ–साथ जैविक खाद का उपयोग, सूखा क्षेत्र, कृषि के उन्नत तरीके जैसे बिंदुओं पर विशेष ध्यान दिया जाएगा।

उद्यान कृषि कार्यक्रम

कृषि–मौसम में विभिन्नता और उसके फलस्वरूप विभिन्न किस्म के फल तथा सब्जियों के उत्पादन की क्षमताओं को ध्यान में रखते हुए कृषि विभाग उद्यान कृषि विकास के लिए कई योजनाएं लागू कर रहा है, जैसे सिक्किम सहित उत्तरी पूर्वी राज्यों, हिमाचल प्रदेश, जम्मू और कश्मीर तथा उत्तरांचल के लिए उद्यान कृषि विकास के लिए टेक्नोलॉजी मिशन ओर नारियल टेक्नोलॉजी मिशन का गठन। उद्यान कृषि को रोजगारोन्मुख बनाने और किसानों की आय को बढ़ाने के लिए विभाग राष्ट्रीय उद्यान कृषि मिशन शुरू करने जा रहा है। समस्त ग्रामीण क्षेत्रों विशेषकर उत्तरपूर्वी राज्यों में राष्ट्रीय बांस व्यापार विकास मिशन का भी प्रस्ताव रखा गया है जिसके द्वारा बांस रोजगार का साधन बनेगा।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 20 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में ड्रिप तथा स्प्रींकल सिंचाई के लिए सुक्ष्म सिंचाई योजना भी प्रस्तावित है। इस तकनीक से पानी का प्रभावशाली ढंग से उपयोग होगा और पैदावार बढ़ेगी। इन प्रयासों द्वारा वर्षा पर निर्भर क्षेत्रों में कृषि उद्यान उत्पाद–तिलहन और दालों के उत्पादन में वृद्धि होगी।

(शेष भाग कवर 3 पर)

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 51 ● अंक : 9 ● पृष्ठ : 48

आषाढ़–श्रावण 1927

जुलाई 2005

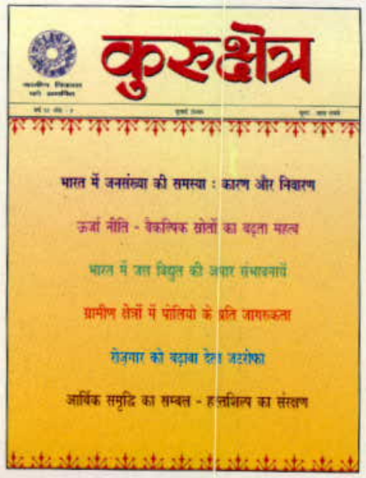

संपादक
स्नेह राय

उप संपादक
जयसिंह

संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014
तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : dpd@sh.nic.in dpd@pub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक
जगदीश प्रसाद
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

आवरण
राहुल शर्मा

सज्जा
संतोष कुमार सिंह

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

● भारत में जनसंख्या की समस्या : कारण और निवारण	डा. नरेन्द्र पाल सिंह और प्रमिल कुमार	3
● जनसंख्या, संसाधन : मूल्यांकन एवं प्रबंधन	डा. राम मिलन मिश्र	9
● जनाधिक्य का गहराता संकट	डा. रवि शंकर जमुआर	16
● बढ़ती जनसंख्या : एक त्रासदी	मनीष कुमार सिन्हा	19
● ग्रामीण विकास में बायोगैस की भूमिका	डा. गणेश कुमार पाठक	21
● ग्रामीण क्षेत्रों में वैकल्पिक ऊर्जा साधन	विनोद कुमार मिश्र	26
● गैर–परंपरागत ऊर्जा स्रोत के क्षेत्र में सरकार के प्रमुख फैसले और पहलें		28
● ऊर्जा नीति – वैकल्पिक स्रोतों का बढ़ता महत्व	भारत डोगरा	29
● आणविक ऊर्जा के क्षेत्र में प्रमुख फैसले और पहलें		30
● भारत में जल विद्युत की अपार संभावनाएं	आशुतोष दीक्षित	31
● विद्युत के क्षेत्र में संयुक्त प्रगतिशील सरकार के प्रमुख फैसले और पहलें		32
● ग्रामीण क्षेत्रों में पोलियो के प्रति जागरूकता	प्रतिभा राज	34
● राष्ट्रीय पल्स पोलियो कार्यक्रम	राकेश शर्मा 'निशीथ'	37
● राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन	वी मोहन राव	38
● धूम्रपान : स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए घातक	गोपालसिंह बिष्ट	40
● बुटिक में है रोज़गार के अवसर	अनिता वर्मा	42
● आर्थिक समृद्धि का सम्बल – हस्तशिल्प का संरक्षण	नन्दिता मिश्र	44
● राष्ट्रीय जूट नीति	संदीप दासगुप्ता	45
● जटरोफा उगाएं, बायोडीजल बनाएं	आर.सी. जोशी	46
● मोबाइल टेलीफोनी का जादू	सतीश पांडया	47

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

ज्ञान और बुद्धिमत्ता केवल धर्मग्रंथों में ही निहित नहीं होती है - आसपास घट रही घटनाओं से भी हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। अपने नियंत्रण से बाहर के मुद्दों पर हमारे असहज होने का कोई कारण नहीं है। सही विकल्प उन्हें अपनी राह छोड़ देना है। तब तक जो भी राहत मिलती है उसे ही स्वीकारें।

यदि विवादों को दूर करना है तो किसी को झुकना है, लेकिन मैं ही क्यों झुकूं। गलती दूसरे व्यक्ति की है। सजा उसे दी जानी चाहिए। यदि विवाद को दूर करना है तो उसे झुकने और मेरी बात, जो सही है, मानने के लिए कहा जाना चाहिए। दुर्भाग्यवश विवादास्पद मुद्दे पर दोनों ही विवादित पक्ष की समान राय है। यदि विवाद का हल अपेक्षित है तो ऐसा कोई सिद्धान्त हो जिससे कि दोनों में से किसे दूसरे की बात के साथ समझौता करना चाहिए, तय हो सके।

जवाब के लिए हमें अपने आसपास की साधारण चीजों को देखना होगा। एक पानी से भरा गिलास है और एक खाली गिलास। खाली गिलास को भरने हेतु कौन झुकता है। निश्चित रूप से भरा हुआ गिलास। यदि विवाद का समाधान करना है तो जिसके पास अधिक है उसे ही समझौता करना है। क्या यह कमजोर पक्ष द्वारा दूसरे को ब्लैकमेल की अनुमति देने का औचित्य ठहराता है? नहीं।

सारांश यह है कि कोई दूसरा विकल्प नहीं हो सकता है अपेक्षाकृत कमजोर पक्ष द्वारा ब्लैकमेल करने को रोकने हेतु उसे विवाद की निरन्तरता को जन्म देने वाली उस चीज का हिस्सा बनाने में निहित है। यह उद्दंडता या स्वार्थ लोलुपता हो सकती है। यदि कमजोर पक्ष उद्दंडता छोड़ देता है और मजबूत पक्ष कुछ रियायतें देने में इच्छुक हो तो विवाद के समाधान की राह हमेशा सुलभ है।

इस संसार में हर व्यक्ति अज्ञानता और अंधकार में जन्म लेता है और प्रकृति के सिद्धान्तों के अनुसार माता-पिता गुरु से ज्ञान प्राप्त करके जीवन को सुखमय बनाने के सतत प्रयास करता रहता है। जो व्यक्ति किसी भी बात से मानसिक तौर पर हार जाता है वह जीवन में हार जाता है और जो मन से जीत जाता है वह जीवन जीत जाता है। इसलिए मन में निरंतर उत्साह, आनन्द बनाए रखना चाहिए। मन का संबंध व्यक्ति की मानसिक विचार शक्ति से है। जीवन में सफल होने के लिए इच्छा शक्ति का होना अनिवार्य है। जीवन में सफलता-असफलता मन की शक्ति पर निर्भर होता है। इसलिए यदि कोई कमजोर व्यक्ति कुछ करने की ठान लेता है तो वह सफल हो जाता है, जीत पाता है।

मनुष्य के मन-भाव और शरीर की शक्ति से जो ऊर्जा पैदा होती है वह इच्छा शक्ति के अनुरूप होती है। जिस व्यक्ति में इच्छा शक्ति नहीं वह पशु समान है। आत्म-विश्वास ही जीवन का पथ-प्रदर्शक होता है और इसी के सहारे सही और बड़े से बड़े कार्य किए जा सकते हैं। ऐसे व्यक्ति को शक्ति का खजाना कह सकते हैं - वही कठोर परिश्रम करके अपने लक्ष्य को भी प्राप्त कर सकता है। शक्तिशाली इच्छा शक्ति ही उनकी सफलता का कारण होती है। मनुष्य बलवान इसीलिए है क्योंकि उसमें विचार करने की शक्ति है। अच्छे -बुरे कार्य की पहचान होती है। विचारों की पवित्रता जीवन की पवित्रता होती है। शुद्ध विचार से आत्मा और शरीर शुद्ध होते हैं। इन्हीं विचारों के कारण मनुष्य का जीवन सफल होता है।

संसार में जितने भी आविष्कार हुए हैं वे सब वैज्ञानिकों की मन की इच्छा शक्ति और उनके सतत प्रयासों के ही परिणाम हैं। जीवन में उन्नति के लिए लक्ष्य जरूरी है। लक्ष्यहीन व्यक्ति इस संसार में मृत-समान है। आचरण का अनुशासन ही जीवन की नींव है जो मनुष्य को उन्नति के रास्ते पर आगे बढ़ाता है।

भारत में जनसंख्या की समस्याः कारण और निवारण

डा. नरेन्द्र पाल सिंह और प्रमिल कुमार

पूरे विश्व की जनसंख्या सन् 1830 तक मात्र एक अरब थी जो कि अगले शतक में अर्थात 1930 तक दोगुनी हो गयी। इसके बाद जनसंख्या में वृद्धि दर तेजी से होकर अगली एक अरब की वृद्धि मात्र 30 वर्षों में अर्थात 1960 तक हो गई। 11 जुलाई 1987 को विश्व में 5 अरबवें शिशु का जन्म युगोस्लाविया में हुआ इसीलिए इस दिन को विश्व जनसंख्या दिवस के रूप में भी मनाते हैं। अनुमान है कि विश्व की जनसंख्या सन 2010 तक सात अरब, सन 2022 तक 8 अरब और सन 2050 तक 9 अरब तक पहुंच जायेगी। इस कड़ी में हमारा देश भी पीछे नहीं रहा और इक्कीसवीं सदी में जनसंख्या की दृष्टि से अरबपति हो गया है जो कि आज भारत के लिए सबसे चिंता का विषय है। विश्व में चीन और भारत, दो देश ही ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या एक अरब को पार कर चुकी है। भारत में कुल विश्व की आबादी की 16.87 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है जबकि हमारा क्षेत्रफल दुनिया के कुल भाग का 2.4 प्रतिशत ही है। इस प्रकार विश्व में जनसंख्या की दृष्टि से भारत का दूसरा स्थान है जबकि क्षेत्रफल की दृष्टि से सातवां स्थान है। यह बात भी गौर करने लायक है कि 1991 से 2001 के दशक में हमारे देश की जनसंख्या में 17.89 करोड़ लोगों की निरपेक्ष वृद्धि हुई है। यह वृद्धि ब्राजील देश की कुल जनसंख्या से भी अधिक है। आजादी से पूर्व हमारी जनसंख्या 50 साल में मात्र 12 करोड़ ही बढ़ी जबकि आजादी के बाद 1951 से 2001 के बीच में 66 करोड़ 60 लाख बढ़ गई। वर्तमान में हमारी आबादी की वृद्धि दर प्रतिवर्ष लगभग 1 करोड़ 80 लाख है जो कि लगभग दो प्रतिशत वार्षिक होती है। जनसंख्या में हो रही तीव्र वृद्धि को, यदि हम घटाकर 0.9 प्रतिशत पर भी ले आए, तो आज से 45 साल बाद भारत दुनिया का सबसे अधिक आबादी वाला देश बन जायेगा। इतनी तेजी से आबादी बढ़ने पर भारत के लागों के जीवन स्तर में कितनी गिरावट आ जाएगी इसका अनुमान उतना कठिन नहीं है जितना कि भयावह है।

हमारे देश में यदि जनसंख्या वृद्धि का रुझान देखा जाये तो आजादी के बाद से जनसंख्या वृद्धि अधिक तेजी से हुई है। सारणी–1 के विश्लेषण से पता चलता है कि 1951 में जहां जनसंख्या 36.11 करोड़ थी वह 2001 की जनसंख्या के अनुसार लगभग तीन गुनी बढ़कर 102.86 करोड़ तक पहुंच गई है। आजादी से पूर्व के दशकों में जहां जनसंख्या में परिवर्तन 5 करोड़ की सीमा में रहते थे वे आज 18. 86 करोड़ तक पहुंच गए हैं। जनसंख्या वृद्धि की प्रतिशत दर भी जो 1951 में 13.31 प्रतिशत थी वह बढ़कर 2001 की जनगणना में 21.13 प्रतिशत तक हो गई है। सरकार द्वारा कानून पास करने के बाद भी लिंग एवं भ्रूण परीक्षण बंद नहीं हुए हैं और स्त्री पुरुष अनुपात दिन प्रतिदिन गिरता जा रहा है। 1951 में जहां 1000 पुरुषों के पीछे 946 महिलाएं थीं वे घटकर 2001 की जनगणना में 933 तक पहुंच गई हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि यदि परिवार नियोजन के साधनों के वितरण से संबंधित सरकारी आंकड़ों पर दृष्टि डाली जाए तो जनसंख्या वृद्धि बिल्कुल भी नहीं होनी चाहिए किन्तु सरकारी आंकड़ों को देखकर तो हम खुश होते हैं जबकि वे भ्रामक स्थिति प्रस्तुत करते हैं और जनसंख्या वृद्धि नियंत्रित होने का नाम नहीं ले रही है।

साक्षरता एवं जनसंख्या की संरचना

किसी भी देश का आर्थिक विकास वहां की जनसंख्या की साक्षरता के ऊपर निर्भर करता है। कुशल एवं शिक्षित मानव शक्ति अर्थव्यवस्था एवं देश को महत्वपूर्ण ढंग से प्रभावित करती है। हमारा देश साक्षरता की दृष्टि से आज भी बहुत पीछे है। सरकार द्वारा इस दिशा में व्यापक

सारणी संख्या–1

भारत में जनसंख्या की स्थिति का पूर्वावलोकन भारत में जनसंख्या का आकार एवं वृद्धि दर 1951–2001

जनगणना वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	दशक में परिवर्तन (करोड़ में)	दशक में वृद्धि की दर (प्रतिशत)	औसत वार्षिक घातांक वृद्धि दर (प्रतिशत)	स्त्री–पुरुष अनुपात (प्रति हजार पुरुषों पर महिलाएं)
1995	36.11	+ 4.24	+ 13.31	1.25	946
1961	43.92	+ 7.81	+ 21.51	1.96	941
1971	54.82	+ 10.90	+ 24.80	2.20	930
1981	68.33	+ 13.51	+ 24.66	2.22	934
1991	84.63	+ 16.30	+ 23.85	2.14	927
2001	102.52	+ 17.89	+ 21.13	1.93	933

कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं किन्तु विकसित देशों की तुलना में फिर भी साक्षरता दर काफी कम है।

सारणी–2 का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि साक्षरता दर 1951 में जो मात्र 18.33 प्रतिशत थी वह आज बढ़कर 65.38 प्रतिशत हो गई है। पुरुषों में साक्षरता की दर में 1951 के मुकाबले लगभग तीन गुना वृद्धि दर्ज की गई है जबकि महिलाओं ने साक्षरता दर बढ़ाने में पुरुषों को पीछे छोड़ दिया है और 1951 के 8.86 प्रतिशत के मुकाबले 2001 की जनगणना में 54.16 प्रतिशत तक साक्षरता दर को पहुंचाया है। यदि स्त्री–पुरुष में साक्षरता दर का अंतर देखें तो पुरुष प्रधान समाज होने के कारण यह अंतर लगातार बढ़ा है। हमारे देश में बाल श्रम, गरीबी, उचित सुविधाओं का अभाव, सामाजिक चेतना का अभाव, रूढ़िवादी, लिंगभेद, आदि ऐसे कारण हैं जो साक्षरता दर को कम करने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं और जनसंख्या वृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं।

सारणी संख्या–2

भारत में साक्षरता दर (1951 से 2001 तक)

वर्ष	व्यक्ति	पुरुष	महिलाएं	स्त्री–पुरुषों में साक्षरता दर का अंतर
1951	18.33	27.16	8.86	18.30
1961	28.30	40.40	15.35	25.05
1971	34.45	45.96	21.97	23.98
1981	43.57	56.38	29.76	26.62
1991	52.21	64.13	39.29	24.84
2001	65.38	75.85	54.16	21.70

ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या का स्वरूप

आज का प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति शहर में रहकर भौतिकवादी सुविधाओं का सुख उठाना चाहता है और वह गांव से शहर की ओर पलायन कर रहा है। गांधीजी का सपना गांव को विकसित करने का था किन्तु जनसंख्या की अधिकता, बेरोजगारी, आधारभूत सुविधाओं का अभाव, शिक्षा सुविधाओं का अभाव, बिजली की कमी, असुरक्षा की भावना आदि ऐसे कारण हैं जो कि ग्रामीण–शहरी जनसंख्या अनुपात को निरंतर बढ़ा रहे हैं।

1951 में शहरों में जहां 63 मिलियन लोग रहते थे वे अब बढ़कर 284 मिलियन तक पहुंच गए हैं जो लगभग साढ़े चार गुना है। गांव में यदि देखा जाये तो 1951 के मुकाबले 2001 में ढाई गुना वृद्धि ही हुई है सारणी–3 जो कि शहरी–ग्रामीण जनसंख्या अनुपात के अंतर को दर्शाता है। शहरी–ग्रामीण जनसंख्या अनुपात जहां 1951 में 17:83 था वह आज बढ़कर 28:72 तक हो गया है। 1951 में जहां 2843 शहरों में कुल जनसंख्या 36.10 करोड़ में से 6.24 करोड़ इन नगरों में रहती थी वहीं आज नगरीय जनसंख्या 28.49 करोड़ तक पहुंच गई है जो कि कुल जनसंख्या का 27.78 प्रतिशत है। भारत में नगरों की जनसंख्या बढ़ने का प्रमुख कारण जनसंख्या का कृषि पर बढ़ता दबाव, लघु एवं कुटीर उद्योगों का पतन, औद्योगिकरण तथा उद्योगों का नगरों में केंद्रित होना, आवागमन की सुविधा, आधुनिक शिक्षा पद्धति, बढ़ती हुई शिक्षित बेरोजगारी, नगरों में सुलभ सुख–सुविधाओं का साधन, सरकारी कामकाज में वृद्धि, गांवों में व्याप्त गरीबी, गिरती हुई कानून व्यवस्था की स्थिति एवं असुरक्षा तथा शहरी संस्कृति के प्रति आकर्षण आदि हैं।

जनसंख्या वृद्धि : कारण

जनसंख्या वृद्धि के बारे में अधिकांश लोगों की धारणा है कि प्रजनन दर ऊंची होने से जनसंख्या वृद्धि हो रही है जबकि वह इस बात पर ध्यान नहीं देते कि स्वास्थ्य के स्तर में सुधार होने से मृत्यु दर भी बहुत तेजी से गिर रही है। जनसंख्या वृद्धि में परिवार नियोजन के कार्यक्रमों की धीमी सफलता, व्यापक अशिक्षा और गरीबी का महत्वपूर्ण योगदान है। वैसे तो अशिक्षित लोग परिवार नियोजन के कार्यक्रमों के प्रति अनभिज्ञता दर्शाते हैं। जिसका नतीजा जनसंख्या में वृद्धि होता है अतः जनसंख्या वृद्धि के प्रमुख कारण निम्न हैं –

- सरकार द्वारा कानून बनाए जाने के बावजूद भी कम उम्र में शादी करना।
- रूढ़िवादी मान्यताओं के चलते पुत्र प्राप्ति के लिए निरंतर बच्चों को जन्म देना।
- अशिक्षित लोग अधिक संतान उत्पत्ति का ईश्वर/अल्लाह की देन मानते हैं और सन्तान उत्पत्ति पर नियंत्रण नहीं करते।
- शिक्षित नवदम्पत्तियों द्वारा भी रूढ़िवादिता और अंधविश्वास के कारण संदेहों एवं मानसिक उत्पीड़न के डर से संतान प्राप्ति में जल्दी करना और दो संतानों के बीच अधिक अंतर न रखना।
- अशिक्षा, दूरदर्शिता एवं धन के अभाव से ग्रस्त ग्रामीण लोग संतान उत्पत्ति में बाधक साधनों को नहीं अपना पाते और जनसंख्या वृद्धि के माध्यम बने रहते हैं।
- ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक सुरक्षा के अभाव के कारण अधिक संतानों को अच्छा मानते हैं।
- हमारे देश में प्रजनक आयु वर्ग का कुल जनसंख्या के साथ अनुपात लगभग 58 प्रतिशत है जो कि बहुत अधिक है।
- हमारे देश में गर्भ निरोध की आवश्यकताएं पूरी न होने से प्रजनन क्षमता की संभावनाएं बहुत अधिक हैं।
- वर्तमान में 16 करोड़ 80 लाख प्रजनन क्षमता वाले दम्पत्तियों में से मात्र 44 प्रतिशत के पास गर्भ निरोध के उपाय उपलब्ध हैं।
- हमारे देश का जनांकिकी ढांचा ऐसा है कि लगभग 74 प्रतिशत लोग गांव में वास करते हैं जहां प्रजनन, स्वास्थ्य और मूल स्वास्थ्य सुविधाएं व सेवाएं उपलब्ध ही नहीं हैं।

सारणी संख्या–3

ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या का स्वरूप

वर्ष	जनसंख्या (मिलियन में)		शहरी ग्रामीण जनसंख्या अनुपात
	शहरी	ग्रामीण	
1951	63	298	17 : 83
1961	79	360	18 : 82
1971	109	439	20 : 80
1981	160	524	23 : 77
1991	217	629	26 : 74
2001	284	740	28 : 72

- हमारे देश में शिशु मृत्यु दर अधिक होने के कारण, अधिकांश बच्चे छोटी उम्र में ही मौत का शिकार हो जाते हैं अतः लोग इस रिक्तता की भरपाई बार–बार बच्चे पैदा करके ही करते हैं।
- हमारे यहां 50 प्रतिशत से अधिक लड़कियों की शादी 18 वर्ष से कम उम्र में कर दी जाती है जबकि सरकार द्वारा कानूनन 18 वर्ष की बाध्यता लगाई गई है। लगभग 33 प्रतिशत बच्चे 2 साल के अंतराल से पैदा होते हैं जिससे शिशुओं की मृत्यु दर और मां के खराब स्वास्थ्य की संभावनाएं भी बढ़ जाती हैं।
- हमारी अधिकांश जनसंख्या निर्धन एवं गांव में रहने के कारण उनके पास मनोरंजन के बाहरी साधनों का अभाव रहता है अतः पति–पत्नी अपने आपसी संबंधों से ही मनोरंजन प्राप्ति का प्रयास करते हैं जिसकी परिणति संतानोत्पत्ति का कारण बनती है।
- हमारे यहां प्रतिवर्ष जनसंख्या में बाहर देशों से आने वाले प्रवासी काफी संख्या में जुड़ जाते हैं और वे फिर वापिस नहीं जाते।
- सरकार द्वारा परिवार कल्याण उपायों/कार्यक्रमों पर काफी व्यय किया जा रहा है किन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में अशिक्षा, अज्ञानता अदूरदर्शिता एवं अंधविश्वासों के कारण इन प्रयासों की उपेक्षा की जाती है।
- हमारे देश में जनसंख्या वृद्धि एवं ऊंची जन्म दर का एक प्रमुख कारण गर्म जलवायु भी है। आज जन्म दर 25 प्रतिशत से अधिक है जबकि मृत्यु दर में लगातार कमी होकर 9 प्रतिशत से नीचे पहुंच गई है।
- हमारे समाज में प्रत्येक मां–बाप अपनी सभी संतानों की विवाह की प्रत्याशा करते हैं भले ही वे विवाह के इच्छुक हों या नहीं, उनको विवाह की अनिवार्यता दर्शाई जाती है।
- हमारे यहां संयुक्त परिवार प्रथा का आज भी प्रचलन है अतः बच्चों के पालन–पोषण हेतु दम्पत्ति को अधिक कठिनाइयों का सामना नहीं करना होता अतः दम्पत्ति अधिक बच्चे पैदा करते रहते हैं।
- चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार के कारण लगातार मृत्यु दर में कमी हो रही है, जिसकी परिणति जनसंख्या के विस्तार के रूप में हो रही है।
- भारत में जीवन प्रत्याशा लगातार बढ़ रही है और संभावित आयु वर्ष 1951 के मुकाबले लगभग दोगुनी हो गई है जिसने जनसंख्या वृद्धि में अच्छा खासा योगदान किया है।
- हमारी सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों की सामाजिक एवं आर्थिक दुर्बलता के कारण वे संतान उत्पत्ति में पुरुषों का विरोध नहीं कर पातीं परिणामस्वरूप जनसंख्या में लगातार वृद्धि होती रहती है।

जनसंख्या वृद्धि : समस्याएं

जनसंख्या नियंत्रण का विकास एवं बेहतर जीवन स्तर से गहरा संबंध है। अनियंत्रित रूप से बढ़ रही आबादी हमारी विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए सबसे बड़ी चुनौती बनी हुई है। यह देश की विकास गतिविधियों को लगातार नाकाफी और अपर्याप्त साबित करने पर तुली हुई है। यही कारण है कि देश के नीति निर्माताओं का ध्यान निरंतर जनसंख्या नियंत्रित करने के प्रयासों पर लगा रहा है। आज आवश्यकता इस बात की हो गई है कि अकेले नीति निर्माताओं के भरोसे इस समस्या पर काबू नहीं पाया जा सकता। अतः हम सभी को इस समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना होगा। एक परंपरागत कृषि प्रधान समाज की मान्यताएं हमारी अज्ञानता, निर्धनता, अंधविश्वास तथा शहरों एवं गांव के बीच की खाई ही इस समस्या के मूल में दिखाई देती है। गांव से शहरों की ओर पलायन, आवास, खाद्यान्न एवं जलापूर्ति की समस्या, पारिस्थितिकीय असंतुलन आदि बढ़ती आबादी के परिणाम हैं। शिक्षा, लिंग–समानता, खाद्य सुरक्षा, तथा मानव विकास सूचकांकों के अति निम्न स्तर ने इस समस्या को और अधिक बढ़ावा दिया है। यदि हम परिवार कल्याण के साथ–साथ मानव संसाधन विकास एवं प्रबंधन की ओर अपना ध्यान लगाएं तो स्थिति पर काफी हद तक काबू पाया जा सकता है। अतः जनसंख्या वृद्धि ने हमारे बीच अनेक समस्याओं को जन्म दिया है जिनमें से कुछ समस्याएं निम्न हैं–

- जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण की समस्या उत्पन्न हो गई है।
- व्यक्ति ने भौतिकवादी सुविधाओं के चलते प्राकृतिक संपदाओं का निर्मम एवं अवैज्ञानिक तरीके से विदोहन किया है जिससे हमारी प्रकृति असंतुलित हो गई है।
- आधुनिक खेती के नाम पर कीटनाशक एवं रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग बेतहाशा रूप से किया है जिससे लोगों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है।
- आवासीय समस्या हल करने के लिए कृषि योग्य भूमि पर मकानों का निर्माण अव्यवस्थिति रूप में किया गया है। यदि यही स्थिति रही तो कुछ समय पश्चात खाद्यान्न की समस्या अपना विकराल रूप धारण कर लेगी।
- अनेक पशु पक्षियों एवं वन्य जीवों का अस्तित्व ही खतरे में हो गया है जो कि हमारे पर्यावरण को संतुलित करने में बहुत अधिक सहायक होते थे।
- देश में उपलब्ध जल का 70 प्रतिशत भाग प्रदूषित जल की श्रेणी में आ गया है और जिसमें 30 प्रतिशत विषाक्तता के स्तर तक पहुंच चुका है जो संक्रामम रोगों को फैलाने में बहुत सहायक होता है। इससे 15 लाख बच्चों की प्रतिवर्ष मृत्यु हो जाती है।
- जल का स्तर दो गुना तथा कहीं–कहीं तीन गुना तक नीचे चला गया है। यदि जनसंख्या वृद्धि इसी गति से होती रही तो भविष्य में जल की समस्या विकराल रूप धारण कर लगी।
- लोगों द्वारा अनेक जगहों पर पर्यटन स्थल विकसित करने से लोग उन जगहों पर एकत्रित होते हैं और गंदगी एवं कूड़ा– करकट फैलाकर प्रकृति के साथ छेड़छाड करते हैं जिससे अनेक औषधियुक्त पौधे भी विलुप्त होने के कगार पर हैं।
- प्रकृति के साथ अनावश्यक छेड़छाड़ करने से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मौसम परिवर्तन, समुद्र व जीव जन्तुओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है और तापमान में वृद्धि होकर बर्फ सामान्य से अधिक मात्रा में पिघलने लगी है। साथ ही कार्बन डाई आक्साइड जैसी ग्रीन हाऊस प्रभाव वाली गैस भी निरंतर बढ़ी है जो मानव के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।
- वनों के कटान से कुछ इस रूप में भी पड़ा है कि कुछ क्षेत्रों में लगातार सूखा एवं कुछ क्षेत्रों में भयंकर बाढ़ की स्थिति बन जाती है। सूखा पड़ने से वनों में प्रायः आगजनी की घटनाएं देखने व सुनने को मिलती हैं।

- अधिक मात्रा में वाहनों का प्रयोग होने लगा है जिससे दुर्घटनाएं एवं वाहनों से निकले धूएं से वायु प्रदूषण एवं ध्वनि प्रदूषण निरंतर बढ़ता जा रहा है। जो मानव के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।
- सरकार विकास हेतु बनाई गई योजनाओं को लागू नहीं कर पाती क्योंकि वह धन अन्य विकास कार्यक्रमों पर खर्च हो जाता है।
- अधिकतर लोग कुपोषण का शिकार हो रहे हैं। आए दिन भूख से मरने की घटनाएं देखने और सुनने को मिलती हैं।
- देश का आर्थिक विकास एवं वृद्धि अवरुद्ध हो रही है।
- समाज में झगड़े, जातिवाद, धर्मवाद, क्षेत्रवाद, आदि को प्रोत्साहन मिलने से कानून व्यवस्था भी प्रभावित होती है।
- बेरोजगारी की समस्या का सामना भी लोगों को करना पड़ रहा है।
- जानलेवा बीमारियों जैसे एड्स, यौन रोग, पोलियो, खसरा, चेचक आदि के संक्रमण का खतरा बढ़ रहा है।

जनसंख्या नियंत्रण – सरकारी प्रयास

जनसंख्या नियंत्रण हेतु तात्कालिक एवं व्यावहारिक प्रयासों की आवश्यकता है। आने वाले समय में भारत भूख एवं भ्रष्टाचार से मुक्त हो तथा प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन एवं आवास की सामान्य सुविधाएं उपलब्ध हो ऐसा सरकार का चिंतन रहा है। जनसंख्या नियंत्रण के लिए चलाये गए परिवार नियोजन कार्यक्रम की प्रारंभिक अवधारणा यह थी कि गर्भ निरोध ही सर्वोत्तम विकास है अर्थात बच्चों के जन्म पर नियंत्रण करके ही विकास कार्यक्रमों को सफल बनाया जा सकता है। सरकार द्वारा परिवार कल्याण कार्यक्रम चलाकर 1951 के बाद से बहुत सी उपलब्धियां भी हासिल की गई हैं जिनमें जन्म दर जहां 1951 में 40.8 प्रतिशत थी वह घटकर 2001 की जनगणना में 25.8 प्रतिशत तक आ गई है। मृत्यु दर में भी लगातार गिरावट दर्ज की गई है, जहां 1000 जीवित जन्मों पर 1951 में 146 थी वह आज घटकर 72 पर पहुंच गई है। सरकार द्वारा परिवार नियोजन की जरूरतों और उसकी विधियों के प्रति व्यापक जागरूकता पैदा की जा रही है जिससे कुल प्रजनन दर जहां 1951 में 6 प्रतिशत थी वो घटकर 3.3 प्रतिशत हो गई है। सरकार द्वारा सन 2010 तक राष्ट्रीय सामाजिक जनसांख्यिकीय लक्ष्य निर्धारित किये हैं जो निम्न हैं–

- बुनियादी प्रजनन और बाल स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं, आपूर्तियों और आधारभूत ढांचे की पूरी न हुई जरूरतों पर ध्यान देना।
- स्कूली शिक्षा को 14 वर्ष की आयु तक मुफ्त और अनिवार्य बनाना और प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तरों पर बीच में स्कूल छोड़ देने वाले लड़कों और लड़कियों के प्रतिशत को कम करके 20 से नीचे लाना।
- शिशु मृत्यु दर को कम करके उसे प्रत्येक 1,000 जीवित जन्मों पर 30 से नीचे लाना।
- मातृ मृत्यु दर को कम करके प्रत्येक 1,00,000 जीवित जन्मों पर 100 से नीचे लाना।
- सभी वैक्सीन निवारणीय रोगों की रोकथाम के लिए बच्चों में व्यापक रोग प्रतिरक्षण हासिल करना।
- लड़कियों के विवाह देर से करने, 18 वर्ष से पहले नहीं, और बेहतर रूप से 20 वर्ष की आयु के बाद करने को बढ़ावा देना।
- 80 प्रतिशत सांस्थानिक प्रसव और प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा 100 प्रतिशत प्रसव कराना।
- सूचना/परामर्श की व्यापक सुलभता प्राप्त करना और गर्भ निरोधन के विभिन्न विकल्प उपलब्ध कराना।
- जन्म, मृत्यु, विवाह और गर्भ का 100 प्रतिशत पंजीकरण करवाना।
- एड्स नियंत्रण संगठन के बीच अधिक एकीकरण को बढ़ावा देना।
- संचारी रोगों का निवारण और नियंत्रण
- प्रजनन और बाल स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था करने और इन्हें परिवारों तक पहुंचाने में भारतीय चिकित्सा पद्धतियों को शामिल करना।
- कुल प्रजनन दर के प्रतिस्थापन स्तरों को प्राप्त करने के लिए छोटे परिवार के मानदंड को जोरदार ढंग से प्रोत्साहित करना।
- संबंधित सामाजिक क्षेत्र के कार्यक्रमों को एक ही स्थान से कार्यान्वित करना ताकि परिवार कल्याण कार्यक्रम लोक संकेन्द्रित कार्यक्रम बन सकें।

जनसंख्या नियंत्रण – उपाय

जनसंख्या नियंत्रण की समस्या किसी राजनैतिक दल, व्यक्ति अथवा सरकार की नहीं बल्कि यह तो एक राष्ट्रीय समस्या है जिसका समाधान भी राष्ट्रीय स्तर एवं विस्तृत सोच के आधार पर किया जाना चाहिए। जनसंख्या वृद्धि हमारे विकास को प्रभावित करती है और अनेक समस्याओं जैसे बेरोजगारी, आवास, खाद्यान्न, निर्धनता, आर्थिक एवं सामाजिक विषमताएं, नैतिक पतन, निम्न उत्पादकता आदि को जन्म देती है और इन समस्याओं का समाधान जनसंख्या वृद्धि की समस्या के हल में निहित है। अतः जनसंख्या नियंत्रण हेतु निम्न सुझाव अपनाए जा सकते हैं–

- हमें अपनी शिक्षा प्रणाली में राष्ट्रीय समस्याओं को शामिल करना चाहिए एवं रोजगार उन्मुख बनाना चाहिए तथा सभी के लिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य होनी चाहिए।
- सरकार द्वारा विवाह हेतु निर्धारित आयु सीमा का कड़ाई से पालन सुनिश्चित किया जाए और उसमें दण्ड का कठोर प्रावधान रखा जाये।
- सरकार द्वारा प्रभावी परिवार नियोजन के कार्यक्रम बनाकर उनको प्रचारित, प्रसारित एवं लागू किया जाये।
- सरकार द्वारा तीव्र आर्थिक विकास हेतु योजनाएं बनाई जाएं जिससे लोगों के जीवन स्तर में वृद्धि हो सके और वह अपने भले–बुरे के बारे में स्वयं ही सोच सकें।
- लोगों में सामाजिक सुरक्षा की भावना को विकसित किया जाये ताकि वे ये न सोच सकें कि हम अधिक बच्चे पैदा कर ही सामाजिक रूप से सुरक्षित रह सकते हैं।
- सरकार द्वारा प्रभावी जनसंख्या नीति बनाई जानी चाहिए और उसको समय–समय पर आवश्यकतानुरूप परिवर्तित करते रहना चाहिए तथा जो लक्ष्य निर्धारित किये जायें उनको पूरा करने का भरसक प्रयास किया जाये। जीवन स्तर को ऊंचा उठाने एवं जनसंख्या पर नियंत्रण करने हेतु नई–नई खोज करनी चाहिए जिससे उत्पादन के प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ा जा सके।

● सरकार द्वारा जो क्षेत्र आर्थिक रूप से पिछड़े हुए एवं जनसंख्या वृद्धि की दृष्टि से आगे हैं ऐसे क्षेत्रों पर विशेष ध्यान देकर उनको आगे बढ़ाया जाये और जनसंख्या नियंत्रित की जाये।
● सरकार द्वारा ऐसा कानून पारित किया जाये कि दो या दो से कम बच्चों वाले दम्पत्तियों को प्रोत्साहित किया जाये तथा दो से अधिक बच्चों वाले दम्पत्तियों को हतोत्साहित किया जाये।
● जनसंख्या नियंत्रण हेतु स्वयंसेवी संगठनों को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से सहयोग लिया जाये। शिक्षा के प्रसार, यौन शिक्षा, छोटा परिवार,– सुख का आधार आदि के प्रसार–प्रसार के संबंध में इन संगठनों की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।
● जनसंख्या नियंत्रण एवं इसके दुष्प्रभावों की जानकारी देने हेतु हमें अपनी शिक्षा व्यवस्था में जनसंख्या से संबंधित पाठ्यक्रमों को अनिवार्य रूप से शामिल करना चाहिए जिससे भावी पीढ़ी की मानसिकता को बदला जा सके।
● जनसंख्या नियंत्रण कार्यक्रमों को राजनैतिक एवं धार्मिक दांवपेंचों से दूर रखा जाये।
● प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम एवं साक्षरता अभियान को परिवार नियोजन कार्यक्रम के साथ परोक्ष रूप से जोड़ देना चाहिए।
● सरकार द्वारा बाल विवाह को रोकने हेतु प्रत्येक विवाह का पंजीकरण अनिवार्य किया जाये।
● जनसंख्या नियंत्रण में महिलाओं का विशेष रूप से योगदान होता है अतः उन्हें मानसिक रूप से सुदृढ़ बनाया जाये तथा लड़के–लड़की में भेद समाप्त करने के लिए लड़की को और अधिक कानूनी अधिकार प्रदान किये जायें।
● ग्रामीण क्षेत्रों में मनोरंजन के साधनों का विस्तार किया जाये।

देश के आर्थिक विकास और लोगों की सामाजिक उन्नति में जनसंख्या वृद्धि सबसे बड़ी बाधा है। जनसंख्या वृद्धि से विकास की सभी योजनाएं गड़बड़ा जाती है और विकास दर में भी कमी आती है। अतः हम सभी को यह बात राष्ट्र एवं स्वयं के हित में सोचनी होगी कि जनसंख्या नियंत्रण कोई सरकारी कार्यक्रम नहीं है बल्कि यह तो हम सभी का कार्यक्रम है और जीवन स्तर ऊंचा उठाने का एक सामूहिक प्रयास है। इसमें हमें पूर्ण रूप से सक्रिय होकर सहयोग करना है। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के मन में यह बात बैठानी होगी कि हमारा विकास जनसंख्या नियंत्रण में ही निहित है तथा उन्हें परिवार नियोजन की भरपूर सुविधायें उचित मूल्य/मुफ्त उपलब्ध करायी जानी चाहिए और उन्हें इससे उत्पन्न खतरों जैसे पर्यावरण असंतुलन, भूमि का उपविभाजन एवं अपखण्डन, बीमारियों के संक्रमण का खतरा, आवासीय एवं खाद्य समस्या, आधारभूत सुविधाओं की कमी आदि के बारे में भी अवगत कराया जाना चाहिए। इस कार्यक्रम को कारगर सिद्ध करने के लिए हमें अपनी इच्छा शक्ति को सुदृढ़ करना होगा तभी हम उपरोक्त समस्याओं से निजात पा सकेंगे। हमे अपने अस्तित्व को बचाने के लिए जनसंख्या कार्यक्रम को लागू करना जरूरी ही नहीं बल्कि अनिवार्य हो गया है अन्यथा मानव का अस्तित्व मिटने में देर नहीं लगेगी। ✱

(लेखकद्वय साहू जैन कालेज, नजीबाबाद (उ.प्र.) के वाणिज्य विभाग में क्रमशः वरिष्ठ प्रवक्ता और प्रवक्ता हैं)

सशक्तिकरण जनसंख्या नियंत्रण की कुंजी है

प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने कहा है कि जनसंख्या नियंत्रण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए किसी भी जोर–जबरदस्ती का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। जनसंख्या तथा विकास संबंधी संसदीय संगठन (आईएपीपीडी) द्वारा तैयार किया गया 'एडवोकेसी ब्रीफिंग किट' का विमोचन करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि शिक्षा तथा जागरूकता से लोग, खासकर महिलाएं, गर्भधारण के मामले में सोच–समझकर निर्णय ले सकती हैं। उन्होंने कहा कि इस मामले में कोई भी नीति लोगों को सशक्त बनाने की होनी चाहिए, खासकर महिलाओं को, जिससे वे अपने भविष्य का फैसला स्वयं कर सकें। विकास अंततः लोगों का होता है इससे और ज्यादा विकल्प लोगों को मिलते हैं। विकास का मतलब है कि लोगों को उनके जीवन पर नियंत्रण का हक देना।

जनसंख्या की समस्या को मानव विकास की समस्या मानते हुए, प्रधानमंत्री ने ऐसा वातावरण तैयार करने पर बल दिया जहां नवजात शिशु मृत्यु दर नियंत्रित हो तथा प्राथमिक स्वास्थ्य सेवाएं मजबूत हों। डा. सिंह ने 'केरल अनुभव' के तरीके से जनसंख्या नियंत्रण और नवजात शिशु मृत्यु दर में उचित नीति और शिक्षा की भूमिका का उल्लेख करते हुए उन्होंने 'केरल अनुभव' का हवाला दिया।

केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री, डा. अंबुमणि रामदास ने प्रधानमंत्री से किट ग्रहण किया और कहा कि शिक्षा तथा जागरूकता जनसंख्या नियंत्रण की नींव है। 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन' ने भी जमीनी संस्थानों की मदद से इन समस्याओं से निपटने का निर्णय किया है।

डा. रामदास ने कहा कि जागरूकता तथा शिक्षा से स्वास्थ्य बजट को कम किया जा सकता है तथा संसाधनों का बेहतर तरीके से उपयोग किया जा सकता है। ✱

उत्तर भारत में IAS/PCS के सर्वश्रेष्ठ मार्गदर्शक

आर. के. शुक्ला

(सफलता के पर्याय) *Cel. 09415280009*

द्वारा

समाजशास्त्र

Batch starts from 18th July, 11th and 22nd August, 2005

महत्वपूर्ण तथ्य-

- नये विषय के रूप में (विशेषकर विज्ञान एवं वाणिज्य वर्ग के छात्रों के लिए) समाजशास्त्र का अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए विशेष वैज्ञानिक शैली द्वारा अध्यापन।
- प्रत्येक अध्याय के अन्त में उस अध्याय के IAS/PCS के 10 वर्षों के प्रश्नों का सूक्ष्म विश्लेषण।
- प्रश्नपत्र के बदलते स्वरूप के कारण Class Notes का विशेष स्वरूप, हर साल 90 प्रतिशत से अधिक प्रश्न विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में सर के Notes से ही।
- दिल्ली एवं लखनऊ के संस्थानों से निराश छात्र भी अपनी तैयारी को धारदार बनाने के लिए हमारे संस्थान में ही प्रवेश लेते हैं।
- ***समाजशास्त्र विषय लेकर चयनित होने वाले छात्रों में सर्वाधिक संख्या सर के छात्रों की।***

Note : प्रतियोगी छात्रों की बेहद माँग के कारण जल्द ही आर. के. शुक्ला सर की Classes (मुखर्जी नगर) नई दिल्ली में भी प्रारम्भ.

(Girls Hostel also available)

ॐ शान्ती स्टडी सेन्टर

1, तुलारामबाग, (गीता निकेतन मन्दिर के सामने) जी. टी. रोड, इलाहाबाद

Cel. 09335129717, 09415216096, 09839601327, 09335140130. e-mail : rk_sociology@rediff.com

KH/7/5/01

जनसंख्या, संसाधन : मूल्यांकन एवं प्रबंधन

डा. राम मिलन मिश्र

मानव संसाधनों का सृजनकर्ता एवं उपभोक्ता दोनों है। बिना मानव के लिए उपयोगी हुए कोई भी तत्व संसाधन की संज्ञा नहीं पाता। अतः किसी देश के संसाधनों का समुचित उपयोग होने के लिए अभीष्ट जनसंख्या का होना आवश्यक है। यदि विद्यमान भौतिक संसाधनों की तुलना में जनसंख्या अधिक हो तो, ऐसी अवस्था को जनसंख्या अतिरेक कहते हैं। यदि भौगोलिक संसाधनों (प्राकृतिक संसाधनों) के सापेक्ष जनसंख्या कम हो तो न्यून जनसंख्या की स्थिति होती है। अभीष्ट जनसंख्या ही आदर्श स्थिति होती है।

भारत विश्व का दूसरा बड़ा जनसंख्या वाला देश है। मार्च 2001 को इसकी जनसंख्या 102.7 करोड़ थी। भारत की जनसंख्या विश्व की जनसंख्या की 16.7 प्रतिशत है। विश्व का प्रत्येक छठा व्यक्ति भारतीय है। दूसरी तरफ इसका क्षेत्रफल विश्व का मात्र 2.28 प्रतिशत ही है। भारत में जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि दर (1.93 प्रतिशत : 1991–2001) विश्व की औसत वार्षिक दर (1.41 प्रतिशत) से काफी ऊंची है। प्रकट है जनसंख्या वृद्धि का स्वरूप जब अतिरेक हो जाता है, तो स्वमेव एक समस्या का रूप धारण करता है। वृद्धि का प्रभाव जल–जंगल–जमीन तथा जीवन एवं जीवोम पर पड़ता है। स्पष्ट है कि अभीष्टतम जनसंख्या, निर्बाध प्रगति का सूचक है, जबकि अतिरेक जनसंख्या चुनौतियों एवं समस्याओं को जन्म देती है।

भारत में जनसंख्या वृद्धि का स्वरूप

यह निर्विवाद तथ्य है कि भारत में जनसंख्या वृद्धि दर ऊंची है। जनसंख्या में वृद्धि दो कारणों से है। इनमें एक कारण प्राकृतिक तथा दूसरा कृत्रिम है। प्राकृतिक वृद्धि में, जनसंख्या वृद्धि, जन्मदर एवं मृत्युदर के अंतर के कारण होती है। यदि मृत्युदर की तुलना में जन्मदर कम हो तो, जनसंख्या में ह्रास होगा। यदि मृत्यु एवं जन्मदर बराबर हो तो जनसंख्या में शून्य वृद्धि होगी, कृत्रिम वृद्धि में जनसंख्या स्थानांतरण आता है। भारत में जनसंख्या वृद्धि प्राकृतिक एवं कृत्रिम दानों कारणों से हो रही है।

तालिका–1 से स्पष्ट है कि भारत में जनसंख्या वृद्धि अभी भी जारी है। वर्ष 1951 में जहां देश का कुल क्षेत्रफल विश्व का 2.4 था उसपर 36.11 करोड़ जनसंख्या निवास करती थी, जबकि वर्तमान समय में क्षेत्रफल वही है लेकिन जनसंख्या पूर्व की अपेक्षा लगभग चार गुना अर्थात 102.07 करोड़ (2001) है, जो अतिवृद्धि का परिचायक है। तालिका एक एवं जनसंख्या वृद्धि की प्रकृति से 4 प्रवृत्तियां दृष्टिगत होती हैं–

- 1921 तक जनसंख्या वृद्धि स्थैतिक।
- 1921 से 1951 में जनसंख्या वृद्धि अल्प (1 प्रतिशत वार्षिक)।
- 1951 से 1971 में जनसंख्या वृद्धि तीव्र।
- 1971 से 2001 में वृद्धि दर तीव्र परंतु ह्रासमान।

भारत में जनसंख्या वृद्धि, सभी प्रदेशों में समान रूप से नहीं है वरन् इसमें प्रादेशिक असमानता मिलती है। प्रादेशिक वृद्धि के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि–

- राज्यों के मध्य न्यूनतम (केरल 9.4 प्रतिशत) तथा अधिकतम वृद्धि दर (नगालैण्ड 64.4 प्रतिशत) का अंतर बढ़ा है।
- सात राज्यों (हिमाचल प्रदेश, पंजाब, गोवा, कर्नाटक तमिलनाडु, केरल, उड़ीसा) में पूर्व जनगणना दशक (1981–1991) की गति, विगत जनगणना दशक में राष्ट्रीय वृद्धि दर से कम, वृद्धि दर दर्शाते हैं।
- गुजरात मात्र एक ऐसा राज्य है जिसकी पूर्व दशक में राज्य औसत वृद्धि दर से किंचित कम वृद्धि थी, परंतु विगत दशक में किंचित अधिक (22.5 प्रतिशत) है।
- आंध्र प्रदेश, उत्तरांचल, त्रिपुरा, असम, छत्तीसगढ़, पांडिचेरी ऐसे राज्य हैं, जो राष्ट्रीय औसत से कम वृद्धि दर वाले समूह में शामिल हैं जबकि पूर्व दशक में राष्ट्रीय औसत से अधिक समूह वाले थे।
- आंध्र प्रदेश, अरुणांचल, पांडिचेरी, मिजोरम, त्रिपुरा ऐसे राज्य हैं जिनमें विगत दशक में वृद्धि दर में ज्यादा ह्रास (10 प्रतिशत) हुआ है।
- हरियाणा, बिहार, सिक्किम, नगालैंड, मणिपुर, गुजरात, उत्तर प्रदेश में

तालिका–1 भारत : जनसंख्या वृद्धि (1901–2001)

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	दशकी अंतर (करोड़ में) (प्रतिशत में)	प्रति दशक वृद्धि (प्रतिशत में)	औसत वार्षिक घातांक
1901	23.84	—	—	—
1911	35.21	1.37	+5.75	0.56
1921	25.13	−0.08	−0.31	0.03
1931	27.90	2.77	+11.00	1.54
1941	31.87	3.97	+14.22	1.33
1951	36.11	4.24	+13.31	1.25
1961	43.92	7.81	+21.61	1.96
1971	54.82	10.90	+24.80	2.20
1981	68.33	13.51	+24.66	2.22
1991	84.39	16.06	+23.86	2.11
2001	102.02	18.31	+21.34	1.93

स्रोत : भारतीय जनगणना

विगत दशक में पूर्व दशक की अपेक्षा वृद्धि दर बढ़ी है। इनमें बिहार, सिक्किम, नगालैंड में पहले की अपेक्षा वृद्धि दर 5 प्रतिशत से अधिक है जबकि उत्तर प्रदेश में 3 प्रतिशत है।

ऊपर के विवेचन से स्पष्ट है कि संपूर्ण देश में जनसंख्या वृद्धि दर का कोई निश्चित क्षेत्रीय प्रतिरूप नहीं उभर रहा है और न ही भौगोलिक कारक परिलक्षित होते हैं। लेकिन एक बात साफ है कि भारत में जनसंख्या परिलक्षित वृद्धि (यद्यपि 1991–2001 में ह्रास हुआ है) यदि कम नही हुई, तो आने वाले दिनों में हमारी जनसंख्या चीन से ज्यादा हो जायेगी जबकि यह ज्ञातव्य है कि चीन का भौगोलिक क्षेत्रफल एवं अर्थव्यवस्था तथा तकनीक हमसे अच्छी है अतः हमारी जनसंख्या में तीव्र वृद्धि समस्या एवं चुनौतियां खड़ी करेगी, जो आने वाले दिनों के लिए एक भयावह समस्या होगी, जिसकी गुणवत्तायुक्त पूर्ति कठिन होगा। कुछ समाज वैज्ञानिकों का मानना है कि जनसंख्या तथा संसाधन की संसाधनता व्यक्ति में निहित है वह जनसंख्या के सापेक्ष संसाधन की मात्रा एवं गुणवत्ता तकनीक के सहारे बढ़ा लेगा अतः जनसंख्या वृद्धि को संतुलित करने की बात बेकार है। लेकिन यहां बताना प्रासंगिक है कि जनसंख्या के सापेक्ष संसाधनों की संसाधनता में वृद्धि उसकी नैसर्गिकता में न होकर बल्कि तकनीक के सहारे उन क्षमताओं का निर्यात होता है जिससे उनकी क्षमता में वृद्धि दृष्टिगोचर होती है। उदाहरण के तौर पर खाद्यान्न वृद्धि हेतु, मिट्टी की उर्वरकता में वैकल्पिक उर्वरक के द्वारा उत्पादन बढ़ाया गया, प्रति हेक्टेयर खाद्यान्न उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि हुई लेकिन वर्तमान समय में कितनी भी खाद या उर्वरक डाली जा रही है लेकिन उत्पादन में वृद्धि संभव नही है। वैज्ञानिक अब जैविक खाद की तरफ अपना ध्यान केंद्रित कर रहे हैं यद्यपि 'बायो–विलेज' से उत्पादित फसलों की गुणवत्ता तो ठीक है लेकिन मात्रा प्रभावित हो रही है।हमारा यहां कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी संसाधन की उत्पादकता की एक नैसार्गिकता है ज्यादा उत्पादन हेतु वैकल्पिक व्यवस्था करनी पड़ती है। इस व्यवस्था से तत्काल उत्पादन में तो वृद्धि हो जाती है लेकिन दीर्घकालीन विकास संभव नहीं है जबकि पूर्व में उत्पादन से खड़ी समस्याएं और बढ़ जाती हैं जिनकी पूर्ति हेतु आर्थिक, पर्यावरणीय तथा मानवीय श्रम, पूंजी ज्यादा निवेश करना पड़ता है जैसे कृषि उत्पादन में वृद्धि हेतु सिंचाई, बहुउद्देशीय परियोजनाओं को लागू करने में ज्यादा से ज्यादा पूंजी, श्रम तथा पर्यावरणीय क्षति उठानी पड़ रही है, जैसे टिहरी परियोजना, गंगा सफाई अभियान आदि। अतः भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में जनसंख्या वृद्धि को तानाशाही ढंग से नहीं रोका जा सकता (जैसा की चीन में है) बल्कि जनसंख्या वृद्धि के बारे में हर दंपति यह स्वयं चिंतन करे कि जितने बच्चे हम पैदा कर रहे हैं, उसके अनुपात में क्या हमारे पास भूमि, आय तथा बच्चों को गुणवत्तायुक्त (शिक्षा, स्वास्थ्य, भोजन एवं अन्य सुविधाएं) भरण–पोषण तथा गुणात्मक बाल–विकास हेतु क्षमताएं या संभावनाएं हैं? यदि हां तो कितनी? विचार करना आवश्यक है। उदाहरण के तौर पर भारत के ग्रामीण क्षेत्रों (जहां जनसंख्या वृद्धि औसत से ज्यादा है) में रहने वाले लोग, जो गरीबी रेखा से नीचे, कृषि जोत के अभाव, बेरोजगारी की बाहुल्यता से ग्रसित हैं ऐसे लोगों के पास यदि 2 बच्चों से ज्यादा बच्चे पैदा होते हैं तो संतुलित रूप से भरण–पोषण के बारे में विचार करना होगा। यदि कुछ दम्पति मानते हैं कि खीच–खांच कर व्यवस्था चलायी जा सकती है तो कब तक? ऐसे लोगों का मानना है कि औसत से अधिक (2 बच्चों से ज्यादा) बच्चे पैदा करने से आने वाले समय में बच्चे अर्थोपार्जन में सहयोगी बनेंगे तथा जीवन स्तर ऊंचा होगा लेकिन यह सोच भ्रामक है। अध्ययनों एवं आनुभविक तथ्यों से पता चला है कि भारत में संयुक्त परिवार विघटित हो रहे हैं। विघटन के कारण दंपतियों की पूर्व सोच धराशायी हो रही है। दूसरी बात जनसंख्या वृद्धि के कारण, बाल–पोषकता में कमी, प्रौढ़–पोषकता में वृद्धि तथा अधिक प्रजनन के कारण स्त्रियों में रक्तक्षीणता एवं विटामिन आदि की कमी के कारण बीमारियां कई गुना ज्यादा विकसित हो रही हैं, जिससे अधिक उत्पादन तथा स्वास्थ्य में ह्रास हो ही रहा है, जीवन प्रत्याशा विशेषकर मृत्युदर की स्थिति दयनीय हो जाती है। अतः युवा दंपतियों को चाहिए कि वे स्वयं संतुलित जनसंख्या के बारे में नियोजन बनायें, तभी निर्बाध विकास संभव है।

जनसंख्या वृद्धि एवं संसाधन दशा

जनसंख्या वृद्धि एवं संसाधन संतुलन के संदर्भ में चिंतन बहुत ही प्राचीन है। भारत में वैदिक काल के बाद धीरे–धीरे संसाधनों पर दबाव पड़ने लगा। यह अलग बात है कि वैदिक काल के बाद, जो भी शासन व्यवस्था आयी उसमें संसाधनों का अति दोहन हुआ किंतु उस समय मात्र प्रत्यक्ष संसाधन विशेषकर खनिज संसाधनों का ही शोषण हुआ लेकिन संसाधनों की लूट–खसोट का बीजारोपण शुरू हो गया। 'ईस्ट इंडिया कंपनी' के बाद स्थिति स्वतंत्र भारत तथा वर्तमान भारत में और चिंतनीय हो गयी अतः इस चिंता से जनसंख्या–संसाधन असंतुलन पर चिंतन शुरू हो (यद्यपि माल्थस ने 1750 की दशक में ही आवाज उठाई) गया।

1970 के दशक में बेल के संपादकत्व में प्रकाशित पुस्तक 'द एन्वायरमेंटल हैंड बुक में कहा गया कि अनिवार्य कच्ची सामग्रियों, (विविध खनिज, लकड़ी आदि) कृषिगत पदार्थ तथा ईंधन आपूर्ति (कोयला, पेट्रोल) के स्रोतों के क्षीण होने तथा वायु एवं जल के प्रदूषित होने के साथ बढ़ती जनसंख्या के भरण पोषण का संकट मनुष्य जीवन की धरती पर से समाप्ति का घंटा बजा रहा है। 1972 में क्लब आफ रोम से संबद्ध विद्वानों ने 'द लिमिट्स टू ग्रोथ' नामक पुस्तक प्रकाशित की तथा जनसंख्या एवं संसाधन के उत्पादन, उनकी मांग तथा खपत पर चिंता व्यक्त की तथा अपनी रिपोर्ट में कहा कि सन् 2100 ई. के पूर्व निरंतर द्विगुणित होती जनसंख्या एवं औद्योगिक उत्पादन वृद्धि अकस्मात रुक जायेगी। विद्यमान औसत जनसंख्या वृद्धि दर (2 प्रतिशत वार्षिक) तथा औसत औद्योगिक उत्पादन वृद्धि दर (7 प्रतिशत वार्षिक) तथा औसत औद्योगिक उत्पादन वृद्धि दर (7 प्रतिशत वार्षिक) के चलते संसाधन प्रायः समाप्त हो जायेंगे। यद्यपि विद्वत् समाज का यह बिल्कुल नहीं मानना था कि जनसंख्या न रहे, वरन् उनकी केंद्रीय आत्मचिंतन थी, जैसा कि 'सियरा क्लब' ने कहा– 'प्रगति का अंधाधुंध विरोध नहीं प्रत्युत अंधाधुंध प्रगति का विरोध अपेक्षित है।' कुल मिलाकर यदि देखा जाए तो जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव प्राकृतिक संसाधनों पर पड़ रहा है। जनसंख्या की द्विगुणित वृद्धि का प्रभाव भूमि संसाधन, जल संसाधन, वन संसाधन, आवासीय

मांग, कृषि उत्पादन, स्वास्थ्य, पेयजल, भोजन, शिक्षा तथा अन्य बुनियादी आवश्यकताओं पर पड़ रहा है। इसका प्रभाव न केवल उपरोक्त संसाधनों तक ही सीमित है, वरन् इसका प्रभाव पर्यावरण तथा पारिस्थैतिकी तंत्र पर (ओजोन, ग्लोबल वार्मिंग तथा मानसून की अनिश्चितता, सूखा, बाढ़ तथा संक्रामक बीमारियां) भी पड़ा है। कुल मिलाकर यदि जनसंख्या–संसाधन संतुलन पर ठोस क्रियान्वयन नहीं किया गया, तो दी जाने वाली चेतावनी एक दिन विकल्पविहीन चुनौती बनकर सामने आ जायेंगी (यद्यपि कुछ चुनौतियां जैसे स्वच्छ पेयजल, सबको पर्याप्त संतुलित भोजन, स्वास्थ्य आदि; खड़ी हो गयी है)। प्राकृतिक संसाधनों के परिप्रेक्ष्य में देखें तो 1860 के लगभग बहुमूल्य धातुओं को छोड़कर बीसेक पदार्थ ही भूगर्भ से निकाले जाते थे, जिनमें क्ले, हूबेस्टोन, मिलस्टोन, लोहा, तांबा, सीसा, टिन, अभ्रक, कोयला, नमक, पारा आदि प्रमुख थे। आज लगभग 200 खनिजों का उत्पादन हो रहा है। उस समय पेट्रोलियम, पोटाश, निकिल, एल्युमिनियम, क्रोमियम, बैनेडियम, मैगनीज, टंगस्टन आदि अज्ञात थे। दूसरी तरफ विश्व की जनसंख्या 1750 में 66 करोड़ थी अब 600 करोड़ (विश्व की) हो गयी है। मनुष्य की आवश्यकताएं भी इस अवधि में कई गुना बढ़ी हैं। अतः भोजन, कपड़ा, मकान, परिवहन के साधनों, यंत्रों एवं हथियारों तथा औद्योगिक कच्चे मालों की मांग के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अत्यंत तीव्र गति से शोषण हो रहा है। बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति के प्रयत्न से न केवल भू–तत्वों का अधिकाधिक बलपूर्वक तात्कालिक स्वार्थ साधन के लिए गलत एवं विनाशकारी शोषण हो रहा है वरन् ऐसे खनिजों का शोषण हो रहा है जो शीघ्र ही समाप्त होने के संकेत दे रहे हैं। उदाहरण के तौर पर सीसा 33 वर्षों में, 18 वर्षों से जस्ता, टिन 45 वर्षों तथा अन्य महत्वपूर्ण खनिज 161 वर्षों में समाप्त हो जायेंगे (सिंह, जगदीश, 2003)।

जनसंख्या एवं कृषि उत्पादकता

देश में जनसंख्या की वृद्धि के अनुपात, कृषि उत्पादन 1.93 प्रतिशत वार्षिक की आवश्यकता है। यद्यपि वर्ष 1950–51 में शुद्ध कृषिगत भूमि 11.9 करोड़ हे. थी, जो 1991 में 19 प्रतिशत वृद्धि के साथ 14.2 करोड़ हे. हो गयी (ज्ञातव्य है देश की विद्यमान क्षेत्रफल में वृद्धि नहीं हुई है) अर्थात 1950–51 की अवधि में खाद्यान्न का क्षेत्रफल 9.7 करोड़ हे. से 1993–94 में 12.7 हे. हो गयी।

खाद्यान्न उत्पादन 1950–51 में 5.1 करोड़ टन से 1990 में 20.3 करोड़ टन के साथ वृद्धि हुई है। जसंख्या वृद्धि के साथ न केवल कुल खाद्यान्न में वृद्धि हुई है वरन् खाद्यान्न फसलों में भी वृद्धि हुई है। भारत में गेंहू की उत्पादन 1961–66 में 7.57 कुंतल/प्रति हे. हो गया। लेकिन बढ़ती जनसंख्या के समतुल्य कृषि उत्पादन संतोषजनक नहीं है। क्यों एक ओर जहां उड़ीसा पूर्वोत्तर भारत, 'बीमारू' राज्यों आदि की गरीब जनसंख्या भोजन हेतु मर रही है, वहीं दूसरी तरफ कृषि ठप्प हो गयी (जबकि जनसंख्या वृद्धि विद्यमान है) है। भारत की कृषि उत्पादकता के संदर्भ में कृषि विशेषज्ञों एवं राजनीतिज्ञों का आंकलन था कि वर्ष 2003–04 की कृषि उत्पादकता में इजाफा (22 करोड़ टन से ज्यादा) होगी, लेकिन अच्छे मानसून, के बावजूद वांछित लक्ष्य अधूरा रहा। हालात यह है कि वर्ष 2002–03 में अनाज उत्पादन घटकर 17.41 टन हो गया। वर्ष 2002–03 में अनाज उत्पादन का आंकलन 21.07 करोड़ टन का है। भरपूर बारिश, अच्छी बीज, कृषि तकनीक, पर्याप्त श्रमिक एवं किसान क्रेडिट कार्ड एवं अन्य योजनाओं के बाद भी उत्पादकता संतोषजनक नहीं रही। वर्ष 2003–04 में धान का कुल उत्पादकता (रबी–खरीफ मिलाकर) 8.63 करोड़ टन आंका गया, जो पिछले उत्पादन से कम है। धान की उपज वर्ष 1999–2000 में 8.96 करोड़ टन था। गेहूं का उत्पादन 7.27 करोड़ टन बताया जा रहा है जबकि 1999–2000 में 7.63 करोड़ टन का रिकार्ड बना चुका है। हालात मात्र कृषि उत्पादन तक ही सीमित नही है वरन् सरकारी निवेश भी कम हो रहे हैं। उदाहरण के तौर पर वर्ष 1993–94 में जी. डी.पी. के अनुपात में सरकारी निवेश 1.6 फीसदी थी, जो 1998–99 में 1.3 फीसदी हो गयी है। समवेत रूप में कहा जा सकता है कि बढ़ती जनसंख्या पर नियंत्रण नहीं किया गया तो खाद्यान्न समस्या (गरीबों की समस्या और बढ़ी है) और जटिल हो जायेगी। ज्ञातव्य है भारतीय कृषि उत्पादकता न केवल खाद्यान्न तक सीमित है (जैसा कि ब्रिटेन, अमेरिका, फ्रांस तथा आस्ट्रेलिया एवं अन्य विकसित राष्ट्रों जहां पर सूटकेस कृषि की प्रधानता है) वरन् जीवन यापन, जीवन–दृष्टि, सांस्कृतिक क्रिया–कलाप, जीविकोपार्जन तथा ग्रामीण अर्थतंत्र एवं समंवित विकास भी निर्भर है।

जनसंख्या वृद्धि एवं मिट्टी–वनस्पति संसाधन

बढ़ती जनसंख्या का दबाव मिट्टी एवं वनस्पति संसाधन पर भी पड़ा है। 'इ स्टेट ऑफ इंडियन एन्वायरमेंट : 1982 ए सिटीजन रिपोर्ट' के अनुसार भारत के कुल क्षेत्रफल का 53 प्रतिशत मिट्टी दुरुपयोग से प्रभावित है। कुल कृषिगत क्षेत्रफल (14 करोड़ हे.) में से 60 प्रतिशत मिट्टी को संरक्षण की आवश्यकता है। भारत के पठारी काली मिट्टी के क्षेत्र में प्रतिवर्ष 40–100 टन मिट्टी का अपरदन तथा शिवालिक क्षेत्र में प्रतिवर्ष 6 से.मी. गहरी परत का अपरदन हो रहा है। केंद्रीय मिट्टी एवं जल संरक्षण शोध एवं प्रशिक्षण संस्थान, देहरादून का अनुमान है कि भारत में वन के अंतर्गत भूमि के एक तिहाई, कृषिगत भूमि के दो तिहाई तथा कृषि लायक बंजर एवं चारागाह के अंतर्गत आदिवासी संपूर्ण भूमि के संरक्षण की आवश्यकता है।

कुल 4 करोड़ हे. नहरों द्वारा सिंचित भूमि में से कम से कम एक करोड़ अत्यधिक जल प्लावन एवं लवणता वृद्धि से ग्रसित है। एम.एस. स्वामीनाथन का मानना है कि चंबल घाटी में नहरी सिंचाई के अंतर्गत आने वाली भूमि का 25 प्रतिशत जल प्लावन का शिकार है। इसी प्रकार पठारी भाग में काली मिट्टी, समुद्र तटीय क्षेत्र तथा शुष्क क्षेत्रों में भी जल प्लावन अथवा सिंचाई के कारण लवणता वृद्धि की समस्या से ग्रस्त कुल भूमि का लगभग 70 लाख हे. है। 365 (सम्पूर्ण भारत) जिलों के 92 लाख मिट्टी में पर्याप्त नाइट्रोजन साधारण स्तर का तथा 228 जिलों में अत्यल्प है। उसी प्रकार 46 प्रतिशत जनपदों में फास्फोरस की मात्रा अत्यल्प तथा 55 प्रतिशत में मध्यस्तरीय है। इसी प्रकार भारत की 47 प्रतिशत कृषिगत भूमि में जस्ता, 5 प्रतिशत में मैगनीज तथा 11 प्रतिशत में लोहा का अभाव पाया गया। भारत में पंजाब का लुधियाना जिला, जहां सर्वाधिक प्रति हे. उपज होती है, वहीं मिट्टी में विरल तत्वों की सबसे अधिक कमी है।

बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण हेतु न केवल मिट्टी पर दबाव पड़ रहा है वरन् इसका प्रभाव वनस्पतियों पर भी पड़ा है। संयुक्त राष्ट्र संघ के कृषि एवं खाद्य संगठन ने 1992–94 के मध्य अपने आंकलन में बताया कि उष्ण कटिबंधीय वनों का 0.8 प्रतिषत वार्षिक कटान हुआ अर्थात प्रतिवर्ष 1.54 करोड़ हे. वन क्षेत्र का निर्वनीकरण हुआ। इस प्रकार 15.4 करोड़ हे. वन समाप्त हो गए।

निर्वनीकरण का प्रभाव भारत पर भी पड़ा है। वर्ष 1950–51 के दशक में देश में 25 प्रतिशत से अधिक वनाच्छादित क्षेत्र थे, लेकिन जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ रही है उसके भरण–पोषण हेतु कृषिगत क्षेत्रों का विस्तार, औद्योगिक मांग, लकड़ी का बढ़ता उपयोग दर, तथा ईंधन आदि हेतु वनों का कटाव हुआ है। परिणामतः के सेटेलाइट छवि चित्रों से लिए गये आंकड़ों में मात्र 11 प्रतिशत वनाच्छादित क्षेत्र है। भारत में वन कटाव की स्थिति लकड़ी उत्पादन से भी देखा जा सकती है। वर्ष 1971 में भारत विश्व का लकड़ी उत्पादन 4.8 प्रतिशत मात्र था, जो 1991 में बढ़कर 7.9 प्रतिशत हो गया। लकड़ी कटान का प्रभाव कमोज्यादा भारत के सभी राज्यों पर पड़ा लेकिन वे राज्य कम प्रभावित हुए जहां वनाच्छादित क्षेत्र ज्यादा (जैसे पूर्वोत्तर भारत, गोवा, दमन, दीव आदि) थे लेकिन पहले से ही जिन राज्यों में वनाच्छादित क्षेत्र कम था, साथ अंधाधुंध कटान से ज्यादा आहत हुए हैं। सर्वाधिक प्रभाव गंगा मैदान पर पड़ा है। प्रकट है कि यह क्षेत्र जनसंख्या की दृष्टि से काफी सघन एवं वृद्धि, नगरीकरण, औद्योगिकरण तथा विकास एवं उपभोक्तावादी जीवन के कारण प्रतिवर्ष वन कटाव अधिक हो रहा है। जिसके कारण वनाच्छादित क्षेत्रफल में ह्रास हो रहा है। उदाहरण के तौर पर भारत में प्रति व्यक्ति वनाच्छादित क्षेत्र (1997) मात्र 0.066 हे. है। जबकि लकड़ी उत्पादन में विश्व का 9 प्रतिशत है।

जनसंख्या वृद्धि एवं जल संसाधन

बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण हेतु कृषि, औद्योगिक तथा घरेलू कार्य हेतु जल की मांग निरंतर बढ़ रही है। मांग का प्रभाव आंतरिक जल तथा बाह्य जल दोनों पर पड़ा है। अधिक मांग का दबाव जहां आंतरिक जल पर पड़ा है वहीं प्रदूषण की वजह से बाह्य जल भी प्रभावित हुआ है। केंद्रीय शुष्क पेटी अनुसंधान संस्थान के अनुसार 1973 ई. से भूमिगत जल स्तर 0.81 मी. से 1.1 भी ऊंचा हुआ है। सिंचित क्षेत्र के 57 प्रतिशत भू जलस्तर 1 मी. से 1.5 मी. के अंदर पहुंच गया, 3 प्रतिशत क्षेत्र जलमग्नता से ग्रस्त है। भूमि के अंदर 10 मीटर की गहराव पर जिप्सम का अभेद स्तर होने से समस्या जटिल हुई है। भारत में 40 लाख हे. फसलगत भूमि सिंचाई जनित जलभराव से कृषि कार्य हेतु बंजर भूमि में पर्णित हो गई (सिंह, जगदीश, 2001) है। एक अनुमान के अनुसार सन 2025 तक देश की आबादी 1.3 अरब तथा वार्षिक ताजे पानी की खपत 1,093 अरब घनमीटर हो जायेगी। भारत ही नहीं वरन विश्व में भी 8 करोड़ प्रतिवर्ष की दर से बढ़ रही जनसंख्या के लिए सन 2025 तक 50 प्रतिशत अतिरिक्त पानी उपलब्ध कराने के लिए दीर्घकालीन नीतियां अभी से बनानी पड़ेंगी।

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता 5236 घनमीटर थी, जो वर्तमान में घटकर 1,900 से 2,100 घनमी. के बीच रह गई है। वर्ष 2025 तक प्रति व्यक्ति जल उपलब्धता घटकर 1500 रह जाने की आशंका है। जल संसाधन मंत्रालय के अनुसार प्रति व्यक्ति 1,700 घनमीटर से कम उपलब्धता को पानी के अभाव का संकेत माना जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भारत को पानी की उपलब्धता एवं गुणवत्ता के आधार पर 120वां स्थान दिया है। जबकि दूसरी तरफ अशुद्ध जल सेवन से विभिन्न बीमारियां (हैजा, टायफाइड, शिशुवाहिका, पेचिश, पीलिया, अतिसार, यकृत, एक्जीमा, जियार्डियता, नारू आदि) फैल रही हैं। इनके उपचार के लिए भारत सरकार के 500 करोड़ रुपये प्रतिवर्ष खर्च हो रहे हैं। डब्लू.एच.ओ. का मानना है कि शुद्ध पानी से अतिसार 50 प्रतिशत तथा हैजे में 90 प्रतिशत की कमी किया जा सकता है। जनसंख्या वृद्धि एवं कृषि उत्पादन से उत्पन्न जल समस्या न केवल भारत के गंगा मैदान तक सीमित है वरन इसका प्रभाव गुजरात, राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, उड़ीसा राज्यों में भी है। ज्ञातव्य है कि ये क्षेत्र भौगोलिक रूप से शुष्क क्षेत्र (वार्षिक वर्षा सामान्य से कम) हैं जबकि कृषि उत्पादकता में अग्रणी है। अति जल दोहन के कारण पंजाब और हरियाणा राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में भूजल खतरे के बिंदु तक पहुंच गये हैं। वहीं गुजरात, राजस्थान के ग्रामीण इलाकों में अतिजल दोहन के कारण जहां भूजल 150 से 200 फुट तक पानी मिल जाता था आज नए बोरिंग 700 से 1000 फुट गहराई में किए जा रहे हैं। कर्नाटक की 25 हजार झीलें अब मात्र 10 हजार तक सिमट गईं। यही हालात मैसूर, बंगलूर तथा अन्य राज्यों की है। जैसा कि पूर्व में बताया जा चुका है कि बढ़ती जनसंख्या का दबाव प्राकृतिक संसाधनों पर पड़ रहा है। इससे पीड़ित लोगों में सर्वाधिक निर्धन एवं गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले हैं। भारत के राजस्थान, उड़ीसा, गुजरात तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण दुर्गम क्षेत्रों की महिलायें एवं बच्चे/बच्चियों का औसत दिनचर्या पानी एवं ईंधन पूर्ति हेतु समाप्त हो जाता है। अर्थात परिवार के दो–तीन सदस्यों का जीवन पानी एवं ईंधन ढोने में ही समाप्त हो जाता है। प्रायः पानी की तलाश में सिर पर मटका, गगरी लेकर 15 किलोमीटर तक पैदल पानी लाती है, कभी–कभी दूसरे दिन लेकर आती है। अब तो पानी की कमी का प्रभाव ग्रामीणों के विवाह एवं अन्य संस्कारों को भी प्रभावित करने लगे हैं। अतः कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि जनसंख्या नियंत्रण एवं संसाधन संरक्षण की परम आवश्यकता है।

जनसंख्या वृद्धि एवं पोषक स्तर

जनसंख्या एवं पोषकता से सीधा अंतः संबंध है। सम्पूर्ण जैव–जगत को क्रियाशील रहने हेतु ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यहां पर जनसंख्या एवं भरण–पोषण हेतु दूसरा, जनसंख्या एवं पोषकता के संदर्भ में और तीसरा जनसंख्या एवं खाद्यान्न वितरण के संबंध में। सर्वविदित है कि भारत एक कृषि प्रधान देश है। देश की कुल श्रम शक्ति का 64 प्रतिशत हिस्सा कृषि कार्यों में लगा हुआ है, कृषि क्षेत्र से सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 25.2 प्रतिशत मिलता है। वर्ष 2003–04 में खाद्यान्न उत्पादन 21.07 करोड़ टन (संभावित) है। उत्पादन एवं खाद्यान्न वितरण में काफी असमानता है। असमानता के पीछे गरीबी, कृषि जोत में विविधता, बेरोजगारी तथा कृषि उत्पादकता में ह्रास, सूखा एवं बाढ़ आदि प्राकृतिक आपदाएं तथा चिंताजनक जनसंख्या वृद्धि है। भारत में जनसंख्या एवं पोषकता, अर्द्ध पोषकता

तथा संपूर्ण पोषकता तीनों है। पोषकता की कमी से टी.बी., शरीर में कमजोरी, आर्थोपेडिक समस्याएं (हड्डी), एनेमिया तथा शरीर में बढ़ते रोग (प्रतिरोधक क्षमता कम होने से) के साथ ही अल्पभार (आयु के अनुपात में कम भार) बौनेपन (आयु के अनुपात में छोटा कद) की समस्याएं बढ़ी हैं। एम.एस. स्वामीनाथन ने 8 प्रकार की समस्याएं इंगित की हैं इनमें, जन्म के समय भार कम होना, शैशवावस्था में अल्प पोषण का आंकलन, अर्द्धपोषित वयस्क, सार्वभोम रक्तक्षीणता (पैडेमिक एनीमिया), विटामिन 'ए' की कमी, प्रारंभिक अल्प–पोषण से प्रौढ़ावस्था में बीमारियां, मोटापा बढ़ना, आयोडीन की कमी प्रमुख हैं।

भारत में शिशु जन्म के समय औसतन कम भार के पैदा होते हैं। कम भार के पीछे माताओं में पोषक तत्वों की कमी प्रमुख है। बच्चों में कुपोषण की शुरुआत गर्भकाल से ही शुरू हो जाती है और यह समाप्त नहीं होती वरन् लड़कियों और महिलाओं में जीवनपर्यंत पौष्टिकता का अभाव बना रहता है इससे न केवल व्यक्तिगत समस्या का जोखिम बढ़ जाता है वरन् भावी पीढ़ी को जोखिम पहुंचने की आशंका बढ़ जाती है।

अधिक बच्चों के जन्म का कुप्रभाव, पोषकता पर पड़ रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार पांच वर्ष से कम आयु के एक करोड़ 20 लाख शिशु हर वर्ष काल कलवित हो जाते हैं। जिसमें आधे से अधिक मामलों में मौत कुपोषण के कारण होती है। कुपोषण के कारण जन्म के समय हर साल करीब 3 करोड़ शिशु ऐसे पैदा होते हैं जिन्हें गर्भकाल में ही समस्या झेलनी पड़ती है। शैशवावस्था में अल्प पोषकता के कारण विश्व में करीब 15 करोड़ बच्चे हैं जो स्कूल पूर्व आयु वर्ग में अल्प भार की समस्या से ग्रस्त हैं और 20 करोड़ से अधिक बौने हैं। अर्द्धपोषित वयस्क की संख्या करीब (पूरे विश्व में) 24.3 करोड़ है। अर्द्धपोषण की वजह से शारीरिक द्रव्यमान सूचकांक 17 किग्रा./मी. से भी कम है। अर्द्धपोषकता, अल्प पोषकता कार्यक्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। भारत के अधिकांश राज्यों में महिलायें, बच्चे तथा लड़कियां प्रभावित हैं। इसके कारण प्रसूति के दौरान उनमें ऊंची मृत्युदर पायी जाती है।

जनसंख्या अतिरेक का ग्रामीण क्षेत्रों विशेषतया गरीबी रेखा से नीचे रहने वालों के सामने पोषकता की कमी तथा खाद्यान्न वितरण प्रमुख है। जनसंख्या अधिक होने के कारण तथा प्रायः गरीब, बेसहारा, शारीरिक रूप से विकलांग, जनजाति, अनुसूचित जाति में जनसंख्या वृद्धि अधिक है साथ ही जीवन की गुणात्मक उन्नयन हेतु बुनियादी सुविधाओं का अभाव भी इनमें ज्यादा है अतः ऐसी जनसंख्या को जीवन जीने के लिए कुछ भी मिल जाय खाकर गुजारा करते हैं। दुर्गम ग्रामीण क्षेत्रों में रोटी–नमक, या चावल अथवा कोई एकल खाद्य पदार्थ खाकर जीवन–यापन करते हैं। संपूर्ण आहार किसी त्योहार या विवाह अथवा किसी के वहां निमंत्रण में ही संभव है। हरित क्रांति के बाद गांवों में दाल का बनना अनिश्चित हो गया है। चना–चबेला (भेली या गुड़) डायनासोर की तरह विलुप्त हो रहा है।

अनाज का उत्पादन होने, पर्याप्त खाद्यान्न स्टाक होने, गरीबों द्वारा निरंतर श्रम करने के बावजूद उन्हें खाद्यान्न स्टाक होने, गरीबों द्वारा निरंतर श्रम करने के बावजूद उन्हें खाद्यान्न पदार्थ उपलब्ध नहीं है, देश में एक ऐसी विडम्बना है कि एक तरफ रातो–दिन मेहनत–मशक्कत करने वाला श्रमिक को दो जून का भोजन, उसके द्वारा उत्पादित गन्ना, गुड़ मयस्सर नहीं है दूसरी तरफ जमींदार, बिचौलिया के पास होने के बावजूद उन्हें भी (शुगर, ब्लडप्रेशर आदि के कारण) खाने को मयस्सर नही है।

जनसंख्या वृद्धि एवं स्वास्थ्य

मानव जीवन की गुणवत्ता के उन्नयन में स्वास्थ्य का विशेष महत्व है। किसी भी प्रदेश में निवास कर रहे जनसमुदाय का स्वास्थ्य न केवल उसकी गुणवत्ता का सूचक है, वरन् पर्यावरण, पोषकता तथा संमृद्धता का भी सूचक है। जनसंख्या वृद्धि एवं स्वास्थ्य से गहरा संबंध है। औसत से अधिक जनसंख्या वृद्धि एवं स्वास्थ्य से गहरा संबंध है। औसत से अधिक जनसंख्या वृद्धि (जैसा कि भारत के उड़ीसा, राजस्थान, बिहार, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश एवं अन्य राज्यों में है) का प्रभाव स्वास्थ्य पर पांच रूपों में पड़ता है। पहला, कम उम्र में विवाह होने से स्वास्थ्य प्रभावित होता है। अपरिपक्व शरीर, भूमि विहीन कृषक, गरीबी तथा पहले से विद्यमान दरिद्रता की वजह से स्वास्थ्य क्षीण हो जाता है दूसरा, जनसंख्या वृद्धि के अनुपात में पोषक तत्वों एवं खाद्य सामग्री (कैलोरीयुक्त भोजन) की अल्पता, अभाव के कारण स्वास्थ्य प्रभावित होता है। तीसरा, औसत से अधिक जनसंख्या के कारण प्रति परिवार बच्चों/बच्चियों की संख्या अधिक होती है जबकि स्वास्थ्य सुविधाएं नगण्य होती हैं, जिससे गुणात्मक जीवन कुप्रभावित होती है। चौथा, पूर्व से व्याप्त कुपोषण, स्वास्थ्य (संचारी–असंचारी रोगों) की समस्याओं का चैनल चलता रहता है। पांचवां, वहन क्षमता से अधिक बच्चे होने पर अभिभावकों को पालन–पोषण की समस्या आती है। ऐसे पाल्यों के बच्चे कम उम्र में ही बाल मजदूरी के प्रति प्रेरित होते हैं। चूंकि इन बच्चों में शिक्षा, समझ तथा वात्सल्य का अभाव या कमी रहता है अतः देश–परदेश में शीघ्र कमाने (अल्प आयु) में हेतु (उदरपूर्ति, गरीबी तथा अन्य कारणों से) जाते हैं। अंतरक्षेत्रीय, अंतरप्रदेशीय तथा महानगरों में जाने से विशेषकर महानगरीय संपन्नता एवं संस्कृति की वास्तविकता से परे होने के कारण खान–पान, रहन–सहन तथा संगत आदि का कुप्रभाव इन पर गहरा पड़ता है। सदूर गांव में जाने वाले अल्प वयस्क युवाओं में टी.बी. एच.आई.वी. पाजिटिव (एडस) तथा अन्य संक्रामक रोगों से ग्रसित हो जाते हैं जो स्वयं तो कुप्रभावित होते ही हैं साथ ही में परिवार के अन्य सदस्यों (पत्नी, बच्चों) को भी प्रभावित करते हैं।

जनसंख्या अतिरेक होने के कारण तथा अन्य विसंगतियों के कारण गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों को पेट भर भोजन करने, यदि करते हैं भी तो मात्र जीवन जीने हेतु (पेट–पालक) मात्र भोजन करते हैं। प्रकट है कि संपूर्ण भोजन की बचना का प्रभाव व्यक्तित्व के विकास पर पड़ता है। प्रायः कैल्शियम, विटामिन, प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट आदि की कमी से एनेमिया, हड्डी रोग, आंख के रोग, बौनापन तथा कम उम्र में वृद्धावस्था की समस्या आती है। जिससे लोगों का गुणात्मक जीवन प्रभावित होता है।

पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में स्वास्थ्य की समस्या ज्यादा है। महिला स्वास्थ्य के खराबी के पीछे शिशु–प्रजनन, गरीबी, कैलोरी श्रम में नकारात्मक संबंध, पौष्टिक आहार की कमी, पर्याप्त भोजन न मिलना, भेदभाव, (लड़का–लड़की) कुपोषण आदि के कारण पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं में ज्यादा रहता है। यद्यपि विशेषज्ञों ने तीन पी कारक पोपुलेशन (जनसंख्या), पोल्यूशन (प्रदूषण) तथा पावर्टी (गरीबी) को स्वास्थ्य के परिप्रेक्ष्य में देखते हैं। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र विकास

कार्यक्रम की 13वीं मानव विकास रिपोर्ट में भारत के स्वास्थ्य पर दयनीयता प्रकट की गयी और प्रकाश में आया कि भारत की 23 प्रतिशत आबादी कुपोषण ग्रस्त है। देश में 4 प्रतिशत बच्चे कुपोषण के शिकार हैं। भारत में प्रति लाख 193 व्यक्ति मलेरिया, एवं 1230 व्यक्ति टी.बी. जैसी बीमारियों से ग्रस्त हैं जबकि 46 प्रतिशत भारतीय बच्चों की लंबाई उनके आयु को देखते हुए कम हैं। देश में एच.आई.वी. संक्रमित वयस्क आबादी 0.9 प्रतिशत है। इन सबके पीछे जनसंख्या वृद्धि भी एक महत्वपूर्ण कारक है।

इसी तरफ वैश्वीकरण के बाद भारत की स्वास्थ्य सेवाओं में बुनियादी बदलाव हुआ है। डा. डी. सत्यमाला का मानना है कि अगले कुछ वर्षों में भारत की चिकित्सा सेवा, अमेरिकी माडल से प्रभावित होगी, जो निहायत महंगी, टेक्नोलोजी आधारित, अन्यायपूर्ण एवं असमानता से भरपूर है। वहीं पर भारत में दुहरी स्वास्थ्य प्रणाली 'न्यूनतम चिकित्सा पैकेज' पर विश्व बैंक ने 1993 में अपनी रिपोर्ट में कहा कि 'न्यूनतम चिकित्सा पैकेज' का हमारे देश के गरबों के बीमारी के पैटर्न से कोई खास लेना-देना नहीं है। अब चिकित्सकीय प्रणाली निजी चिकित्सा क्षेत्र में हमारी स्वास्थ्य सेवा का मात्र 20 प्रतिशत था आज 80 प्रतिशत से अधिक है। कुल मिलाकर जनाधिक्य के कारण तथा उससे उत्पादित अन्य समस्याओं का कुप्रभाव पड़ रहा है।

जनसंख्या वृद्धि, आर्थिक प्रादेशिक असमानता

किसी भी प्रदेश के समाकलित, विकास के लिए अर्थव्यवस्था का मजबूत होना आवश्यक है। 'एशियन हाथी' के नाम से जाने वाली अर्थव्यवस्था, जनसंख्या वृद्धि तथा वृद्धि उत्पन्न समस्याओं के मकड़जाल में फंस गयी है। एक ओर वैश्वीकरण से उत्पन्न विश्व आर्थिक मंदी तो दूसरी तरफ बढ़ती द्रुतगति जनसंख्या। इससे न केवल अर्थव्यवस्था पर तात्कालिक प्रभाव पड़ रहा है वरन् इसका प्रभाव दीर्घगामी है। प्रति व्यक्ति उत्पादन दर अधिक होने के बावजूद जनसंख्या के परिपेक्ष्य में उत्पादन दर कम प्रदर्शित होता है। तकनीकी, आर्थिक एवं अन्य प्रगति के बावजूद पिछले कुछ वर्षों से हमारी आर्थिक एवं अन्य प्रगति के बावजूद पिछले कुछ वर्षों से हमारी आर्थिक वृद्धि (5-6 प्रतिशत वार्षिक) में ठहराव सा आ गया है। ज्ञातव्य है कि सकल राष्ट्रीय उत्पादन के लिए महत्वपूर्ण माना गया है। जबकि संजय बोरू – 1994 के अनुसार भारत में 80 के दशक तक औसत वार्षिक वृद्धि दर 4 प्रतिशत वार्षिक रही स्पष्ट है कि 1992 तक प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय उत्पादन में वृद्धि बहुत कम रही, जिसे प्रसिद्ध अर्थशास्त्री के.एन. राज ने हिन्दू वृद्धि दर की संज्ञा दी। 1991 से प्रारंभ उदारीकरण-भूमण्डलीकरण के दौर के सर्वाधिक वृद्धि दर 1996-97 में 8.2 प्रतिशत तक पहुंची, जो अगले वर्ष ही घटकर 4.8 प्रतिशत हो गयी। पुनः अगले दो वर्षों तक 6. 5 रहने के पश्चात 2000-01 में 5.2 प्रतिशत पर आ अटकी। 1997-02 तक सर्वाधिक वृद्धि दर औसत 6 प्रतिशत वार्षिक रही है। जबकि दसवीं योजना में (2000-07) में 8 प्रतिशत का वृद्धि लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

जनसंख्या वृद्धि एवं अर्थव्यवस्था के विकास के संदर्भ में अर्थशास्त्रियों एवं जनसंख्या विशेषज्ञों में अंतर्द्वन्द प्रारंभ से ही रहा। जबकि नियोजक भी जनांकिकीय विशेषज्ञों के साथ ही राग अलापते हैं। जनांकिकीय विद्, जहां जनसंख्या वृद्धि को अर्थव्यवस्था के परिपेक्ष्य में, बाधा समझते हैं वही पर अर्थशास्त्री उत्पादन में सहायक कारक मानते हैं। मशहूर वित्तीय कंपनी गोल्डमैन सैख्स ने एक अध्ययन में बताया कि निरंतर बढ़ती जनसंख्या के कारण भारत की आर्थिक विकास दर अगले पचास वर्षों में ऊंची बनी रहेगी जबकि रूस, चीन एवं पश्चिमी देशों की विकास दर गिरती जायेगी। जनसंख्या एवं पर्यावरण के संदर्भ में अपनी टिप्पणी करते हुए विशेषज्ञ मानते हैं कि पर्यावरण की क्षति कुल उत्पादन की अधिकता के कारण हो रही है, न कि जनसंख्या के कारण। अधिक जनसंख्या कम उत्पादन पर जीवित रह सकती है। जैसे – एक परिवार एक दिन में चार एयर कंडीशनर में 100 यूनिट बिजली की खपत कर सकता है उसी बिजली से 10 परिवारों के लिए पंखा एक माह तक चल सकता है। जनसंख्या की तुलना में जीवन शैली को सुधारना ज्यादा महत्वपूर्ण है। पर्यावरणविद् पाल आर्लिख ने 1968 में लिखी अपनी पुस्तक 'द पापुलेशन बम' में कहा था कि 'जनसंख्या, पर्यावरण एवं अर्थव्यवस्था को इस तरह से डिजाइन किया जा सकता है कि स्थिति टिकाऊ बनी रहे। हर मनुष्य की मौलिक जरूरतों को पूरा किया जा सकता है जिससे वह अपना विकास कर सके। जनसंख्या नियंत्रण में दूसरा तर्क गरीबी का है। जनसंख्या में वृद्धि के कारण गरीब देशों के लोग जंगलों को काट रहे हैं, परंतु असली बात यह है कि अमीर देशों की असीमित जरूरतों की पूर्ति हेतु पर्यावरण की क्षति अधिक हो रही है। कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी की वेबसाइट पर उपलब्ध लेख में कहा गया है 'आज की वैश्विक अर्थव्यवस्था में सीरिया एवं अफ्रीका में जनसंख्या अधिक होने से गरीब देशों में जलावन ईंधन एवं इमारती लकड़ी की खपत बढ़ी है और उन माल के मूल्य में वृद्धि होती है तो अमीर देशों को आयात करने पड़ते है। इस संदर्भ में ब्राजील एवं मिस्र के सत्तर के दशक में ऊंची विकास दर हासिल की, लेकिन पापुलेशन एक्शन इंटरनेशनल के अनुसार अस्सी के दशक से दोनों की विकास दर शून्य पर रुकी हुई है।' पूर्वी एशिया में इसी प्रकार नब्बे के दशक के मध्य तक विकास तभी से हुआ और उसके बाद रुक गया। यदि कम जनसंख्या से आर्थिक विकास होता तो इन क्षेत्रों का विकास अनवरत चलता रहना चाहिए था। जापान सेंटर आफ इकोनोमिक रिसर्च में कहा गया है यद्यपि कम संख्या में श्रमिकों की उपलब्धता से आर्थिक वृद्धि दर गिरने के संकेत मिलते हैं, परंतु साथ-साथ नई तकनीक बनाने को प्रोत्साहन मिलता है। इससे उत्पादन वृद्धि हो सकती है, पर आर्थिक विकास केवल उत्पादन में वृद्धि से हासिल नही होता। उसके लिए उत्पादन एवं खपत दोनों में वृद्धि आवश्यक है, परंतु रोबोट रोटी नहीं खाते और गाड़ी में सैर नहीं करते हैं। इसलिए जनसंख्या के अभाव में जापान जैसे देश का आथिक विकास के लिए जनसंख्या वृद्धि आवश्यक है। कुल मिलाकर अर्थव्यवस्था एवं जनसंख्या के संदर्भ में यह चिंतन अर्थशास्त्रीय है। नियोजकों का मानना है कि जिस गति से भारतीय जनसंख्या (वार्षिक वृद्धि दर 1.9 प्रतिशत) बढ़ रही है (जबकि विश्व का 1.4 प्रतिशत वार्षिक) है, आर्थिक विकास एवं रोजगार के लिए चुनौती होगी। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री कौशिक बसु, जगदीश भगवती एवं अरविन्द भाटिया आदि का मानना है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में वृद्धि एवं समृद्धि आसक्त है परन्तु बाजार में असामनता जनित निर्धनता उन्मूलन की मजबूत संभावनाये नही नजर नही आ रही हैं। जाहिर है कि वर्ष 1994-2000 अवधि में रोजगार सृजन दर मात्र 0.98 प्रतिशत वार्षिक रही है जबकि श्रम शक्ति वृद्धि दर 1.03 प्रतिशत थी।

तालिका 2 एवं 3 को देखने के स्पष्ट होता है कि वर्ष 1993–94 से 1999–2000 में जहां जनसंख्या वृद्धि दर 1.93 प्रतिशत वार्षिक रही वही श्रम वृद्धि 1.03 तथा रोजगार वृद्धि मात्र 0.98 प्रतिशत वार्षिक रही है। प्रो. जगदीश सिंह ने इसे रोजगार विहीन वृद्धि की संज्ञा दी है। पी. एन. रेड्डी का मानना है कि 1994 तक 30.06 करोड़ कार्यक्रम क्षेत्र में से 1.3 करोड़ लोग रोजगार विहीन हैं। प्रो. सिंह का मानना है कि जनसंख्या वृद्धि तथा सरकार की अपारदर्शी आर्थिक विकास विशेषकर स्वरोजगार, जिसका गुणक प्रभाव पड़ा है, जो दीर्घगामी विकास के लिए घातक होगा। जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक नियोजन पर टिप्पणी करते हुए के.एन. प्रसाद का मानना है कि भारत में आर्थिक कार्य–कलाप की शिथिलता सभी को रोजगार सुलभ कराने में असमर्थ रही है। स्वास्थ्य जनसंख्या का मौलिक स्तर निम्न कोटि का है।

जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव न केवल भारतीय अर्थव्यवस्था, रोजगार तथा लोगों के गुणात्मक जीवन तक ही सीमित है वरन् इसका प्रभाव प्रादेशिक असंतुलन पर भी पड़ा है। 1970 के दशक के बाद जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ी है आतंकवाद, अलगाववाद, उग्रवाद की समस्यायें बढ़ी है। दूसरी तरफ इनका प्रभाव प्रादेशिक स्तर पर भी पड़ा है। गरीबी रेखा में रहने वाले लोगों का प्रतिशत पूर्व की अपेक्षा घटा है लेकिन गरीबी के तंत्र की जटिलता बढ़ी है। 1970 के दशक में जहां प्रति व्यक्ति आय कम थी वहीं पर बुनियादी सुविधायें जैसे पेयजल, कैलोरीयुक्त भोजन जैसे दाल, सब्जी चना तथा अन्य सर्वसुलभ थे। स्वास्थ्य पर्यावरणीय समस्यायें इतनी भयावह नही थी। अतः कुल मिलाबर कहा जा सकता है कि लकड़वाला समिति के प्रतिवेदन के अनुसार वर्ष 1993–94 में गरीबों की संख्या जहां 36.31 प्रतिशत थी वह 2000–01 में 26 प्रतिशत हो गयी। जबकि राज्य स्तरीय विषमता और बढ़ी है। प्रति व्यक्ति आय दिल्ली, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, हरियाणा (उच्च कोटि) के सापेक्ष बिहार, उड़ीसा, असम, उत्तर प्रदेश (जिसमें जनसंख्या वृद्धि दर अधिक है) निम्न है। विदेशी निवेशक आकर्षित करने के महाराष्ट्र प्रथम, गुजरात, आंध्र प्रदेश, राजस्थान का निम्न है। स्वपना बनर्जी एवं गुहा (1997) में अपने अध्ययन में यह बताया है कि आर्थिक विषमता केवल प्रादेशिक नहीं वरन् अंतर्राजीय एवं राज्याआन्तरिक विषमता बढ़ी है जहां पंजाब में प्रति व्यक्ति आय बिहार से चार गुना है वहीं असम, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, उड़ीसा एवं मध्य प्रदेश तथा बिहार निम्न है।

ऊपर के विवेचन से स्पष्ट है कि दिगुणित जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव न केवल प्राकृतिक संसाधन, खाद्य पदार्थ, स्वास्थ्य, अर्थव्यवस्था तथा प्रादेशिक असंतुलन तक ही समित है वरन् इसका प्रभाव वायुमंडल, जल–जीवन–जंगल तथा जीवों पर भी पड़ रहा है। अतः स्थायी विकास हेतु जनसंख्या संतुलन प्रमुख आयाम है।

तालिका–2 जनसंख्या वृद्धि : श्रम शक्ति और रोजगार वृद्धि दर (वार्षिक)

अवधि	जनसंख्या वृद्धि	श्रम शक्ति वृद्धि	रोजगार वृद्धि
1972–73 से 1977–78	2.27	2.94	2.73
1977–78 से 1983–84	2.19	2.04	2.17
1983–84 से 1987–88	2.14	1.74	1.54
1987–88 से 1993–94	2.10	2.29	2.43
1993–94 से 1999–2000	1.93	1.03	0.98

स्रोत – योजना आयोग 2001, राष्ट्रीय सांख्यिकीय सर्वेक्षण संगठन।

तालिका–3 भारत : श्रम शक्ति अनुमान (लाख व्यक्ति/वर्ष)

क्षेत्र	1983–84	1993–94	1999–2000
ग्रामीण	2041.8	2553.8	2703.9
शहरी	571.5	806.0	929.5
योग	2613.3	3359.8	3633.4

जनसंख्या प्रबंधन

जनसंख्या प्रबंधन के संदर्भ में 13वीं राष्ट्रीय संविकास संगोष्ठी में निम्न बिंदुओं पर जोर दिया गया है।

● भारत जैसे लोकतान्त्रिक देश के लिए जनसंख्या नियंत्रण के स्थान पर जनसंख्या संतुलन शब्द का प्रयोग होना चाहिए। ● जनसंख्या संतुलन का कार्यक्रम 'किशोर वय' के लोगों को लक्ष्य मानकर क्रियान्वित होना चाहिए। उक्त अवस्था समूह को जनसंख्या वृद्धि के लाभ हानि से अवगत कराना अधिक परिणामदायी होगा। तथास्तु जनसंख्या शिक्षा को शिक्षा के पाठयक्रम में शामिल करना चाहिए। ● जनसंख्या संतुलन हेतु शिक्षा एवं स्वास्थ्य संबंधी सुविधायें वांछित वर्ग तक सहज सुलभ होनी चाहिए। उक्त सुविधाए को विकेन्द्रित किये बिना जनसंख्या जनसंख्या संतुलन का वांछित लक्ष्य पूरा नही होगा। ● सीमित परिवार रखने वाले दंपतियों को परिवार कल्याण संबंधित विशेष प्रोत्साहन पैकेज दिया जाना चाहिए साथ ही जो प्रोत्साहन पैकेज हो उसे बिना किसी भेदभाव के दिया जाना चाहिए। ● परिवार नियोजन की सुविधायें एवं सेवा में ग्राम्य अंचल में प्रति दम्पति को सहज अभिगम्य होने चाहिए एवं तथास्तु किसी स्वैच्छिक संगठन को 'नोडल एजेंसी' के रूप में नामित करना चाहिए। ● 'विकास', 'सर्वोत्तम निरोध है' अतः विकास का लाभ प्रत्येक वर्ग तक बिना किसी भेदभाव के पहुंचाना चाहिए अभी तक जनसंख्या निमंत्रण के संदर्भ में निर्धनता पक्ष को सर्वथा नजरअंदाज किया गया है, जबकि अभी भी एक बड़ा वर्ग जनसंख्या को संसाधन मानता है न कि बोझ। ● जनसंख्या नीति को जाति, धर्म, सम्प्रदाय या वर्ग के कटघरे में रखकर नहीं देखा जाना चाहिए। अपितु जनसंख्या नीति, समान आचार संहिता, द्वारा क्रियांवित होनी चाहिए, अन्यथा जनसंख्या संरचना में असंतुलन बढ़ेगा जो अस्थिरता एवं अराजकता को बढ़ावा देगा। ● जनसंख्या नियंत्रण संबंधी कार्यक्रमों का क्रियांवयन एवं मूल्यांकन अलग–अलग वर्गों द्वारा होने चाहिए। यदि जनसंख्या का दायित्व नौकरशाहों को हो तो मूल्यांकन या अनुश्रवण का दायित्व स्वैच्छिक संस्थानों को सौंपना चाहिए। ● जनसंख्या संतुलन संबंधित कार्यक्रम क्षेत्र सापेक्ष होना चाहिए। क्षेत्र की विशेषता या विशिष्टता को देखते हुए कार्यक्रम का स्वरूप निर्धारित होना चाहिए। ● जनसंख्या संतुलन हेतु प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य होना चाहिए। बिना वर्ग विभेद किए निःशुल्क पाठ्य पुस्तकें, शिक्षकों को शिक्षण सामग्री तथा कम से कम हर कक्षा के लिए एक शिक्षक उपलब्ध कराना अनिवार्य है। ✱

(लेखक ग्रामीण संसाधन विकास संस्थान, गोरखपुर (उ.प्र.) से संबंद्ध हैं।)

जनाधिक्य का गहराता संकट

डा. रवि शंकर जमुआर

जनसंख्या वृद्धि न केवल भारत बल्कि संपूर्ण विश्व के लिए एक गंभीर चुनौती है। सन् 1830 में विश्व की कुल जनसंख्या केवल एक अरब थी जो सौ वर्षों (1930) में बढ़कर दो अरब हो गई। लेकिन पुनः मात्र 30 वर्षों के अंतराल पर ही 1960 में जनसंख्या बढ़कर तीन अरब हो गई। इतना ही नहीं बल्कि जनसंख्या में अगली एक अरब की वृद्धि मात्र 15 वर्षों में ही हो गई यानी सन् 1975 में विश्व की जनसंख्या चार अरब हो गई थी। पुनः 12 वर्षों के अंतराल पर ही यानी सन् 1987 में जनसंख्या बढ़कर पांच अरब हो गई। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष के अनुसार अक्टूबर 1999 को विश्व की जनसंख्या छः अरब हो गई थी।

संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या विभाग द्वारा जारी आंकड़ों के अनुसार वर्तमान समय में विश्व की जनसंख्या 6.5 अरब है और विभाग का अनुमान है कि सन् 2012 तथा 2050 तक विश्व की जनसंख्या बढ़कर क्रमशः 7 अरब एवं 9 अरब हो जाएगी। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष ने अपने रिपोर्ट में स्पष्ट किया है कि चीन तथा भारत सहित छः ऐसे राष्ट्र हैं जहां की तीव्रतर जनसंख्या वृद्धि दर विश्व की जनसंख्या में हो रही उत्तरोतर वृद्धि के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी है। ये छः देश हैं – चीन, भारत पाकिस्तान, बांग्लादेश, नाईजीरिया और अमेरिका। इन देशों द्वारा सन् 2000 से ही प्रतिवर्ष विश्व जनसंख्या में 7.7 करोड़ की वृद्धि की जा रही है।

भारतीय परिदृश्य

भारतीय जनसंख्या के इतिहास में 11 मई, 2000 का दिन अति–विशिष्ट स्थान रखता है क्योंकि इसी दिन प्रातः 5 बजकर 5 मिनट पर नयी दिल्ली स्थित सफदरजंग अस्पताल में देश के एक अरबवें शिशु के रूप में **"आस्था"** नामक कन्या का जन्म हुआ था। हमारे देश में जिस तीव्रगति से जनसंख्या बढ़ रही है, उससे प्रतीत होता है कि देश को जनसंख्या विस्फोट से कोई नहीं बचा सकता। जनसंख्या की वर्तमान वृद्धि दर यह इंगित करती है कि सन् 2050 तक भारत विश्व में सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश हो जाएगा अर्थात् जनसंख्या के मामले में हम चीन को पीछे छोड़ देंगे।

वर्तमान स्थिति

वर्त्तमान समय में विश्व की जनसंख्या 6.5 अरब की संख्या पार कर चुकी है जिसमें से केवल भारत की हिस्सेदारी एक अरब से अधिक की है। भारत में जनसंख्या के अत्याधिक दबाव का पता इस तथ्य से चलता है कि इसका भौगोलिक क्षेत्रफल विश्व के 135.79 मिलियन वर्ग किलोमीटर का लगभग 2.4 प्रतिशत ही है जबकि यहां विश्व की कुल जनसंख्या का 16.87 प्रतिशत भाग निवास करती है। बीसवीं शताब्दी के आरंभ (1901) में भारत की जनसंख्या सिर्फ 23.60 करोड़ थी वह इक्कीसवीं शताब्दी के आरंभ (2001) में बढ़कर 100 करोड़ से अधिक हो गई जो निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट है :–

तालिका से स्पष्ट है कि वर्तमान सदी की प्रथम जनगणना – 2001 के अनुसार भारत की कुल जनसंख्या 102.64 करोड़ थी। यह जनसंख्या सन् 1991 की जनसंख्या की तुलना में 18.01 करोड़ अधिक है। इस प्रकार 1991–2001 के दशक में भारत की जनसंख्या में कुल 21.30 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, जो विश्व की पांचवीं बड़ी जनसंख्या वाले देश ब्राजील की जनसंख्या के बराबर है।

तालिका से यह भी स्पष्ट है कि नई जनगणना – 2001 के अनुसार भारत में वार्षिक जनसंख्या वृद्धि की दर 1.93 है, जबकि 1981–91 तथा 1971–81 की अवधियों में यह दर क्रमशः 2.16 तथा 2.22 प्रतिशत थी। ये आंकड़े बताते हैं कि पिछले दशक में जनसंख्या वृद्धि की दर में कमी आयी है, लेकिन यह कमी अब भी वांछित लक्ष्य से कम है। जनसंख्या वृद्धि की दर अधिक होने से देश में जनसंख्या का घनत्व

तालिका : भारत की जनसंख्या

जनगणना	जनसंख्या (करोड़ में)	दशक में परिवर्तन (करोड़ में)	दशक में वृद्धि की दर (प्रतिशत में)	औसत वार्षिक घातक वृद्धि दर (प्रतिशत में)	स्त्री–पुरुष अनुपात (प्रति हजार पुरुषों पर महिलाएं)
1891	23.60	–	–	–	–
1901	23.84	+ 0.24	–	–	972
1911	25.21	+ 1.37	+ 5.75	0.56	964
1921	25.13	– 0.08	– 0.31	– 0.03	955
1931	27.90	+ 2.77	+ 11.00	1.04	950
1941	31.87	+ 3.97	+ 14.22	1.33	945
1951	36.11	+ 4.24	+ 13.31	1.26	946
1961	43.92	+ 7.81	+ 21.64	1.98	941
1971	54.82	+ 10.90	+ 24.80	2.24	930
1981	68.33	+ 13.51	+ 24.66	2.22	934
1991	84.63	+ 16.30	+ 23.86	2.16	927
2001	102.64	+ 18.01	+ 21.30	1.93	933
03–04	107.30	–	–	–	–

बढ़ा है। आज प्रति वर्ग किलोमीटर में 324 व्यक्ति निवास कर रहे हैं। सन् 2003–04 में भारत की जनसंख्या 107.30 करोड़ थी।

संकट

द्रुतगति से बढ़ती जनसंख्या को यदि देश का सबसे ज्वलंत समस्या कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जनसंख्या वृद्धि से जहां गरीबी से नीचे जीवन जीने वाले परिवारों तथा बेरोजगारों की संख्या में उतरोत्तर वृद्धि हुई है, वहीं उत्पादकता के धीमे एवं कमजोर साधन और मानव संसाधन विकास के सूचकों पर मानवीय शक्ति का जागरण भी नहीं के बराबर है। जनसंख्या वृद्धि के कारण सभी को उचित मात्रा में खाद्यान्न तथा पौष्टिक भोजन, पर्याप्त वस्त्र स्वच्छ पेय जल, समुचित स्वास्थ्य सुविधा, रहने एवं सोने के लिए पर्याप्त आवास इत्यादि उपलब्ध होना कठिन हो गया है। इस बढ़ती जनसंख्या के साथ न तो भूमि के क्षेत्रफल में वृद्धि संभव है और न ही उत्पादकता में अपेक्षित वृद्धि ही हो सकी है। उत्पादन कुशलता जिसमें साक्षरता, शिक्षा तथा प्रौद्योगिकी दक्षता को सम्मिलित कर लिया जाए तब भारत में साक्षरता का प्रतिशत भी मात्र 3.1 प्रतिशत है और 55 प्रतिशत स्कूल जाने वाले आयु वर्ग के बच्चे गलियों में ही घूम रहे हैं। ऐसी स्थिति में जनसंख्या वृद्धि के साथ मानव संसाधन का विकास संभव नहीं है और इसलिए हमारा आर्थिक संतुलन भी भंग होता नजर आ रहा है।

जनसंख्या वृद्धि की समस्या ने सामाजिक संरचना को भी असंतुलित कर दिया है। यह सत्य है कि विगत् दशक (1991–2001) में पुरुषों की संख्या में जहां 20.93 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, वहीं महिला जनसंख्या में 21.79 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। फलतः औसत रूप से देश में प्रति हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या अब 933 हो गई है जबकि सन् 1991 में यह 927 थी, लेकिन यह अब भी असंतुलित है। दूसरी ओर 0–6 आयु वर्ग के बच्चों में लिंगानुपात सन् 1991 की तुलना में कुछ और प्रतिकूल हो गया है। सन् 1991 में इस उम्र के प्रति 1000 बालकों पर बालिकाओं की संख्या जहां 945 थीं, वह सन् 2001 में घटकर 927 हो गई है।

सरकारी प्रयास

जनसंख्या वृद्धि के कारण उत्पन्न विकट परिस्थिति से निबटने के लिए सरकार ने जो उपयुक्त मार्ग चुना है, वह है – परिवार नियोजन। देश में परिवार नियोजन कार्यक्रम को सरकारी नीति के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में अपनाया गया और इसे पहली पंचवर्षीय योजना से लागू किया गया है। प्रारंभ में इस कार्यक्रम के प्रति सरकारी दृष्टिकोण बहुत सीमित था और व्यय की राशि भी बहुत कम थी। लेकिन चौथी पंचवर्षीय योजना से और उसके बाद की लगभग सभी पंचवर्षीय योजनाओं में परिवार नियोजन कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता दी गई और इस कार्यक्रम के लिए निर्धारित धनराशि में भी व्यापक वृद्धि की गई। फिर भी यह कार्यक्रम अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने में आंशिक रूप में ही सफल हो पाई है दसवीं पंचवर्षीय योजना में भी परिवार कल्याण कार्यक्रम को उच्च प्राथमिकता प्रदान की गई है। दसवीं योजना अवधि में परिवार कल्याण कार्यक्रम हेतु 27125 करोड़ रुपये की व्यवस्था की गई है जबकि नौवीं योजना में इस कार्यक्रम हेतु मात्र 15120 करोड़ रुपये ही आवंटित किया गया था। दसवीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक शिशु मृत्यु दर को कम करके 45 प्रति हजार और सन् 2012 तक 28 प्रति हजार करने का लक्ष्य रखा गया है जबकि वर्ष 2007 तक मातृ मृत्यु दर को घटाकर 2 प्रति हजार जीवित जन्म और वर्ष 2012 तक 1 प्रति हजार जीवित जन्म करने का लक्ष्य है ताकि वर्ष 2001–2011 के बीच जनसंख्या की दशकीय वृद्धि को 16.2 प्रतिशत के स्तर पर लाया जा सके।

बाधाएं

वास्तव में, जनसंख्या नियंत्रण के मार्ग में बहुत सारी बाधाएं है। इनमें दो प्रमुख बाधाएं हैं – रूढ़िगत मानसिकता और जातिवादी राजनीति। भारतीय समाज में रूढ़िगत मानसिकता कूट–कूट कर भरी है। सामाजिक मान्यताएं और धार्मिक अंधविश्वासों के कारण प्रायः सभी भारतीय संतान की इच्छा रखते हैं। हिन्दू समाज तो पुत्र को परलोक में मुक्ति के लिए आवश्यक समझता है।

यही कारण है कि एक हिन्दू परिवार में पुत्र के जन्म न होने तक पुत्रियों का लगातार जन्म होते रहना एक आम बात है। इसी तरह अन्य समुदाय के लोग भी संतान के जन्म को ईश्वर की कृपा समझते हैं और बच्चों के जन्म में हस्तक्षेप करने को वे अनुचित मानते हैं। हमारे देश में सामाजिक रीति–रिवाजों के अंतर्गत जहां विवाह को एक पवित्र संस्कार के रूप में स्वीकार किया गया है वहीं अधिक संतान का होना ईश्वरीय खुशी का द्योतक माना गया है। पुत्रियों का विवाहोपरान्त दूर चले जाना और पुत्रियों पर आश्रित नहीं रहने की सामाजिक मान्यता ने भी पुत्रों की उत्पत्ति को प्रोत्साहित किया है और इसीलिए भारतीय समाज में पुत्र को पुत्री से श्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। इन्हीं रूढ़िवादी मानसिकताओं के कारण ही प्रत्येक भारतीय चाहे हिन्दू हो, मुस्लिम हो, सिख हो या फिर ईसाई, वह विवाह करना और संतानोप्पत्ति करना अपना परम कर्त्तव्य समझता है।

जनसंख्या नियंत्रण के मार्ग में दूसरी प्रबल जातिवादी राजनीति है। वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय राजनीतिक दलों का आधार जाति के **"वोट बैंक"** पर टिकी है। अतः प्रत्येक राजनीतिक दल विशेषकर क्षेत्रीय दल चाहते हैं कि उनकी जाति विशेष के लोगों की संख्या अधिकाधिक हो। उनकी यह सोच जनसंख्या वृद्धि को प्रोत्साहित करती है। इसीलिए राजनीतिक दलों में जनसंख्या नियंत्रण के लिए कोई प्रबल इच्छा शक्ति भी नहीं है। दिसंबर, 1992 में राज्य सभा में एक विधेयक 79वें संविधान संशोधन के रूप में लाया गया था राजनीतिक स्तर पर इस तरह के प्रतिबंध से आम नागरिकों में बहुत अच्छा संदेश जाता। लेकिन इस संबंध में विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच आम राय नहीं बनने से यह विधेयक अब तक लंबित पड़ा है। अतः राजनीतिज्ञों की स्वार्थ लोलुपता ने राजनीतिक दलों को जनसंख्या नियंत्रण के प्रति उदासीन बनाया है।

इसके अतिरिक्त अशिक्षा, निर्धनता, महिला जागृति के साधनों का अभाव, कम उम्र में शादी, सरकारी तथा गैर–सरकारी संस्थाओं का जनसंख्या नियंत्रण से संबंधित कार्यों में समन्वयन का अभाव इत्यादि भी कुछ ऐसे गंभीर समस्याएं हैं जो देश में जनसंख्या नियंत्रण के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न कर रही हैं।

उपाय

यद्यपि देश में जनसंख्या नियंत्रण हेतु **"परिवार कल्याण कार्यक्रम"** को सरकारी नीति के रूप में क्रियान्वित किया गया है, लेकिन अब तक के पचास सालों का बहुमूल्य समय और पांच हजार करोड़ रुपये से भी अधिक धनराशि खर्च किये जाने के बावजूद देश की जनसंख्या नियंत्रण से बाहर है। देश में जनसंख्या नियंत्रण को प्रभावशाली बनाने हेतु निम्नलिखित उपायों को अपनाया जा सकता है :

- जनसंख्या नियंत्रण हेतु शिक्षा विशेषकर "महिला शिक्षा" पर अत्याधिक बल देने की आवश्यकता है। वास्तव में शिक्षा एक ऐसा साधन है जिसके माध्यम से परिवार, विवाह, संतानोप्पत्ति आदि के संबंध में लोगों के विचार बदल सकते हैं और उनकी रूढ़िवाद मानसिकताएं परिवर्तित हो सकती है। सामाजिक वैज्ञानिकों ने भी अपने सर्वेक्षणात्मक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला है कि महिलाओं के शिक्षा स्तर में वृद्धि होने से कुल प्रजनन दर घटती है। इसलिए जरूरी यह है कि सार्वभौम सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में सभी बालिकाओं को शामिल किया जाए और यदि संभव हो तो बालिकाओं को मिडिल स्कूली शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की जाय। दसवीं योजना में 2003 तक सभी बच्चों को स्कूल भेजना तथा सन् 2007 तक उन्हें पांच वर्षों का **"स्कूली शिक्षा"** प्राप्त कराने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है जो इस दिशा में एक सराहनीय कदम है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में जन–साधारण के जीवन स्तर को ऊंचा उठाने का उपाय जनसंख्या नियंत्रण हेतु किया जाना चाहिए क्योंकि उनकी गरीबी उन्हें बेझिझक पुनरूत्पादन के लिए प्रेरित करती है और यही वह वर्ग है जिसका जनसंख्या वृद्धि की समस्या को गंभीर बनाने में सर्वाधिक योगदान रहा है। अतः कृषि पर आधारित उद्योगों के साथ–साथ लघु एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना को उच्च प्राथमिकता देने की जरूरत है ताकि लोगों की आय में वृद्धि हो सके और उनका जीवन–स्तर ऊंचा हो सके।
- जनसंख्या नियंत्रण के लिए समाज विशेषकर ग्रामीण महिलाओं में चेतना जगाने की आवश्यकता है क्योंकि जन–सहभागिता के अभाव में जनसंख्या नियंत्रण की कल्पना व्यर्थ है। इसके लिए जरूरी है कि गांवों में स्थित प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों पर चिकित्सकों तथा स्वास्थ्य कर्मियों की बेहतर व्यवस्था की जाए। साथ ही साथ उपभोक्ता उन्मुख कार्यक्रम के लिए उन्हें अपनी पसंद तथा जरूरत के अनुसार उपयोग में लाने वाले उपकरणों जैसे निरोध, खाने की गोलियां, कॉपर–टी आदि उपलब्ध हो सकें।
- जनसंख्या नियंत्रण हेतु अब स्कूलों में यौन एवं प्रजनन से संबंधित शिक्षा का प्रारंभ करने की जरूरत है ताकि विद्यार्थी जब वैवाहिक जीवन में प्रवेश करे तब वे **"प्रजनन अनुशासन"** का पालन कर सके जिससे सीमित परिवार की अवधारणा को बल मिलेगा और जनसंख्या नियंत्रित होगी।
- जनसंख्या नियंत्रण के लिए जनसंख्या कार्यक्रमों को जन–आंदोलन का रूप देना आवश्यक है। इसके लिए परिवार कल्याण कार्यक्रम के प्रति जन–साधारण में उत्साह एवं प्रेरणा पैदा करने की जरूरत है जो बेहतर सामाजिक कल्याण एवं सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन देश में अब तक लागू किये गये सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण के कार्यक्रम जहां अपर्याप्त साबित हुए हैं, वहीं इनके अंतर्गत दी जाने वाली सहायता राशि भी अल्प है। अतः सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण के कार्यक्रमों को और भी बेहतर बनाने की आवश्यकता है।
- जनसंख्या नियंत्रण हेतु वर्तमान वैवाहिक आयु सीमा जो 18 वर्ष है, को बढ़ाकर 21 वर्ष कर दिये जाने की जरूरत है। आयु सीमा में वृद्धि से जहां शिक्षा में महिलाओं की सहभागिता बढ़ेगी और प्रजनन दर में कमी आयेगी वहीं जन्मदर तथा शिशु मृत्युदर भी घटेगी।
- जनसंख्या नियंत्रण के लिए सरकारी स्तर पर "दृढ़ इच्छा शक्ति" अपनाने की आवश्यकता है। इसके लिए राज्य सभा में लंबित 79वें संविधान संशोधन विधेयक अविलम्ब पारित करने की आवश्यकता है। साथ ही, जनसंख्या नियंत्रण से संबंधित अन्य कानूनों यथा – बाल विवाह अधिनियम या शारदा कानून आदि को कड़ाई से लागू करने की आवश्कयता है।

निष्कर्ष

यह निर्विवाद सत्य है कि तीव्र जनसंख्या वृद्धि के कारण ही अर्थव्यवस्था को सशक्त करने हेतु किए गए सभी प्रयास, योजनाएं और विनियोग अर्थहीन साबित हो रहे हैं या फिर अपर्याप्त सिद्ध हो रहे हैं। वास्तव में, जनसंख्या नियंत्रण एक ऐसा राष्ट्रीय कार्य है जिसकी सफलता के लिए राजनीतिक दलों, केंद्रीय एवं राज्य सरकारों के साथ–साथ जन–साधारण का सहयोग और समर्थन मिलना आवश्यक है। इस दृष्टि से केंद्रीय सरकार द्वारा एक उच्च स्तरीय 100 सदस्यीय "राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग" का गठन किया जाना एक सराहनीय कदम है। सरकार ने इस आयोग को गठित कर सन् 2045 तक देश में जनसंख्या वृद्धि की दर को एक प्रतिशत से कम पर स्थिर करने का लक्ष्य निर्धारित किया है। हम जानते हैं कि जनसंख्या के आकार के साथ देश की अर्थव्यवस्था प्रत्यक्ष रूप से संबंधित होती है। इसलिए यदि जनसंख्या में वृद्धि की दर से अधिक ऊंची दर से अर्थव्यवस्था में विकास नहीं होती है तो निःसंदेह देश आर्थिक दृष्टि से कमजोर हो जाएगा। अतः आवश्यकता इस बात की है कि देश में जनसंख्या नियंत्रण से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों का सही ढंग से क्रियान्वयन होना चाहिए और कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने वाली सभी एजेंसियों के बीच उचित समन्वय भी होना चाहिए तभी जनाधिक्य के गहराते संकट से हमारा राष्ट्र उबर सकेगा। ✸

(लेखक टी.एस. कालेज, नवादा में व्याख्याता हैं)

बढ़ती जनसंख्या : एक त्रासदी

मनीष कुमार सिन्हा

बढ़ती जनसंख्या आज देश के लिए एक गंभीर चुनौती बनकर खड़ी है जो हमारे पतन एवं विध्वंस का एक मुख्य कारण बनती जा रही है। यहां तक कि इसने शहरी जीवन के साथ–साथ ग्रामीण परिवेश को भी प्रभावित किया है। आजादी के वर्ष (1947) से 1991 के बीच देश की जनसंख्या लगभग दुगुनी से भी ज्यादा बढ़ी है। 1991 की जनगणना के हिसाब से भारत की कुल जनसंख्या 846,302,688 थी।

वर्ष	जनसंख्या दर
1901 से 1911	5 प्रतिशत
1911–1921	
1921–1931	10 प्रतिशत
1930–1940	13 से 14 प्रतिशत
1951–1961	21.5 प्रतिशत
1961–1971	24.8 प्रतिशत
1971–1981	24.7 प्रतिशत
1981–1991	23.9 प्रतिशत

लेकिन 1 मार्च, 2001 को भारत की जनसंख्या तथा उसमें पुरुष और स्त्रियों की संख्या इस प्रकार रही :–

पुरुष : 531,277,078 स्त्री : 495,738,169 कुल : 1,027,015,247

यूं कहा जाए कि विश्व की जनसंख्या का 16.7 प्रतिशत सिर्फ भारत में है। अगर गांवों की बात की जाए तो इस समय देश भर में गांवों की कुल संख्या 6 लाख के आस–पास है। वर्तमान में हमारी कुल 108 करोड़ जनसंख्या में से करीब 78 करोड़ लोग इन गांवों में बसते हैं। गांव और गांववासियों की इतनी बड़ी संख्या के विकास के बिना हमारे विकास के दावे निश्चित रूप से खोखले हैं।

सीमित साधन और असीमित जनसंख्या वृद्धि दर ने पूरे देश को सामाजिक, राजनीतिक आर्थिक एवं पर्यावरणीय संकट में फंसा दिया है। यहां हर 1.2 सैकेंड में एक शिशु का जन्म होता है। इसी का नतीजा है कि भारत में 1951 में जनसंख्या 36.1 करोड़ थी जो 2001 में बढ़कर 102.7 करोड़ हो गई।

जनसंख्या के इस दुष्प्रभाव से जीवन का कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं रहा है। अतः देश के त्वरित विकास के लिए इस विकट समस्या का समाधान करना आवश्यक है अन्यथा देश के समक्ष चुनौतियों का अंबार लग जाएगा।

यह एक विडम्बना ही है कि दुनिया में सर्वप्रथम परिवार नियोजन कार्यक्रम प्रायोजित करने वाला देश अपनी जनसंख्या वृद्धि को रोकने में वांछित सफलता प्राप्त नहीं कर पाया है। अगर इस समस्या से निजात पाना है तो जनसंख्या शिक्षा द्वारा ही यह संभव है।

अब हमारा कर्तव्य है कि 21वीं सदी में सभी स्तर के विद्यार्थियों को जनसंख्या शिक्षा के माध्यम से इसके दुष्परिणामों को बताएं। युवाओं को स्वयं के जीवन के साथ–साथ परिवार के जीवन की गुणवत्ता तथा समाज के प्रत्येक सदस्य के जीवन स्तर को सुधारने की जिम्मेदारी के प्रति सचेत करने हेतु जनसंख्या शिक्षा के प्रति जागरूकता की आवश्यकता है, तभी हमारे देश का कल्याण संभव है।

जनसंख्या शिक्षा

युवाओं को जनसंख्या वृद्धि से व्यक्तिगत जीवन, परिवार, समुदाय, राष्ट्र तथा विश्व पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों से अवगत कराते हुए उनमें जनसंख्या जागृति फैलाना और उसके प्रति सही दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करना ही एक तरह से जनसंख्या शिक्षा है। किशोर एवं किशोरियों में जनसंख्या के प्रति उचित दृष्टिकोण, उत्तरदायित्व, अभिवृत्ति तथा व्यवहारों के विकास की दृष्टि से ऐसे शैक्षिक–कार्यक्रम ही वास्तव में जनसंख्या शिक्षा है जो परिवार, समुदाय, राष्ट्र तथा विश्व की जनसंख्या की स्थिति का ज्ञान कराते हैं।

शिक्षा के प्रति जागरूकता

जनसंख्या शिक्षा के साथ–साथ लोगों में इसके प्रति जागरूकता का होना भी जरूरी है। उन्हें इस बात को लेकर जागरूक होना चाहिए कि जिस देश की जनसंख्या का आकार क्षेत्र के आकार की तुलना में अधिक है तो उस देश के विकास का स्तर कम होगा और यदि अनुकूल जनसंख्या है तो वहां के नागरिक कार्यकुशल, शिक्षित और स्वस्थ होंगे और देश खुशहाल होगा। स्कूल एवं कॉलेजों के छात्र–छात्राओं में इसके प्रति जागरूकता उत्पन्न कर ऐसी अभिवृत्तियों का विकास करें कि बढ़ती जनसंख्या को रोका जा सके। इस जागरूकता के लिए शाला, समाज एवं अभिभावकों में अनुकूल वातावरण का निर्माण हो तथा किशोर–किशोरियों एवं अभिभावकों को प्रेरित किया जाए। विद्यार्थी, शिक्षक तथा समाज में चेतना पैदा कर उन समस्याओं को बताया जाए, जो जनसंख्या के संसाधनों पर, जैसे भोजन, जल, आवास तथा यातायात के दबाव के कारण पैदा होती है। इस प्रकार बच्चों में समाज और राष्ट्र के विकास के लिए सीमित व छोटे परिवार रखने तथा जनसंख्या को बढ़ावा न देकर समुचित विकास करने की भावना जागृत होगी। वे बाल–विवाह तथा बच्चे पैदा होने को ईश्वरीय देन समझने जैसी कुप्रथाओं को आसानी से समझ पाएंगे। परिवार–नियोजन के प्रति उनका उचित दृष्टिकोण विकसित होगा जिससे समाज में एक स्वस्थ्य वातावरण बनेगा। निःसंकोच आज की स्थिति को देखते हुए हमें जनसंख्या शिक्षा को सामाजिक शिक्षा का अभिन्न और महत्वपूर्ण पक्ष बनाना ही पड़ेगा।

आखिर इस शिक्षा का उद्देश्य क्या है?

जनसंख्या शिक्षा के प्रति लोगों के बीच जागरूकता पैदा करके ही हम एक स्वस्थ्य, पर्यावरण, स्वस्थ्य जीवनशैली और सर्वत्र खुशहाली का वातावरण बना सकते हैं। निम्न तबकों के बीच आज भी ज्यादा बच्चे पैदा करने के पीछे यह समझा जाता है कि परिवार में जितने हाथ

होंगे उतनी ही अधिक कमाई होगी और उनका परिवार खुशहाल होगा, हमें उनकी इसी मानसिकता को विराम देना होगा। उन्हें समझाना होगा कि ऐसा करके वो अपने साथ–साथ उन बच्चों के साथ भी अन्याय कर रहे हैं। गांव वगैरह में अभी भी ज्यादा से ज्यादा बच्चे पैदा करना परिवार की ताकत समझा जाता है। उनकी सोच होती है कि बच्चे जितने अधिक होंगे, समाज में उनका दबदबा उतना ही अधिक होगा, जो कि गलत है। हमारी इसी सोच का नतीजा है कि आज हमारे देश की आबादी एक अरब को पार कर गई है। स्थिति की गंभीरता को देखते हुए ही सरकार ने एक राष्ट्रीय जनसंख्या आयोग का गठन भी किया है जिसका लक्ष्य वर्ष 2045 तक भारत में जनसंख्या दर को स्थिर कर देना है। गौरतलब है कि पिछले वर्षों में जनसंख्या वृद्धि को रोकने के प्रति जागरूकता एवं सक्रियता बढ़ी भी है और इसके नतीजे भी सामने आए हैं। पिछले तीन–चार वर्षों के दौरान जनसंख्या वृद्धि दर की गति मंद होने लगी है।

परंतु ग्रामीण स्तर पर हमें अभी और भी बहुत कुछ करना है। हमें लड़के–लड़की का भेद मिटाना है, औरतों को शिक्षित करना है, परिवार एवं समाज में उनकी स्थिति मजबूत करना है। तभी वे इस योग्य बनेंगे कि समाज में उत्तरदायित्व पूर्ण जीवन जी सकेंगे तथा अपने परिवार को सीमित रखने संबंधी उचित निर्णय लेने में समर्थ होगें। ✱

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

विकास को समर्पित मासिक

ISSN-0971-8397

योजना

प्रशासनिक सुधार एवं ई-गवर्नेंस पर स्वतंत्रता दिवस, 2005 विशेषांक

अगस्त 2005

- आज की सबसे बड़ी जरूरत एक आधुनिक, कुशल तथा उत्तरदायी लोक सेवा की है, एक ऐसी सेवा जो परिणाम दे सके!
- प्रशासनिक सुधार और ई-गवर्नेंस क्या है?
- क्या यह व्यवस्था की कमियों को दूर करने का रामबाण हो सकता है?
- निचले स्तर की संस्थाओं को यह कैसे नवजीवन दे सकता है?
- *योजना* के अगस्त, 2005 विशेषांक में इस विषय का गहन विश्लेषण और निचोड़ शामिल किया जा रहा है।
- प्रमुख लेखक, शिक्षाविद और सरकारी अधिकारी अपने विचारों से आपको अवगत कराएंगे। इनमें पूर्व केंद्रीय मंत्री तथा लोकसेवा सुधारों के विशेषज्ञ प्रो. वाई.के. अलग, स्थानीय स्वशासन के विशेषज्ञ श्री एल.सी. जैन तथा कोलंबिया विश्वविद्यालय के श्री अरविंद पनगढ़िया शामिल हैं।
- हाल ही में शुरू किए गए स्तंभ 'झरोखा जम्मू-कश्मीर का' में जम्मू-कश्मीर में निवेश के अवसरों पर फोकस किया जाएगा।

पाठक कृपया अपना आदेश स्थानीय एजेंट को दें अथवा विज्ञापन एवं प्रसार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, पूर्वी खंड-4, लेवल-7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066 (दूरभाष:26100207 फैक्सः 26175516) को संपर्क करें।

विशेषांक का मूल्य 15/- रुपये है।

बिक्री तथा अन्य जानकारियों के लिए संपर्क करें:

प्रकाशन विभाग पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली-110001 (दूरभाष: 23386096) * सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003 (दूरभाष: 23890205) * कॉमर्स हाउस, करीमभाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई-400038 (दूरभाष: 22610081) * 8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष: 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बसंत नगर, चेन्नई-600070 (दूरभाष: 24917673) * प्रेस रोड, गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष: 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकला कॉम्प्लेक्स, एमजे रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष: 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर-560034 (दूरभाष: 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष: 2301823) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-8, अलीगंज, लखनऊ- 226024 (दूरभाष: 2325455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, पाल्दी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष: 26588669) * नौजान रोड, उजान बाजार, गुवाहाटी-781001 (दूरभाष: 2516792) * द्वारा/पीआईबी, मालवीय नगर, भोपाल-462003 (म.प्र.) (दूरभाष: 2556350) * द्वारा/पीआईबी, बी-7/बी, भवानी सिंह रोड, जयपुर-302001 (राजस्थान) (दूरभाष: 2384483)

पत्रिका स्थानीय समाचारपत्र विक्रेताओं से भी प्राप्त की जा सकती है

ग्रामीण विकास में बायोगैस की भूमिका

डा. गणेश कुमार पाठक

बायोगैस गैर-परंपरागत ऊर्जा का एक ऐसा स्रोत है, जिसका उत्पादन एक प्राकृतिक घटना है। जब जानवरों के मल-मूत्र, मानव के मल-मूत्र एवं पादप कचरे का वायुरहित अवस्थाओं में अपघटन होता है तो जीवाणुओं की क्रिया के फलस्वरूप एक ज्वलनशील गैस की उत्पत्ति होती है। इसे ही बायोगैस या 'गोबर गैस' कहा जाता है। इस ज्वलनशील गैस का मुख्य अवयव मिथेन है, जिसके जलने से धुंआ रहित लौ निकलती है। फलस्वरूप किसी तरह के प्रदूषण का खतरा नहीं रहता है। बायोगैस के जलने पर चमक भी नहीं होती है। यह गंधहीन होती है तथा इसकी उष्मा भी अधिक होती है। बायोगैस में 65 प्रतिशत मीथेन, 30 प्रतिशत कार्बन-डाई-आक्साइड, 1 प्रतिशत हाइड्रोजन सल्फाइड, 1.2 प्रतिशत हाइड्रोजन, 1 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.8 प्रतिशत कार्बन मोनो आक्साइड एवं 0.9 प्रतिशत ऑक्सीजन पाया जाता है।

पशुधन के मामले में विश्व में भारत का प्रथम स्थान है। अपने देश में सबसे अधिक पशु पाये जाते हैं। इस दृष्टि से अपने देश में बायोगैस के विकास की असीम संभावनाएं विद्यमान हैं। योजना आयोग के आंकड़ों के अनुसार अपने देश में प्रतिवर्ष लगभग 80 करोड़ टन गोबर बनता है, जिसमें से 50 प्रतिशत ईधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। गांवों में ऊर्जा का कुल 57 प्रतिशत भाग भोजन पकाने में व्यय किया जाता है। किंतु भोजन पकाने में गोबर रूपी ईंधन का यह उपयोग परंपरागत ढंग से ही किया जाता है। यदि इसका उपयोग बायोगैस (गोबर गैस) के रूप में किया जाये तो विशेष लाभ होगा, कारण कि 1 किलोग्राम गोबर से 1.4 घनफुट गैस तैयार होती है। भोजन पकाने हेतु प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 8-10 घनफुट गैस की आवश्यकता पड़ती है जबकि बायोगैस चूल्हे में प्रति घंटा 8-16 घनफुट गैस की खपत होती है। यही नहीं एक वर्ष में 2 घनमीटर अपशिष्ट से 100 किलोग्राम यूरिया, 36 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं पोटाश खाद की प्राप्ति होती है। यह खाद कम्पोस्ट खाद से भी अधिक प्रभावशाली होती है। बायोगैस से डीजल इंजन भी चलाये जा सकते हैं। डीजल इंजन चलाने हेतु 15 घनफुट प्रति घंटा हार्स पावर की दर से गैस की खपत होती है। गैस एवं डीजल की खपत का अनुपात 80-20 है।

सर्वप्रथम यूरोप के देशों में सीवेज वेस्टेज एवं गोबर से बायोगैस प्राप्त करने के संयंत्र स्थापित किये गये। चीन में भी सन् 1930 में अमरीका में सीवेज डिस्पोजल से बायोगैस प्राप्त करने के संयंत्र स्थापित किये गये।

बायोगैस का इतिहास

सर्वप्रथम यूरोप के देशों में सीवेज वेस्टेज एवं गोबर से बायोगैस प्राप्त करने के प्रयास किये गये थे। इसके बाद सन् 1953-55 में भारतीय वैज्ञानिकों के प्रयासों से 'ग्राम लक्ष्मी' नामक बायोगैस इकाई का व्यावहारिक नमूना विकसित किया गया, जो बनाने में सरल एवं चलाने में आसान था। यह डिजाइन विश्व भर में बायोगैस संयंत्र के भारतीय माडल के रूप में प्रसिद्ध हुआ। सन् 1962 में खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग ने इसके विस्तार के लिए कार्य करना प्रारम्भ किया।

सन् 1981-82 में 'राष्ट्रीय बायोगैस विकास परियोजना' प्रारंभ की गयी। जिसके निम्नलिखित उद्देश्य है-

- ग्रामीण क्षेत्रों में – साफ सुथरी एवं प्रदूषण रहित ऊर्जा व्यवस्था।
- समृद्ध खाद का उत्पादन करना।
- ग्रामीण स्त्रियों एवं बच्चों को श्रम-साध्य रसहीन जीवन से मुक्त कर उनके जीवन का सरस बनाना।
- गोबर के गलत उपयोग एवं उससे होने वाली हानि पर नियंत्रण करना।
- सफाई लिए उचित शिक्षा एवं प्रेरणा का संचार करना।

उक्त परियोजना (राष्ट्रीय विकास परियोजना) के तहत निम्नांकित प्रोत्साहन किये गये हैं।

- लाभांवित व्यक्तियों के लिए केंद्रीय सब्सिडी केवल कम क्षमता वाले संयंत्रों के लिए, छोटे एवं सीमित किसानों तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए सब्सिडी की ऊंची दर, असम के मैदानी क्षेत्रों, उत्तर प्रदेश का तराई क्षेत्र पश्चिमी थार एवं अंडमान निकोबार द्वीप समूह में और अधिक दर एवं पूर्वोत्तर राज्यों, सिक्किम, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी जनपदों में सब्सिडी की सबसे अधिक दर।
- रोजगार में लगे प्रशिक्षित लोगों, स्वयं सेवी संगठनों, राज्य निकायों आदि को कार्य पूरा करके एवं संयंत्रों को चालू करने के लिए प्रति संयंत्र चार सौ रुपये की दर से शुल्क, इसमें लाभान्वित लोगों को मुफ्त रखरखाव के लिए कम से कम दो वर्ष की गारंटी का प्रावधान।
- स्कूलों में अध्यापकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं, गांव स्तर पर सरकारी कर्मचारियों आदि जैसे अधिसूचित प्रोत्साहकों के लिए प्रति संयंत्र 50 रुपये की दर से नगद प्रोत्साहन।
- विकास खंड, जिला एवं राज्य स्तर पर बायोगैस केंद्र प्रकोष्ठों की स्थापना के लिए परियोजना क्रियान्वयन विभागों एवं ऐजेंसियों को सेवा शुल्क।
- वारंटी अवधि के समाप्त होने के पश्चात एक बार प्रति संयंत्र 750 रुपये की दर से मरम्मत शुल्क अलग-अलग मामले के आधार पर सब्सिडी के बराबर अधिक मरम्मत शुल्क।
- किसानों के कम से कम आधा एकड़ क्षेत्रफल वाले खेतों में खाद के प्रयोग का प्रदर्शन रुपये 1000 रुपये प्रति प्रदर्शन की दर से।
- सर्वश्रेष्ठ काम करने वाले राज्यों, जिलों एवं पंचायतों को नगद

पुरस्कार, वाणिज्य एवं सहकारी बैंक कृषि संबंधी प्राथमिकता वाले क्षेत्रों के तहत मध्यम वर्गीय के ऋण देकर बायोगैस सहायता कर रहे हैं। इस ऋण को जमीन को गिरवी रखे बिना पांच से सात वर्ष में वापस करने का प्रावधान है।

- राष्ट्रीय बायोगैस विकास परियोजना का 4 घनमीटर क्षमता/संयंत्र हेतु केंद्रीय आर्थिक सहायता की दरों में 3 घनमीटर वाले संयंत्रों के समान करके लघु एवं सीमांत कृषकों तथा समाज के कमजोर वर्गों के प्रति केंद्रित किया गया है।
- दिसंबर, 1991 में प्रारंभ प्रोत्साहन योजना के 8–15 घनमीटर क्षमता के संयंत्रों की स्थापना हेतु सहायता के रूप में 5000 रुपये की वित्तीय सहायता।
- डीजल इंजन को दुहरे ईंधन में बदलने के लिए रेट्रो–फिट एवं संयंत्र से इंजन स्थल तक बायोगैस हस्तांतरण हेतु दो या तीन प्लास्टिक खंड के गुब्बारों के लिए 2800 रुपये की वित्तीय सहायता।

बायोगैस संयंत्र का डिजाइन

गैर–परंपरागत ऊर्जा स्रोत मंत्रालय द्वारा बायोगैस संयंत्रों के 4 डिजाइनों के विस्तार की स्वीकृति प्रदान कर दी गयी है।

1. खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग मॉडल
2. स्थिर गुबंद वाला दीनबंधु मॉडल

तालिका–1

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश	माप संयंत्रों की संख्या	संयंत्रों का प्रतिशत
आंध्र प्रदेश	1989	74.6
असम	705	90.4
बिहार	1797	58.9
गुजरात	2009	88.5
हरियाणा	785	82.8
हिमाचल प्रदेश	699	80.2
कर्नाटक	1505	95.0
केरल	1109	85.5
मध्य प्रदेश	1410	79.7
महाराष्ट्र	4410	80.7
मिजोरम	205	50.0
उड़ीसा	1510	75.8
पंजाब	403	99.7
राजस्थान	1208	44.8
तमिलनाडु	2700	80.5
उत्तर प्रदेश	2990	486
पं. बंगाल	1310	90.8
दिल्ली	98	25.4
मणिपुर	55	83.3
सिक्किम	55	86.6
समस्त भारत	26952	77.1

3. प्रगति मॉडल
4. पहाड़ी क्षेत्र के लिए रबड़युक्त नायलोन फाइबर का आसानी से उठाये जा सकने वाला मॉडल।

उपर्युक्त मॉडलों में दीनबंधु मॉडल सबसे लोकप्रिय हो रहा है, कारण कि इसकी स्थापना एवं रख–रखाव में सबसे कम लागत आती है। यह ईंट, सीमेंट एवं बालू का बना होता है। इसका निर्माण स्वीकृत मानदंडों के अनुसार केंद्र निरीक्षण में किया जाता है, अन्यथा रिसाव की समस्या उत्पन्न हो जाती है। खादी एवं ग्रामोद्योग का मॉडल यद्यपि खर्चीला तो है किंतु, निर्माण संचालन, रख–रखाव एवं मरम्मत में सुगमता रहती है।

बायोगैस विकास हेतु विभिन्न राज्यों में प्रबंध समितियों की स्थापना

बायोगैस विकास हेतु नोडल अभिकरणों के द्वारा विभिन्न राज्यों में प्रबंध की स्थापना की गयी है। प. बंगाल, कर्नाटक, तमिलनाडु, राजस्थान में नोडल अभिकरण विभागों द्वारा मुख्यतः डेयरी, कृषि विभागों, गोशालाओं में संस्थागत संयंत्र की स्थापना को प्रोत्साहित किया जा रहा है। पंजाब, महाराष्ट्र, गुजरात में ग्राम स्तरीय अक्षय ऊर्जा जैसी समीतियां स्थापित की गयी हैं। बिहार, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र में विष्ठा आधारित संयंत्र की स्थापना की जा रही है। इसमें सुलभ इंटरनेशनल सराहनीय कार्य कर रहा है। इस कार्य के तहत फ्लश शौचालयों को बायोगैस इकाईयों से जोड़ने का कार्य किया जा रहा हैं, जिसमें सेफ्टी टैंक या लीच पिटों के निर्माण की आवयकता नहीं पड़ती है। गैर–परंपरागत ऊर्जा स्रोत मंत्रालय शौचालयों के निर्माण एवं उसे बायोगैस इकाई से जोड़ने के लिए अतिरिक्त केंद्रीय सब्सिडी या काम पूरा करने का शुल्क भी दे रहा है। देश में लगभग 95,000 शौचालयों को बायोगैस इकाईयों से जोड़ दिया गया है। महाराष्ट्र, प. बंगाल एवं गुजरात में ये काफी लोकप्रिय हैं।

सामुदायिक, संस्थागत एवं विष्ठा आधारित बायोगैस कार्यक्रम के तहत राष्ट्रीय बायोगैस विकास परियोजना के अंतर्गत सामुदायिक कार्यक्रम को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। जिसके तहत प्रति संयंत्र अधिकतम 25000 रुपये का वित्तीय सहायता दी जा रही है। प्रथम दो वर्षों के लिए 1000 रुपये संयंत्रों के प्रचालन एवं अनुरक्षण हेतु भी दिया जा रहा है।

राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा कार्यों का प्रगति मूल्यांकन भी कराया जाता है जो सर्वेक्षण पर आधारित होता है। सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–86 से 1989–90) की अवधि में प्रगति मूल्यांकन किया गया। 20 राज्यों एवं संघ राज्यों के 251 जिलों के लगभग 3600 गांवों एवं 1527 प्रखंडों में वितरित 27,000 संयंत्रों के सर्वेक्षण से यह ज्ञात हुआ है कि दीनबंधु माडल ही अधिक लाभदायक है। सर्वेक्षण में प्राप्त तथ्यों का वितरण (तालिका–1) से स्पष्ट है–

राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद के सर्वेक्षण से यह भी ज्ञात हुआ है कि दो तिहाई बायोगैस संयंत्र अनुसूचित जाति एवं जनजाति तथा छोटे एवं सीमांत किसानों के पास है। यद्यपि मात्र 15 प्रतिशत परिवार ही अपनी संयंत्रों की पूरी क्षमता का उपयोग कर रहे हैं, जबकि 27 प्रतिशत परिवारों के पास इस काम के लिए पर्याप्त मात्रा में गोबर प्राप्त है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये ही शैक्षिक

जागरूकता अभियान चलाया जा रहा है। जिसके तहत गुजरात, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश एवं खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग को भी स्थानीय लोक कलाओं एवं मुहावरों के आधार पर विकसित क्षेत्रीय कार्यक्रमों के आधार पर अभियान प्रारम्भ करने हेतु चयन किया गया है। इस कार्यक्रम के दूसरे चरण में आंध्र प्रदेश, असम, कर्नाटक, मध्य प्रदेश एवं प. बंगाल राज्यों को सम्मिलित करने की योजना है।

प्रशिक्षण कार्यक्रम

राष्ट्रीय बायोगैस विकास परियोजना के प्रभावी एवं त्वरित क्रियान्वयन हेतु राज्यों के संबंद्ध विभागों एवं क्रियान्वयन एजेंसियों को तकनीकी तथा प्रशिक्षण सहायता देने के लिए विकेंद्रीकरण का दृष्टिकोण अपनाया गया है। 14 क्षेत्रीय बायोगैस विकास एवं प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना की गयी है, जो इस प्रकार है–

1. आंध्र प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय
2. असम कृषि विश्वविद्यालय, जोरहाट
3. ग्राम विज्ञान केंद्र, वर्धा
4. गुजरात कृषि विश्वविद्यालय, आणंद
5. हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय, पालमपुर
6. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर
7. गैर–परंपरागत ऊर्जा संस्थान, नासिक
8. कस्तूरबा ग्राम कृषि क्षेत्र, इन्दौर
9. उड़ीसा कृषि एवं औद्योगिकी विश्वविद्यालय, भुवनेश्वर
10. राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, उदयपुर
11. राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय पूसा, समस्तीपुर
12. ग्रामीण विकास क्षेत्रीय संस्थान
13. तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर
14. कृषि विज्ञान विश्वविद्यालय, बंगलौर

उपर्युक्त केंद्र बायोगैस के बारे में क्षेत्रीय भाषाओं में तकनीकी साहित्य एवं प्रशिक्षण सामग्री तैयार करते हैं। कोयम्बटूर; इंदौर एवं खड़गपुर केंद्रों द्वारा क्रमशः ग्रामीण कारीगरों, लाभांवित महिलाओं एवं निरीक्षणों के लिए संचार किट तैयार किये हैं, जबकि उदयपुर केंद्र बायोगैस संयंत्र की मरम्मत एवं रख–रखाव हेतु हिंदी पुस्तिका प्रकाशित करता है।

बायोगैस विकास हेतु प्रोत्साहन पुरस्कार

बायोगैस के व्यापक विकास एवं विस्तार हेतु राष्ट्रीय स्तर के पुरस्कार प्रदान किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त खादी ग्रामोद्योग द्वारा भी पुरस्कार दिये जाते हैं, जिनमें गुजरात, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, सिक्किम, महाराष्ट्र, पंजाब प्रथम पुरस्कृत राज्य तथा उत्तर प्रदेश, बिहार, गोवा द्वितीय परस्कृत राज्य हैं।

उपलब्धियां एवं संभावनाएं

उपर्युक्त प्रोत्साहनों एवं सरकार द्वारा दिये गये सहायता कार्यों के चलते देश में 1980–81 से 1991–92 के दशक के दौरान 15.75 लाख संयंत्र स्थापित किये जा चुके थे। 1991–92 में ही 1.75 लाख संयंत्र स्थापित किये गये। इस तरह 1991–92 के अंत तक 16 लाख 40 हजार संयंत्र स्थापित किये जा चुके थे जो कुल क्षमता का 13 प्रतिशत था। 1992–93 तक बायोगैस संयंत्रों की निर्माण की वार्षिक दर 1,80,000 तक हो गई, जो 1980 में मात्र 1000 थी। 1992–93 के लिए 55.17 करोड़ रुपये का बजट अनुमान एवं 56.87 करोड़ का संशोधित अनुमान तथा 1.35 लाख संयंत्र की स्थापना का लक्ष्य रखा गया था। अप्रैल, 1992 से दिसंबर 1992 तक 67,500 बायोगैस संयंत्र के लक्ष्य की तुलना में 87,553 संयंत्र स्थापित किये जा चुके थे। वर्ष 1991–92 तक ही 2 मिलियन संयंत्रों की स्थापना के फलस्वरूप घरेलू मांग मात्र 2 प्रतिशत की आपूर्ति ही इन संयंत्रों द्वारा हो पाती थी। 2002–03 में 35.23 लाख बायोगैस संयंत्र स्थापित किया जा चुके हैं।

अपने देश में बायोगैस विकास के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम के अंतर्गत 12.40 लाख बायोगैस संयंत्र स्थापित किये जाने हैं, जो ईंधन की 438 टन से अधिक लकड़ी के बराबर गैस का उत्पादन करते हैं, जो प्रति वर्ष 175.6 करोड़ रुपये बचाने के बराबर है। साथ ही ये संयंत्र 211 लाख टन अधिक खाद उत्पन्न करते हैं। जिनका मूल्य प्रतिवर्ष 174.5 करोड़ रुपये है। इस लक्ष्य की तुलना में अपने देश के अब तक स्थापित लगभग 16.5 लाख पारिवारिक आकार के बायोगैस संयंत्रों एवं 860 सामुदायिक संस्थागत एवं विष्ठा आधारित बायोगैस संयंत्रों से प्रतिवर्ष 265 करोड़ रुपये के मूल्य के लगभग 53 लाख टन ईंधन की लकड़ी के बचत के समतुल्य ईंधन गैस का उत्पादन हो रहा है। साथ ही मृदा लाभ प्रदत्ता एवं कृषि उत्पादन में सुधार लाने हेतु प्रत्येक वर्ष लगभग 2.57 लाख टन ह्यूमस से उन्नत स्तर के खाद उत्पन्न किये जाने की आशा है।

अनुसंधान एवं विकास

अपने देश में बायोगैस की असीम संभावनाएं विद्यमान हैं, ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा का असीम स्रोत गोबर में निहित है। अपने देश में लगभग 12000 टन गोबर प्रतिवर्ष प्राप्त होता है। कुल प्राप्त गोबर का मात्र 50 प्रतिशत का उपयोग ही समुचित रूप से हो पाता है। शेष 50 प्रतिशत का सही उपयोग नहीं हो पाता है। विशेषज्ञों के अनुसार यदि एक टन गोबर को कंडे के रूप में ईंधन हेतु बताया जाए तो उसके 58750 किलोग्राम कैलोरी ऊर्जा मिलती है। जबकि उतने ही गोबर की गैस से 1,14,000 किलोग्राम कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है। गोबर में पशुओं के मूत्र को मिलाकर ऊर्जा शक्ति को और बढ़ाया जा सकता है। भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलौर के शोधकर्ताओं के अनुसार इस विधि से गोबर के 75 प्रतिशत भाग का उपयोग करके 2 टन गोबर से 250 लाख लीटर मिट्टी के तेले के बराबर ऊर्जा प्राप्त हो सकती है। खेतों में और गांवों में बिखरे घास–फूस, कूड़े–करकट, पत्तियों डंठल, खेती से बने कचरे, बेकार लकड़ी को गैस प्लांट में गोबर के साथ मिलाकर गैस की मात्रा में वृद्धि की जा सकती है। शोधों से यह ज्ञात होता है कि जलकुम्भी में अपार ऊर्जा शक्ति है। 90 किलोग्राम जलकुम्भी से 35 लीटर तक मीथेन गैस प्राप्त की जा सकती है। भारत में चुने हुये ऊर्जा ग्रामों में इस तरह की ऊर्जा प्राप्त की जा रही है, जिसका उपयोग खाना बनाने के ईंधन एवं प्रकाश व्यवस्था में किया जा रहा है। टाटा ऊर्जा अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा धान–पुआल

से उच्च दर पर बायोगैस उत्पादन हेतु जीवों का कुशल सह जीवन का विकास भी किया जा रहा है। भारतीय विज्ञान संस्थान द्वारा ताजा पत्ती वाले वायोगैस का प्रयोग कर 3 मीटर क्षमता वाले प्लग प्रवाह रिएक्टर का निर्माण किया गया है।

बायोगैस विकास हेतु समन्वित अनुसंधान एवं विकास कार्यक्रम तथा संस्थान चलाये जा रहे हैं, जिनके मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं –

- गोबर एवं अन्य कार्बनिक अपशिष्टों द्वारा बायोगैस उत्पादन की अवधि को 5 से 8 प्रतिशत तक बढ़ाना।
- गैस उत्पादन दर को दुगुना करना।
- उर्वरक गुणता को बढ़ाना।

अन्नामलई विश्वविद्यालय, अन्नामलई नगर, हरियाणा, कृषि विश्वविद्यालय हिसार, भारतीय संस्थान, बंगलौर, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली, महाराष्ट्र एसोसिएशन फार कल्टिवेशन आफ साइंसेज, पुणे, राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान, करनाल, तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय, कोयम्बटूर एवं टाटा ऊर्जा अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली नामक 8 संस्थानों में सूक्ष्म जैविकी एवं मीथेन उत्पादन की जैविक प्रक्रिया अभियांत्रिकी के बारे में एक समन्वित परियोजना चल रही है इन संस्थानों ने सैलुबाडा तथा वसा अम्लों के अपव्यय एवं मीथेन उत्पादन के लिए प्रयोगशाला में संवर्धन द्वारा बाल निरपेक्षी जीवाणुओं को अलग किया है। आनुवंशिकी अभियांत्रिकी तकनीकी द्वारा बेहतर किस्मों के उत्पादन एवं उनके व्यावहारिक उपयोग के प्रयास किये जा रहे हैं। भारतीय विज्ञान संस्थान एवं तमिलनाडु कृषि विश्वविद्यालय पत्ती वाले जैविक पदार्थों के संसाधन के लिए बायोगैस संयंत्र के व्यावहारिक कार्य कुशल डिजाइन के विकास की संयुक्त परियोजना चला रहे हैं।

अन्नामलई विश्वविद्यालय, भारतीय कृषि उद्योग प्रतिष्ठान, पुणे, केंद्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान, मैसूर, केंद्रीय निर्मल जल मत्स्य पालन संस्थान, भुवनेश्वर एवं पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना विविध कार्यों में खाद का बहुमूल्य उपयोग कर रहे हैं। अन्नामलई विश्वविद्यालय के तत्वावधान में राजस्थान, तमिलनाडु एवं उत्तर प्रदेश में बायोगैस संयंत्र से प्राप्त घोल की परत वाले विभिन्न फसलों के बीजों का खेतों में परीक्षण किया जा रहा है। भारतीय कृषि उद्योग प्रतिष्ठान घोल का उपयोग कम्पोस्ट खाद बनाने में कर रहा है एवं केंद्रीय खाद प्रौद्योगिकी अनुसंधान प्रयोगशाला में उर्वरकों से प्राप्त पौधों की जड़ों को जमाने के लिए इसका माध्यम के रूप में प्रयोग किये जाने का प्रयास किया जा रहा है। केंद्रीय निर्मल जल मत्स्य पालन संस्थान एवं पंजाब कृषि विश्वविद्यालय में भी क्रमशः मत्स्य पालन एवं मशरूम उत्पादन घोल के उपयोग के लिए प्रयोग की विधियों को विकसित किया जा रहा है।

उर्वरकों का मूल्य निर्धारण करने वाली संसदीय समिति ने कृषि हेतु बायोगैस संयंत्र की प्रासंगिकता की पुनः पुष्टि की है एवं सन् 2000 तक 1 करोड़ 20 लाख संयंत्रों की स्थापना हेतु लक्ष्य की पूर्ति के लिए दीर्घ अवधि के बायोगैस विकास कार्यक्रम को सरकारी सहायता देने का सुझाव दिया था। नई दिल्ली में आयोजित ग्रामीण सफाई पर राष्ट्रीय संगोष्ठी में भी शौचालयों से जुड़े बायोगैस संयंत्रों को अपनाने में जो सामाजिक दिक्कतें हैं उनको दूर करने के लिए, महिलाओं के लिए व्यापक स्तर पर शिक्षा कार्यक्रम चलाने का सुझाव दिया है। यद्यपि बायोगैस के विकास का नया चरण चल रहा है किंतु उसकी सफलता गैस उत्पादन की दर में वृद्धि करने, संयंत्रों के निर्माण एवं स्थापना के पश्चात् उनकी देख–रेख हेतु स्वरोजगार पर लगे युवकों एवं स्वयंसेवी संगठनों के व्यापक स्तर पर सहभागिता संयंत्रों के काम न करने या उन्हें हानि पहुंचाने पर बैंकों की बीमा योजना सहित वित्तीय सहायता पर ही निर्भर करेगी।

ग्रामीण विकास में बायोगैस की भूमिका

बायोगैस ग्रामीण विकास में विभिन्न तरीकों से अहम भूमिका निभाता है, जो इस प्रकार है

- **कुटीर उद्योग में** : ग्रामीण क्षेत्रों में बायोगैस का उपयोग कुटीर उद्योग में किया जाता है। जैसे बायोगैस से प्राप्त ऊर्जा से आटा चक्की, धुनकुट्टी, रूई धुनने की मशीन, चारा काटने की मशीन आदि को सुगमतापूर्वक चलाया जाता है।
- **प्रकाश व्यवस्था में** : बायोगैस से तैयार बिजली से प्रकाश की व्यवस्था की जाती है। अपने देश में खादी ग्रामोद्योग द्वारा बायोगैस से प्रकाश उत्पन्न करने हेतु अनेक प्रकार की बत्तियां तैयार की गई हैं। एक बत्ती प्रति घंटा 2.75 घनफुट (80 लीटर) गैस की खपत करती है। इसकी रोशनी 40 वाट बल्ब के बराबर होती है।
- **खाना पकाने में** : खादी ग्रामोद्योग द्वारा ऐसा चूल्हा बनाया गया है जो बायोगैस से प्राप्त ऊर्जा से चलता है। इस चूल्हे पर गांवों में सुगमतापूर्वक खाना पका लिया जाता है।
- **इंजन चलाने में** : बायोगैस से प्राप्त ऊर्जा से डीजल इंजन भी चलाये जा रहे हैं। इससे डीजल की बचत होगी और डीजल संकट को दूर किया जा सकेगा। खास तौर से सिंचाई के लिए यह बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहा है। इससे 60 से 80 प्रतिशत की डीजल की बचत की जा सकती है।
- **खाद निर्माण में** : बायोगैस संयंत्र का उप उत्पाद एक उच्च कोटि का जैविक खाद है। इससे प्राप्त खरी पौधों के लिए पोषक तत्वों से भरपूर होता है। इस खरी में 1.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 2.1 प्रतिशत पोटाश एवं 0.49 प्रतिशत फास्फेट रहता है इसके साथ की साथ इसमें ह्ययूमस की मात्रा भी पाई जाती है। संयंत्र से निकले पदार्थ को गड्ढे में गाड़ दिया जाता है जो सड़कर उच्च कोटि का खाद बन जाता है।
- **मत्स्य पालन वृद्धि हेतु उपयोगी** : बायोगैस का उत्पाद स्लरी है, जिसमें पर्याप्त तत्व पाये जाते हैं। ये तत्व मछलियों के लिए उपयोगी होते हैं। यदि स्लरी को तालाब में डालते रहें तो मछलियों के उत्पादन में वृद्धि होती है।
- **स्वच्छता के समाधान में उपयोगी** : बायोगैस में बेकार मानव मल–मूत्र का भी उपयोग होता है, जिसमें गंदगी नहीं बढ़ने पाती और इस तरह सेनीटेशन की समस्या से छुटकारा मिलता है पटना में लगे सुलभ इंटरनेशनल प्लांट से 32,000 वाट बिजली उत्पन्न की जा रही है।
- **दूषित पर्यावरण की रोकथाम** : बायोगैस संयंत्र प्रदूषण की रोकथाम करता है। कारण पशु एवं मानव द्वारा त्याग किए गए मल–मूत्र से पर्यावरण दूषित होता है। यत्र–तत्र बिखरे कूड़े–करकट–कचरा

भी पर्यावरण को दूषित करते हैं, किन्तु बायोगैस में इन सबका उपयोग हो जाने से पर्यावरण दूषित नहीं होने पाता है और पर्यावरण स्वच्छ बना रहता है। अब जलकुम्भी का भी उपयोग बायोगैस में होने लगा है। जिसमें जलकुम्भी से उत्पन्न समस्या से भी छुटकारा मिलता है और जल भी प्रदूषित नहीं होने पाता। ज्ञातव्य है कि 1 किलोग्राम शुष्क जलकुम्भी से 3.74 मीटर बायोगैस तैयार होता है।

• **महिलाओं के लिए वरदान** : बायोगैस संयंत्र महिलाओं के लिए वरदान सिद्ध हुआ है। कारण कि ये संयंत्र महिलाओं एवं बच्चों द्वारा ईंधन सामग्री को एकत्र करने एवं उन्हें सिर पर लाद कर लाने, खाना बनाने में अधिक समय बरबाद होने तथा धुंये से काले हुए बर्तनों को माजने एवं धुंए के कारण आंख व फेफड़ों की बीमारी – जैसे परेशानियों को समाप्त कर रहे हैं। इस समस्याओं से छुटकारा पाकर महिलाएं अब अपने बच्चों एवं परिवार पर विशेष ध्यान दे रही हैं या अन्य आर्थिक क्रिया–कलापों में अपनी सहभागिता सिद्ध कर रही हैं। यह तथ्य सामने आया है कि 50 से भी अधिक संयंत्रों वाले गांवों में बायोगैस संयंत्रो से आंखों, फेफड़ों की बीमारियों में क्रमशः 27.5 प्रतिशत एवं 14.5 प्रतिशत की कमी आ जाती है।

बायोगैस ऊर्जा की आवश्यकता को देखते हुए तथा अतीत की उपलब्धियों के आधार पर वैकल्पिक ऊर्जा प्रौद्योगिकियों के भावी प्रसार का अनुमान लगाया गया है, जो निम्न तालिका से स्पष्ट है–

वर्ष	सौर कुकर	उन्नत चूल्हे	बायोगैस संयंत्र
2000	4.6	290.4	29.6
2005	5.8	345.2	34.6
2010	7.1	394.2	37.6
2015	8.3	452.9	39.4
2020	9.6	508.4	40.4
2025	10.8	588.6	40.9
2030	12.0	612.9	41.3
2035	13.2	673.2	41.4
2040	14.4	722.4	41.6
2045	15.6	763.7	41.8
2050	16.8	803.4	42.0

स्रोत – "जिज्ञासा", अंक 17, वर्ष 2003 भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली, पृष्ठ 24।

इस प्रकार स्पष्ट है कि बायोगैस एक ऐसा गैर–परंपरागत ऊर्जा स्रोत है, जो धुंआ रहित, सस्ता एवं सुगमता से प्राप्त हो जाने वाला है। चूंकि यह अपशिष्ट पदार्थों का अपघटन करता है, अतः इसमें आक्सीजन की भी आवश्यकता नहीं पड़ती है, जिससे वातावरण में आक्सीजन की कमी भी नहीं होने पाती है। इस तरह यह प्रत्येक तरह से निरापद एवं ग्रामीण विकास में महती भूमिका निभाने वाला ऊर्जा स्रोत है। आज आवश्यकता है इसके व्यापक प्रचार–प्रसार की ताकि यह जन–जन तक पहुंच सके। इससे न केवल ऊर्जा संकट का समाधान होगा, बल्कि हमारी ग्रामीण अर्थ व्यवस्था भी सुदृढ़ होगी। ✱

(लेखक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दूबेछपरा, बलिया–277205, (उ.प्र.) के भूगोल विभाग में रीडर हैं)

कूड़े-कचरे से ऊर्जा

गैर–पारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय देश में कूड़े–कचरे से ऊर्जा उत्पादन परियोजनाओं को बढ़ावा दे रहा है। यह मंत्रालय प्रदर्शनियां लगाकर लोगों को जैव पदार्थों से ज्यादा से ज्यादा मात्रा में मीथेन बनाने की प्रक्रिया दिखाता है। इन प्रदर्शनकारियों का एक अन्य उद्देश्य विभिन्न प्रकार के कूड़े–कचरे से ऊर्जा बनाने के लिए विविध प्रौद्योगिकियों का भी प्रदर्शन करना है जिससे बिजली का उत्पादन हो सके। पंजाब में लुधियाना के पास हीबोवाल स्थिति कूड़े–कचरे से ऊर्जा उत्पादन संयंत्र एक ऐसा ही प्रयोग है। वहां पशुओं के गोबर से एक मेगावाट बिजली और जैविक खाद तैयार होती है।

मंत्रालय द्वारा स्थापित इस संयंत्र को पंजाब ऊर्जा विकास एजेंसी चला रहा है। यह ढाई एकड़ में फैला हुआ है। इसके परिसर में 500 गोशालाएं प्रतिदिन 2500 टन गोबर इस संयंत्र को उपलब्ध कराती हैं। अपनी जरूरतों को पूरा करने के बाद बची हुई बिजली राज्य विद्युत ग्रिड को उपलब्ध करा दी जाती है। बिजली बनाने के अलावा संयंत्र प्रतिदिन 50 टन जैविक खाद भी तैयार करता है।

13 करोड़ रुपए की लागत से बना यह संयंत्र दिसंबर, 2004 में शुरू किया गया था। राज्य बिजली बोर्ड ने बिजली क लिए जो शुल्क निर्धारित किया है उसके अनुसार यह संयंत्र आर्थिक रूप से उपयोगी सिद्ध हुआ है। खाद के रूप में गोबर के इस्तेमाल से यह आय भी अर्जित् कर रहा है।

इस संयंत्र का सबसे बड़ा फायदा यह है कि इससे ग्रीन हाऊस गैस बहुत कम निकलती है। संयंत्र ताप कम निकलने के कारण वातावरण गर्म नहीं होता। संयंत्र ने लगभग 100 लोगों को रोजगार दिया है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रूड़की समय–समय पर संस्थान के कार्यों की निगरानी करता रहता है। ✱

अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत कार्यक्रम

समूचे देश में अक्षय ऊर्जा प्रणालियों/युक्तियों की स्थापना के लिए मंत्रालय के पास अनेक स्कीमें/कार्यक्रम हैं। इनमें राज्य सरकारों, प्रमोटरों या घरों को केंद्रीय वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता है। घरों को राज्य सरकारों के माध्यम से सहायता दी जाती है। देश में अक्षय ऊजा स्त्रोतों जैसे पवन, लघु पनबिजली और बायोमास से विद्युत उत्पादन की अनुमानित संभाव्यता लगभग 80,000 मे.वा. है। 10वीं योजना (31 दिसंबर, 2004 तक) के प्रारंभिक दो वर्षों और नौ महीनों के दौरान इसमें दो–तिहाई अथवा 10 प्रतिशत केवल पवन विद्युत से प्राप्त हुई है, शेष 5 प्रतिशत लघु पनबिजली (2 प्रतिशत) से प्राप्त हुई है।

इन 5000 दूरस्थ गांवों में से 1744 दूरस्थ गांवों का पहले ही विद्युतीकरण कर दिया गया है। इसके अतिरिक्त, मुख्य रूप से जल तापन प्रायोजन के लिए 1.0 मिलियन 1.0 मिलियन वर्ग मीटर संग्राहक क्षेत्र की स्थापना के अतिरिक्त 3.5 मिलियन और 1.0 मिलियन घरों में क्रमशः बायोगैस संयंत्र और घरेलू रोशनी प्रणालियां प्रदान की गई है। ✱

ग्रामीण क्षेत्रों में वैकल्पिक ऊर्जा साधन

विनोद कुमार मिश्र

ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकताएं अभी तक शहरी क्षेत्रों की तुलना में कम रही हैं वहां पर ऊर्जा साधन पर्याप्त हैं। आवश्यकता इस बात की है कि इन ऊर्जा साधनों का वैज्ञानिक रूप से प्रयोग हो ताकि प्रकृति पर न्यूनतम बोझ पड़े और अधिकतम शक्ति हासिल हो।

विशेष बात यह है कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश में कृषि कार्यों में ऊर्जा की आवश्यकता कम है। यहां खाना पकाने के लिए लकड़ी, पशुमल अर्थात गोबर के उपलों, फसलों अवशेषों का ज्यादा प्रयोग होता है। प्रति टन अनाज उत्पादन में लगभग डेढ़ टन फसल अवशेष पैदा हो जाते है। इनमें से नरम व पौष्टिक फसल अवशेष पशुओं को खिलाए जाते हैं और उनसे पशु ऊर्जा प्राप्त होती है। यह पशु ऊर्जा ग्रामीण क्षेत्र में ज्यादातर घरेलू कामों में काम आती है। इन पशुओं से दूध आदि प्राप्त होता है।

हालांकि उपरोक्त किस्म की ऊर्जा अक्षय मानी जा सकती है क्योंकि इसके समाप्त होने की कोई संभावना नहीं होती है। पर इसका बेहतर प्रयोग संभव है। इसके लिए निम्न उपाय आवश्यक हैं–

1. उन्नत चूल्हें : परंपरागत चूल्हों में तापिक क्षमता 8–12 प्रतिशत तक होती है जबकि उन्नत चूल्हों में यह 20–25 प्रतिशत तक होती है। ये चूल्हे कई प्रकार के होते हैं। ये मिट्टी के और लोहे के आवरण वाले चीनी मिट्टी के भी बने होते हैं।

ये अधिक टिकाऊ होते हैं तथा इनसे कम धुआं निकलता है। बेहतर डिजाइन के इन चूल्हों की कीमत कम होती है तथा ईंधन की बचत के कारण इनकी कीमत की शीघ्र वसूली भी हो जाती है।

2. बायोगैस : ग्रामीण क्षेत्रों में पशुमल तथा फसल अवशेषों से बायोगैस तैयार की जा सकती है। यह गैस घर की रसोई के लिए शुद्ध ईंधन का भी कार्य करती है और इसे रोशनी उत्पन्न करने के लिए भी उपयोग किया जा सकता है। इससे विद्युत भी पैदा हो सकती है।

घरों के शौचालयों को यदि बायोगैस संयंत्रों से जोड़ दिया जाए तो एक अच्छा ईंधन मिलता है और दूसरी ओर साफ–सफाई बढ़ती है। सरकार बायोगैस संयंत्र की स्थापना के लिए सहायता देती है। शौचालयों को बायोगैस संयंत्रों से जोड़ने के लिए अतिरिक्त सहायता भी मिलती है।

3. जैविक अवशेषों से ऊर्जा : खेती से या कृषि उद्योगों से जो अवशेष प्राप्त होते हैं उनका घनत्व अत्यंत कम होता है। इस कारण उनके भंडारण में समस्या होती है और अधिक जगह की आवश्यकता होती है। इसके लिए इनका घनीकरण करना पड़ता है जिसके लिए निम्न प्रक्रियाएं अपनाईं जाती हैं।

- **छोटे–छोटे टुकड़ों में बदलना** : घर में जलाने के लिए उन्हें 30–60 सेंटीमीटर के टुकड़ों में काटा जाता है। इससे उन्हें रखना भी आसान होता है तथा ईंधन के रूप में जलाना भी सरल हो जाता है।
- **काठ कोयले का रूप देना** : यदि कृषि अवशेषों को विशेष रूप से जलाया जाए तो उससे उपयोगी कोयला तैयार हो जाता है। इसके लिए हवा पर सही नियंत्रण रखना आवश्यक होता है अन्यथा राख की मात्रा ज्यादा होती है।

इसके लिए वैज्ञानिक रूप से तैयार हल्के भट्ठे प्रयोग में लाये जा रहे हैं जिनमें एक खेप में सोयाबीन, कपास, अरहर आदि के 100 किलोग्राम कृषि अवशेष भरे जा सकें। इस प्रकार के भट्ठों में एक दिन में दो खेपों द्वारा लगभग 80 किलोग्राम कोयला तैयार किया जा सकता है।

- **मशीनों द्वारा इष्टिकाएं तैयार करना** : आजकल ऐसी मशीनें भी तैयार की गई हैं जिनकी सहायता से अवशेषों को ठोस रूप दिया जा सकता है। इनकी सहायता से काफी व मूंगफली के छिलके, सरसों के पौधों के डंठलों आदि को ठोस रूप दिया जाता है। इसके अलावा नारियल के छिलकों के रेशों, गन्ने की खोई, तंबाकू के डंठलों को भी इस तरह कुचला जाता है ताकि उनकी नमी निकल जाए और इनका घनत्व काफी घट जाए। इन मशीनों द्वारा तैयार इष्टिकाओं का घनत्व 8,000–12,000 किलोग्राम प्रतिघन मीटर तक हो जाता है जबकि कच्चे व बायोमास का घनत्व मात्र 60–80 किलोग्राम प्रति घन मीटर ही होता है। और इस प्रकार भंडारण अत्यंत सरल हो जाता है। इनमें प्रयुक्त मशीनों की संरचना भी सरल होती है और ये आम प्रयोग में आने वाली दुरमुठ की तरह काम करती हैं।
- **कृषि अवशेषों से सीधे उत्पादन** : कृषि उत्पादनों पर आधारित उद्योग भी ग्रामीण क्षेत्रों में ही ज्यादा सफल होते हैं। चीनी मिलें, चावल मिलें आदि कृषि भूमि के पास ही लगाई जाती हैं। कागज की मिलें भी उन क्षेत्रों में लगाई जाती हैं जहां लुगदी हेतु कच्ची सामग्री बहुतायत से पाई जाती है।

इस प्रकार के उद्योगों में बड़ी मात्रा में बायोमास भी अपशिष्ट मात्रा के रूप में निकलता है। चीनी मिलों से खोई, चावल मिलों से भूसी निकलती है जिसका यदि उचित उपयोग न किया जाए तो वह समस्या बन जाती है।

आजकल इनसे दक्षतापूर्वक विद्युत उत्पादन करने हेतु प्रणालियां विकसित की जा चुकी हैं। ये प्रणालियां न सिर्फ अपने कारखानों को विद्युत आपूर्ति करती हैं वरन् इनसे प्राप्त विद्युत का वितरण आसपास के इलाकों में भी किया जाता है। इस प्रकार की 28 परियोजनाओं से 141 मेगावाट विद्युत का उत्पादन हो रहा है तथा 27 अन्य निर्माणाधीन परियोजनाओं से 180 मेगावाट विद्युत का उत्पादन होने लगेगा। इस प्रकार करोड़ों यूनिट बिजली ग्रिड तक पहुंच रही है और लाखों टन कोयले की बचत हो रही है।

उपरोक्त सभी परियोजनाओं हेतु अनेक प्रोत्साहन जैसे पूंजी सहायता, आसान कर्ज, आदि दिये जा रहे हैं। इसके अलावा राज्य बिजली बोर्डों ने इस प्रकार की विद्युत की खरीद आदि के लिए लाभकर नीतियां प्रारंभ कर दी हैं।

- **पशु ऊर्जा** : आज भारत में भारवाही पशुओं की अनुमानित संख्या 7.5 करोड़ है। ग्रामीण क्षेत्र में परिवर्तन का दौर चल रहा है इसके कारण इसकी संख्या कम हो रही है तथा उपयोग भी घट रहा है। यातायात के बढ़ते साधन तथा मशीनीकरण इसका प्रमख कारण है।

पर पशु ऊर्जा भी अक्षय ऊर्जा है। इसमें विशेष बात यह है कि पशुओं का यदि फसल कटाई के बाद के कामों अर्थात दाने निकालना, तेल निकालना व अन्य ग्रामीण क्षेत्रों में होने वाले कार्यों में उपयोग होता रहेगा तो वह उपयोगी होगा अन्यथा वे आवारा पशुओं की तरह घूमेंगे व नुकसान करेंगे।

क्षमता

आमतौर पर बैल अपने शरीर के वजन का 12 प्रतिशत ऊंट अपने शरीर के वजन का 18 प्रतिशत और गधा 35 प्रतिशत तक वजन ढो सकता है। यदि पशुओं के उपयोग में दक्षता बढ़ाई जाए तो उनके जुए, उनके द्वारा खींची जाने वाली गाड़ियों के टायर आदि की व्यवस्था में सुधार किया जाए तो उनकी क्षमता को 15–30 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता हैं। आधुनिक हवादार टायर वाली बैलगाड़ियां तीन टन तक वजन ढो सकती हैं तथा गद्दीदार सीटें लगी बैलगाड़ियां भी उपलब्ध हैं। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में प्रदूषण मुक्त यातायात उपलब्ध हो सकता है। इसके अलावा बैलों का उपयोग जुताई, बुवाई, पटकनी आदि भी हो जाता है। इसी तरह भैसों, ऊंटों तथा गधों का उपयोग विभिन्न कार्यों में होता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में सौर ऊर्जा

सूर्य के ताप से भोजन पकाने की परंपरा भारत में नई नहीं है। ऋग्वेद तथा प्राचीन ब्राह्मण ग्रंथ बतलाते हैं कि सौर ऊर्जा से उस काल में भी भोजन पकाया जाता था तथा यह देखने में आकर्षक सुगंधित पौष्टिक व स्वादिष्ट माना जाता था। इससे मनुष्य में ओज बढ़ता था तथा त्वचा में कांति बढ़ती थी। इससे रक्त दोष, पाचन दोष, श्वास दोष दूर होते थे। उन दिनों सौर ऊर्जा से बने भोजन को अमृत तुल्य भोजन कहा जाता था और पकाने में उपयोग होने वाले पात्रों की अक्षय पात्र कहा जाता था।

वास्तव में सौर ऊर्जा से तैयार भोजन अपने ही रस से पकता है और इसमें अतिरिक्त पानी या तेल आदि डालने की आवश्यकता नहीं होती है। सामान्य तरीकों कुकिंग रेंज व माइक्रोवेव ओवन में भोजन जल्दी तो पक जाता है पर उससे उसकी पॉष्टिकता व स्वाद आदि का ह्रास हो जाता है। यदि इन्हें तत्काल खा लिया जाए तो उतना नुकसान नहीं होता पर फ्रिज में रखने के बाद गर्म करके खाया जाए तो रहे सहे पौष्टिक गुण भी समाप्त हो जाते हैं।

दूसरी ओर सौर कुकर में पकने वाला भोजन अत्यंत धीमी गति से तैयार होता है। यह देर तक गर्म भी रह सकता है तथा इसकी पौष्टिकता व स्वाद बना रहता है।

पीने का पानी

इसके अलावा सौर कुकर का प्रयोग पानी के पाश्चरीकरण हेतु भी हो सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी की बड़ी समस्या रहती है। विशेष रूप से वर्षा ऋतु में जब नदी–नाले भर जाते हैं तो कुआं, ट्यूबवैलों का पानी भी दूषित हो जाता है।

ऐसे में सौर कुकर के द्वारा पीने का बेहतर पानी तैयार किया जा सकता है। यदि पानी का 65 डिग्री सेल्सियस तक भी गर्म किया जाए तो इसके अधिकांश रोगाणु मर जाते हैं। सौर कुकर में 4 घंटे में 28 लीटर का पाश्चरीकरण किया जा सकता है और पूरे दिन में औसतन 100 लीटर पीने का जल तैयार किया जा सकता है जो पर्याप्त होता है।

इस प्रकार और कुकर के उपयोग से एक साथ चार व्यंजन भी तैयार हो जाते हैं और पीने का पानी भी तैयार किया जा सकता है। यह हॉट केस की तरह भी काम करता है तथा इसमें भोजन या पानी गर्म भी रखा जा सकता है। यही नहीं इसका उपयोग दही जमाने के लिए भी किया जा सकता है। क्योंकि सर्दियों में दही जमाने में ज्यादा दिक्कत होती है और सौर कुकर के जरिये अपेक्षाकृत बेहतर तापमान हासिल किया जा सकता है।

सूखा प्रभावित क्षेत्रों सौर ऊर्जा

विशेष बात यह है कि भारत में ऐसे बहुत से इलाके हैं जहां अक्सर भूखे व अकाल जैसी स्थितियों का सामना करना पड़ता है। कई जगहों पर तूफान भी आता है और ऐसे में सारी प्राकृतिक सामग्री या तो नष्ट हो जाती है या अनुपयोगी हो जाती है। पेड़ सूख जाते हैं, खेती नष्ट हो जाती है। तथा सरसों, ज्वार, अरहर आदि के डंठल भी जलाने के लिए नहीं मिल पाते हैं। पशु या तो मर जाते है या दूर–दूर तक ले जाए जाते हैं और जलाने के लिए उपले भी नहीं मिल पाते हैं। ऐसे में सौर कुकर एक आदर्श माध्यम है जो भोजन पकाने के काम आता है।

पवन ऊर्जा

ग्रामीण क्षेत्र में इलाके खुले होते हैं तथा हवा का बहाव काफी होता है। ऐसे में छोटी–छोटी पवनचक्कियां लगाकर ऊर्जा हासिल की जा सकती हैं। जहां पर हवा के बहावे की औसत गति 6.5–8 मीटर प्रति सेकेंड हो वहां पर पवन ऊर्जा का कीमत प्रभावी उत्पादन किया जा सकता है।

इसके लिए खुले स्थान का चयन किया जा सकता है जहां पर बड़े–बड़े पेड़ न हों। पवन ऊर्जा सस्ती भी और अक्षय भी है। पर इस प्रकार की पवनचक्की को आबादी से दूर लगाना चाहिए क्योंकि इससे काफी शोर होता है। इसके पंखों का रंग चटकीला होना चाहिए। ताकि पक्षी इससे दूर ही रहें।

ग्रामीण क्षेत्रों में सौर ऊर्जा व पवन ऊर्जा के सम्मिश्रण से सिंचाई व अन्य कार्यों हेतु पंप लगाए जा सकते हैं और सड़कों व अन्य स्थानों पर रोशनी की जा सकती है।

यदि ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा के वैकिल्पक साधन विकसित किये जाएं और उनकी मुकम्मल देखरेख हो तो ग्रामीण आबादी का शहर की ओर पलायन रूक जाएगा और गांवों का सर्वांगीण विकास भी होगा। ✱

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोत के क्षेत्र में सरकार के प्रमुख फैसले और पहलें

गैर-परंपरागत ऊर्जा स्रोत मंत्रालय ने साझा न्यूनतम कार्यक्रम के उद्देश्य के अनुरूप ग्रामीण विद्युतीकरण, ऊर्जा सुरक्षा और विश्व स्तरीय आधारभूत ढांचे के संदर्भ में जारी प्राथमिकताओं, नीतियों और कार्यक्रमों को नई दिशा दी।

पुनरोपयोगी ऊर्जा पर जिला सलाहकार समिति

पुनरोपयोगी ऊर्जा को बढ़ाने में आ रही अड़चनों को सुलझाने और इससे जुड़े अन्य ग्रामीण विकास कार्यक्रमों में पुनरोपयोगी ऊर्जा कार्यक्रम के क्रियान्वयन की देख-रेख के लिए प्रत्येक जिले में जिला कलेक्टर की अध्यक्षता मे जिला सलाहकार समिति का गठन किया गया है। देशभर में 409 डीएसी गठित की जा चुकी हैं जबकि बाकी जिलों में इनका गठन शीघ्र कर लिया जाएगा। डीएसी के 14 सदस्यों में से विभिन्न विभागों के अध्यक्ष, बार कौंसिल प्रतिनिधि तथा दो सांसद शामिल होते हैं। डीएसी में छह महिला सदस्यों का होना आवश्यक है।

दूर-दराज के गांवों का विद्युतीकरण

दूर-दराज के गांवों के विद्युतीकरण के कार्यक्रम के तहत 500 गांवों के विद्युतीकरण के लक्ष्य में से 1944 गांवों और 594 बस्तियों का विद्युतीकरण 31 मार्च, 2005 तक किया जा चुका है। यह कार्यक्रम 2001-02 में आरंभ किया गया था। वर्ष 2004-05 के दौरान 11 राज्यों के 403 गांवों/बस्तियों का विद्युतीकरण किया गया है।

ऊर्जा सुरक्षा परियोजना का गांवों में परीक्षण

मंत्रालय ने गांवों मे जैव कचरे और अन्य पुनरोपयोगी ऊर्जा स्रोतों के जरिए ऊर्जा सुरक्षा की अवधारणा उपलब्ध कराई है। इस वर्ष ग्राम ऊर्जा सुरक्षा की 24 परीक्षण परियोजनाओं को मंजूरी दी गई है। इससे प्रत्येक गांव में 25 लोगों को रोजगार मिला है। इस परीक्षण परियोजनाओं के परिणामों के आधार पर दूर-दराज के गांवों में एक संपूर्ण सुरक्षा योजना तैयार की जाएगी।

राजीव गांधी अक्षय ऊर्जा दिवस

मंत्रालय ने पूर्व प्रधानमंत्री, राजीव गांधी के जन्म दिवस, 20 अगस्त को प्रति वर्ष राजीव गांधी अक्षय ऊर्जा दिवस के रूप में मनाने का निश्चय किया है। इसका उद्देश्य ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों तथा औद्योगिक और व्यावसायिक संस्थानों में पुनरोपयोगी ऊर्जा प्रणाली और उपकरण स्थापित करने की ओर ध्यान आकृष्ट करना है। इस मौके पर 20 अगस्त, 2004 को लाखों स्कूली बच्चों ने प्रत्येक जिले में पुनरोपयोगी ऊर्जा का संदेश प्रसारित किया। पुनरोपयोगी ऊर्जा पर निबंध, प्रश्नोत्तर, वाद-विवाद और चित्रकला प्रतियोगिताएं आयोजित की गयीं। इस अवसर पर डाक विभाग ने एक डाक टिकट भी जारी किया।

ग्रिड के अनुकूल पुनरोपयोगी ऊर्जा

मंत्रालय ने 2012 तक देश भर में ग्रिड पुनरोपयोगी विद्युत से 10 प्रतिशत अतिरिक्त बिजली उत्पादन क्षमता का लक्ष्य निर्धारित किया है। दसवीं योजना के दौरान 3075 मेगावाट क्षमता की अतिरिक्त रूप से योजना बनाई गयी है। पिछले वर्ष देश में कचरे, लघु जल विद्युत परियोजना और पवन के जरिए 1200 मेगावाट से ज्यादा क्षमता अतिरिक्त रूप से अर्जित की गयी। यह उपलब्धि बाजार से हुए निवेश से हासिल की गयी।

पवन ऊर्जा कार्यक्रम

इस वर्ष पवन ऊर्जा क्षमता अतिरिक्त रूप से 1100 मेगावाट तक पहुंच गयी, जबकि पिछले वर्ष यह 815 मेगावाट ही थी। इसके साथ ही भारत की पवन ऊर्जा क्षमता लगभग 3500 मेगावाट तक पहुंच गयी। इस प्रकार भारत ने डेनमार्क को पीछे छोड़ते हुए जर्मनी, अमरीका और स्पेन के बाद चौथा स्थान हासिल कर लिया है। भारत में पहला पवन टरबाइन तमिलनाडु के तिरूनेलवेली जिले के चेट्टीकुलम में दो मेगावाट की क्षमता का लगाया गया, जो एशिया में सबसे बड़ी इकाई है।

शहरी और औद्योगिक कचरे से ऊर्जा की प्राप्ति के लिए लुधियाना में गोबर से चलने वाला एक मेगावाट का संयंत्र स्थापित किया गया है। इसी तरह आंध्र प्रदेश में पाम आयल उद्योग के कचरे से चलने वाला तीन मेगावाट का संयंत्र स्थापित किया गया है। ये दोनों भारत में अपनी तरह के पहला संयंत्र हैं और इसी तरह के कचरे से चलने वाले संयत्रों में अग्रणी होंगे।

नई पहल

ग्रामीण शहरी, औद्योगिक और व्यावसायिक क्षेत्रों और यातायात में सचल और अचल उपयोगों के लिए पुनरोपयोगी ऊर्जा प्रणाली और उपकरण लगाने के लिए अनुसंधान, विकास, प्रदर्शन, व्यवसायीकरण और स्थापन पर सर्वाधिक जोर दिया गया है। मोटर-वाहन तथा बिजली, पानी और इनके मिले-जुले उपयोग से चलने वाले मोटर-वाहनों के वैकल्पिक ईंधन के रूप में इसके उपयोग पर जोर दिया जा रहा है। राष्ट्रीय हाईड्रोजन ऊर्जा बोर्ड द्वारा रतन टाटा के नेतृत्व में एक संचालन समिति का गठन किया गया है। यह समूह शीघ्र ही जनता, निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र में भागीदारी और हाइड्रोजन के इस्तेमाल की अंतिम कार्य योजना तैयार करेगा। बायोगैस कार्यक्रम में गाय के गोबर पर आधारित ऊर्जा संयंत्र शामिल किया गया है। ✦

ऊर्जा नीति - वैकल्पिक स्रोतों का बढ़ता महत्व

भारत डोगरा

कुछ समय पहले इराक में विद्रोहियों के बढ़ते हमलों और विशेषकर उनके द्वारा तेल की पाइपलाइनों को बुरी तरह क्षतिग्रस्त करने के कारण तेल के अंतर्राष्ट्रीय बाजार में अनिश्चय की स्थिति उत्पन्न हो गई। तेल की अंतर्राष्ट्रीय कीमत 50 डॉलर प्रति बैरल को पार कर कई दशकों की वृद्धि से भी आगे निकलने लगी। यदि इसे केवल अल्पकालीन संकट माना जाता तो कोई विशेष चिंता की बात नहीं थी। पर तेल के अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कई ऐसी दीर्घकालीन प्रवृतियां भी नजर आ रही हैं जो ऊर्जा के इस सबसे प्रचलित स्रोत की नियमित व पर्याप्त उपलब्धि पर सवालिया निशान लगा रही हैं।

हाल के वर्षों में जहां विश्व में तेल की खपत काफी तेजी से बढ़ी है, वहा तेल के नए भंडार बहुत कम मिले हैं। छोटे–मोटे नए भंडार तो मिले है, पर कोई विशाल नए भंडार नहीं मिले हैं। इसके अतिरिक्त जो पहले से ज्ञात सबसे बड़े–भंडार हैं, वहां राजनीतिक कारणों से काफी अनिश्चय की स्थिति बनती जा रही है। इराक में कानून–व्यवस्था की स्थिति बहुत चिंताजनक बनी हुई है। ईरान व अमेरिका में टकराव के आसार बने रहे हैं। सऊदी अरब में आतंकवादी व कट्टरवादी तत्वों से खतरा बढ़ रहा है। सूडान में भारतीय तेल कंपनियों ने अपनी विशेष उपस्थिति दर्ज कराई है पर वहां भी हाल के समझौते के बावजूद आंतरिक हिंसा और अंतर्राष्ट्रीय दबावों के कारण स्थिति काफी अनिश्चित होती जा रही है।

तेल भंडारों के कुछ मुख्य क्षेत्रों में न केवल हिंसा व तनाव व्याप्त है, अपितु विद्रोही तत्व विशेष तौर पर तेल की पाइपलाईनों को अपना निशाना बना रहे हैं। इसका कुछ हद तक कारण यह है कि वे तेल के महत्वपूर्ण निर्यात को नुकसान पहुंचाकर सरकार को अस्थिर करना चाहते हैं। कुछ विद्रोही तत्व यह भी महसूस करते हैं कि तेल जैसे मूल्यवान संसाधन के लाभ से वंचित रखा गया अतः इसके विरोध में वे पाइपलाइन को नुकसान पहुंचाते हैं।

इस तथ्य के अवरोधों को भारत को उस समय ध्यान में रखना पड़ेगा जब वह ईरान से पाकिस्तान के रास्ते आने वाली पाइपलाइन पर अंतिम निर्णय लेगा। यह पाइपलाइन बलूचिस्तान के उस क्षेत्र से भी गुजरेगी जहां विद्रोही तत्व काफी सक्रिय हैं। इसमें बलूचिस्तान को एक स्वतंत्र देश बनाने में सक्रिय विद्रोही और अलकायदा जैसे संगठनों से जुड़े आतंकवादी भी हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि अभी कई वर्षों तक तेल ही ऊर्जा का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत बना रहेगा। इस संदर्भ में भारत का जो भंडार लगातार खोजने होंगे। तेल के नए स्रोत पहले से मालूम है उनका बेहतर उपयोग करना होगा। साथ ही उसे ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतो पर भी अधिक ध्यान देना उचित है। इन स्रोतों के बारे में प्रायः यह कहा जाता है कि यह अधिक महंगे हैं। पर कुछ ही वर्षों में इनकी लागत में काफी कमी आ सकती है और भविष्य में यह प्रयास और सफल हो सकते हैं। फिर जैसे–जैसे तेल के भंडार समाप्त हो रहे है, वैसे–वैसे तेल कंपनियों को अधिक कठिन क्षेत्रो में उपलब्ध तेल और व्यापक स्रोतों की कीमत में आज जो अधिक फर्क है, वह भविष्य में कम होने की पूरी संभावना है। इतना ही नहीं, जैसे–जैसे जलवायु बदलाव का संकट विकट होगा, वैसे–वैसे पर्यावरण के लिए अधिक स्वीकृत माने जाने वाले वैकल्पित स्रोतों के लिए अधिक सहायता या सब्सिडी मिलने की संभावना है जिससे इनकी लागत और कम हो सकती है।

हाल के वर्षों में वैकल्पिक स्रोत के रूप में सौर ऊर्जा सबसे अधिक चर्चित रही है। इस समय सौर फोटोवाल्टेक से विश्व स्तर पर ऐसे लगभग दस लाख परिवारों को बिजली मिल रही है जिन्हें पहले बिजली उपलब्ध नहीं थी। सौर ऊर्जा में कई तरह के तकनीकी सुधार से लागत पहले की अपेक्षा तो कम हुई है, पर उतनी नहीं जितनी उम्मीद थी या इसके तेज प्रसार के लिए जितनी जरूरत समझी गई। सौर ऊर्जा चालित कुछ उपकरण लोकप्रिय होने लगे हैं पर सरकार द्वारा दी जाने वाली सब्सिडी हटाने पर यह स्वीकृति कम हो जाती है। दूसरी ओर बहुत दुर्गम गांवों में जहां बिजली उपलब्ध नहीं थी वहां सौर ऊर्जा से बिजली उपलब्ध करवाने में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई और लोगों के दैनिक जीवन की कई कठिनाईयां दूर हो सकीं। लद्दाख के कुछ गांवों से ऐसे अनुभव सामने आए हैं। एक संस्था ने तिलोनिया (राजस्थान) में ग्रामीण युवाओं को सौर ऊर्जा पर अच्छा प्रशिक्षण दिया है।

शिक्षा स्तर पर देखें तो पवन ऊर्जा प्रगति सौर ऊर्जा से भी अधिक उत्साहवर्धक रही है। इस समय 45 देशों के लगभग 140 लाख परिवार पवन विद्युत प्राप्त कर रहे हैं। पवन विद्युत के क्षेत्र में सभवतः सबसे तेज प्रगति जर्मनी ने की है। वहां सरकारी नीतियों ने भी इस वैकल्पिक स्रोत की व्यापक स्वीकृति व तेज प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

हमारे देश के पहाड़ी क्षेत्रों में पनचक्की परंपरागत तकनीक का एक ऐसा उदाहरण है जहां बिना बाहरी सहायता के ही ऊर्जा छोटे–छोटे नदी–नालों की बहती धारा से प्राप्त कर ली जाती है। इससे स्थानीय लोगों को रोजगार भी मिलता है। ऊर्जा के इतने सहज और सुन्दर स्रोत का महत्व पहचाना नहीं जा सका। नीतियां कारगर न होने के कारण कई पर्वतीय क्षेत्रों में पनचक्कियों की संख्या तेजी से कम होने लगी। पर अब कुछ स्थानों पर भूल–सुधार हुआ है और पनचक्कियों की सहायता के लिए सरकार आगे आ रही है साथ ही इनमें कुछ संशोधन कर छोटे स्तर पर गांव के लिए बिजली उत्पादन का कार्य भी कुछ स्थानों पर आरंभ हुआ है।

वैकल्पिक ऊर्जा के एक सहज स्रोत गोबर गैस में एक समय बहुत व्यापक संभावनाएं देखी जा रही थी पर इस कार्य को आगे ले जाने में अपेक्षित सफलता प्राप्त नहीं हुई। मूलतः एक अच्छा वैकल्पिक स्रोत है और इसके व्यवहारिक पक्षों पर अधिक ध्यान दिया जाए तो बेहतर सफलता मिल सकती है। ✱

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

आणविक ऊर्जा के क्षेत्र में प्रमुख फैसले तथा पहलें

आणविक ऊर्जा विभाग की ओर से बिजली और गैर–बिजली क्षेत्र के लिए आणविक ऊर्जा के दोहन का प्रयास निरंतर जारी है।

आणविक ऊर्जा के माध्यम से वर्ष 2004–05 के दौरान 1,701 करोड़ यूनिट बिजली का उत्पादन किया गया। सरकार ने वर्ष 2000–01 से लेकर 2003–04 तक देश के पांच आणविक ऊर्जा केन्द्रों को विशिष्ट कार्यनिष्पादन के लिए स्वर्ण पुरस्कार, रजत पुरस्कार और प्रमाण पत्र प्रदान किए। नरौरा आणविक ऊर्जा केन्द्र की दूसरी इकाई की संचालन अवधि सबसे लम्बी रही। यह यूनिट 21 सितंबर, 2003 से लेकर 19 जून 2004 तक लगातार 272 दिन तक संचालित रही। नरौरा आणविक ऊर्जा केन्द्र की पहली और दूसरी इकाइयों ने भी 238 दिन का कार्य संचालन पूरा किया। तारापुर आणविक ऊर्जा केन्द्र की पहली इकाई में फिर से ईंधन भरने का काम 26 दिनों में पूरा किया गया।

फिलहाल देश में नौ नए आणविक ऊर्जा संयंत्र निर्माणाधीन हैं, जिनसे अतिरिक्त 4460 मेगावाट बिजली का उत्पादन हो सकेगा। 540 मेगावाट यूनिट क्षमता वाले तारापुर आणविक ऊर्जा संयंत्र का काम 6 मार्च, 2005 को पूरा हो गया है और ऐसी संभावना है कि निर्धारित कार्यक्रम से पहले ही इसकी शुरूआत हो जाएगी। यह 540 मेगावाट क्षमता वाला देश का पहला आणविक ऊर्जा संयंत्र है जो स्वदेशी प्रौद्योगिकी द्वारा तैयार किया गया है। दसवीं और ग्यारहवीं योजना के दौरान क्रमशः कुल 1300 मेगावाट और 5915 मेगावाट अतिरिक्त बिजली उत्पादन की योजना है। इन रिएक्टरों का निर्माण किया जा रहा है। स्वदेशी प्रौद्योगिकी के अलावा, आयातित प्रौद्योगिकी पर आधारित तीन स्तरों वाले आणविक ऊर्जा कार्यक्रम के अंतर्गत लाइट वाटर रिएक्टरों की स्थापना की योजना है। तमिलनाडु के कुडानकुलम में इस प्रकार के दो रिएक्टरों का निर्माण कार्य जारी है। प्रधानमंत्री ने 23 अक्तूबर, 2004 को तमिलनाडु के कलपक्कम में 500 मेगावाट वाले पहले फास्ट ब्रीडर रिएक्टर के निर्माण कार्य का शुभारंभ किया था।

आणविक कृषि के क्षेत्र में आणविक ऊर्जा विभाग कृषि मंत्रालय के स्टेट फार्म्स कारपोरेशन ऑफ इंडिया के साथ मिलकर जारी किए गए बीजों की प्रजातियों का उत्पादन बढ़ाने और बड़े पैमाने पर कृषि को बढ़ावा देने के लिए काम कर रहा है। कृषि मंत्रालय द्वारा व्यावसायिक कृषि के लिए ट्रांबे मूंगफली की एक नई प्रजाति टीजी–37 ए जारी करके उसे अधिसूचित किया गया है। मूंगफली की दूसरी प्रजाति टीजीपी–41 को पूरे भारत में व्यावसायिक कृषि के लिए जारी किया गया है। अब तक कुल 24 प्रकार की फसलों की प्रजातियों को जारी करने के बाद उन्हें व्यावसायिक कृषि के लिए अधिसूचित किया गया है। महाराष्ट्र राज्य बीज समिति ने ट्रांबे में विकसित की गई सोयाबीन की प्रजाति–टीएएमएस–38 को विदर्भ क्षेत्र में व्यावसायिक खेती के लिए जारी कर दिया है।

प्याज, दाल, रवा और हल्दी के प्रसंस्करण के लिए महाराष्ट्र में नासिक के निकट कम विकिरण वाला प्रसंस्करण संयंत्र, कृषि उत्पादन सुरक्षा केन्द्र और नवी मुंबई में वाशी मसाले के प्रसंस्करण के लिए एक अधिक विकिरण वाला प्रसंस्करण संयंत्र काम कर रहे हैं। बहुविध विकिरण संयंत्रों के लिए 13 उद्यमियों के साथ समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इनमें सहकारिता क्षेत्र का भी एक उद्यमी शामिल है। पूर्वी क्षेत्र में मेसर्स ऑर्गेनिक ग्रीन फूड्स लिमिटेड, कोलकाता द्वारा निजी क्षेत्र में पांच गामा विकिरण के व्यापारिक संयंत्रों की शुरूआत अगस्त, 2004 में की गई। इस वर्ष तीन और भी अधिक परियोजनाएं शुरू होने की संभावना है।

शहरी अथवा ग्रामीण कचरा प्रबंधन के क्षेत्र में वडोदरा में जल–मल के लिए हाइजनाइजेशन रिसर्च इरेडिएटर द्वारा अगले वर्ष उपचार का काम शुरू हो जाएगा। इस उपचारित अवमल का परीक्षण किया गया है और इसे खेतों में खाद के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। रसोईघरों, सब्जी बाजारों, खेतों और बूचड़खाने से निकलने वाले जैविक कचरे को उपचारित करने के लिए प्रतिदिन एक टन से लेकर 15 टन क्षमता वाले छः संयंत्र स्थापित किए गए हैं। इनमें खेती के लिए अधिक गुणवता वाले खाद और ईंधन के रूप में इस्तेमाल के लिए मीथेन प्राप्त होती है। कई और भी संयंत्रों की स्थापना की प्रक्रिया चल रही है। बड़ी क्षमता वाले संयंत्रों पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में देश में टाटा मेमोरियल अस्पताल, मुंबई के साथ 19 क्षेत्रीय कैंसर सेंटरों के एक नेटवर्क का प्रस्ताव है। कैंसर पीड़ितो को देशव्यापी सेवा प्रदान करने के उद्देश्य से यह नेटवर्क उपग्रह के माध्यम से टेलीमेडीसिन संपर्क से जुड़ा होगा, इसके पहले चरण में टाटा मेमोरियल अस्पताल को डा. बी.के. वालवालकर अस्पताल, डर्बन के साथ जोड़ा गया है। पूर्वोतर राज्यों के जिला अस्पतालों को आपस में जोड़ा गया है। टेलीपैथोलॉजी का काम भी किया जा रहा है।

कलपक्कम में रिवर्स ऑस्मोसिस प्रणाली पर आधारित प्रतिदिन 18 लाख लीटर क्षमता वाले पेयजल तैयार करने के संयत्र का काम प्रगति पर है। एक मल्टी स्टेज फ्लेश डिस्टीलेशन पर आधारित प्रतिदिन 45 लाख लीटर की क्षमता वाले संयंत्र का काम भी प्रगति पर है। रिवर्स आस्मोसिस संयंत्र की प्रौद्योगिकी गांवों में पेयजल तैयार करने वाले सात समूहों को उपलब्ध कराई गई है। लक्षद्वीप और दिव में समुद्री जल से लवण हटाने के संयंत्र लगाने के लिए बातचीत चल रही है। आणविक ऊर्जा विभाग और विश्वविद्यालयों के बीच मजबूत संपर्क कायम करने के साथ ही आधारभूत अनुसंधान और प्रौद्योगिकी के रूप में उनके बदलाव के लिए कई कार्यक्रम शुरू किए गए हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग कंसोर्टियम, नेशनल इंस्टीट्यूट इसके प्रमुख उदाहरण हैं। ✸

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

भारत में जल विद्युत की अपार संभावनाएं

आशुतोष दीक्षित

भारत में बिजली उत्पादन और उपयोग सन् 1897 में दार्जिलिंग से शुरू हुआ। पहला विद्युत संयंत्र जल विद्युत पर आधारित था। इसके बाद 1902 में कर्नाटक के शिवसमुद्रम् में दूसरा जल विद्युत संयंत्र स्थापित किया गया। लेकिन इसके बाद भारत में जल विद्युत उत्पादन की अनंत संभावनाओं का अनुमान भर लगाया गया, किंतु जल–विद्युत उत्पादन की उपेक्षा की जाती रही। ताजा स्थिति के अनुसार वर्तमान में देश में कुल 534.30 अरब यूनिट बिजली उत्पादन में से जल विद्युत का योगदान केवल 63.773 अरब यूनिट ही है। जबकि क्षमता के बारे में अनुमान लगाया गया है कि भारत में एक लाख मेगावाट क्षमता की जल विद्युत परियोजनाएं स्थापित करने की आदर्श स्थिति है। ताप विद्युत, परमाणु ऊर्जा अथवा बिजली उत्पादन के अन्य संसाधनों की तुलना में जल विद्युत उत्पादन सस्ता और आसान होता है। इसलिए दुनिया के कई देशों में जल विद्युत को ही प्राथमिकता दी जाती है। पर्यावरण संबंधी दृष्टि से भी जल विद्युत अन्य संसाधनों की अपेक्षा निरापद और पर्यावरणमित्र होती है।

पांचवी पंचवर्षीय योजना के बाद भारत में लघु और मध्यमस्तरीय जल विद्युत परियोजनाओं की ओर ध्यान दिया है। वर्तमान में देश में 496 लघु और 158 लघुत्तम जल विद्युत परियोजनाएं है, जिनकी कुल क्षमता लगभग दो हजार मेगावाट है। दसवीं योजना में जो सर्वेक्षण किये गये, उनके अनुसार देश में 4215 स्थलों पर कुल 10,279 मेगावाट विद्युत उत्पादन की क्षमता का पता लगाया गया है। इसके लिए सरकार ने निजी क्षेत्र को प्रोत्साहन देकर जल विद्युत उत्पादन में सहभागी बनाया है। इसके अच्छे परिणाम भी सामने आए हैं।

स्वतंत्र भारत में निजी क्षेत्र भोरुका पॉवर कॉर्पोरेशन लिमिटेड ने 18 मेगावाट की शिवपुर जल विद्युत परियोजना के साथ पहल की। इसका वर्ष 2007 तक लघु जल विद्युत परियोजनाओं की स्थापित क्षमता, 100 मेगावाट करने का लक्ष्य है। यह कंपनी कर्नाटक पॉवर कॉर्पोरेशन लिमिटेड की ट्रांसमिशन लाइन के माध्यम से व्हीलिंग एवं बैंकिंग व्यवस्था के अंतर्गत कर्नाटक में विभिन्न उपभोक्ताओं को बिजली बेचती है।

उत्पादन उपकरणों के अभिकल्प, विनिर्माण एवं प्रौद्योगिकी में भारतवर्ष पूर्णतः आत्मनिर्भर है। बी.एच.ई.एल. विशाल, मध्यम एवं लघु जल विद्युत परियोजनाओं के उपकरणों का डिजाइन, चालूकरण एवं विक्रय पश्चात सेवा के क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निभा रही है। लघु जल विद्युत उपकरणों के क्षेत्र में बी.एच.ई.एल. के अलावा कई कंपनियां योगदान दे रही हैं।

अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय द्वारा भारतीय अक्षय ऊर्जा विकास संस्था मर्यादित (इरेडा) की स्थापना की गई है। इसका उद्देश्य पर्वतीय जलधाराओं, सिंचाई के बांधों एवं नहरों में उपलब्ध जल का उपयोग कर देश में लघु जल विद्युत के विकास हेतु वित्तीय एवं तकनीकी सहायता देकर ग्रामीण एवं दूर–दराज क्षेत्रों में ऊर्जा की आवश्यकता पूरी करने में मदद मिलेगी।

भारत सरकार द्वारा लघु जल विद्युत के त्वरित विकास के लिए समुचित नीतिगत कदमों एवं मार्गदर्शी सिद्धांतों के माध्यम से निजी क्षेत्र की सहभागिता को प्रोत्साहित किया जा रहा है। मंत्रालय द्वारा मई–2006 तक निजी क्षेत्र में 25 मेगावाट क्षमता तक की जल विद्युत परियोजनाएं स्थापित करने के लिए विभिन्न आकर्षक योजनाएं घोषित की गई है। प्रोत्साहन योजनाओं में पुरानी परियोजनाओं का नवीनीकरण, आधुनिकीकरण एवं क्षमता वृद्धि भी शामिल है। कई राज्य निजी क्षेत्र के लिए व्हीलिंग, बैंकिंग, तीसरे पक्ष को बिजली बेचने या पुनः खरीद के प्रावधान करते हुए लघु जल विद्युत को प्रोत्साहित कर रहे हैं। विश्व बैंक ने इरेडा (भारतीय अक्षय ऊर्जा विकास संस्था मर्यादित) के माध्यम से निजी क्षेत्र के लिए पहले 100 तथा बाद में 200 मेगावाट की अतिरिक्त क्षमता के लिए ऋण स्वीकृत किया।

'इरेडा' ने 31 मार्च, 2004 तक कुल 1514 करोड़ रुपये के ऋण मंजूर एवं 582 करोड़ रुपये ऋण वितरित किए हैं। 'इरेडा' की सहायता निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के लिए उपलब्ध है अर्थात् यह राज्य विद्युत मंडल एवं सरकारी विभागों के लिए नहीं है।

विश्व में सभी स्रोतों से प्रतिवर्ष लगभग 940 करोड़ टन तेल की खपत के समतुल्य ऊर्जा प्राप्त की जाती है। इसमें से मात्र 2.3 प्रतिशत ऊर्जा जल विद्युत परियोजनाओं से प्राप्त की जाती है। बिजली के कुल वार्षिक उत्पादन 13,652 टेरा वाट अवर (TWH) का लगभग 19 प्रतिशत जल विद्युत से प्राप्त किया जाता है। अनुमान है कि वर्ष 2050 तक बिजली की खपत 45,000 टेरा वाट अवर हो जाएगी, जिसकी आपूर्ति बहुत बड़ी चुनौती होगी। इस परिप्रेक्ष्य में लघु जल विद्युत एवं अन्य अपारंपरिक ऊर्जा स्रोतों के विकास पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक बढ़ गई है।

आज तेजी से हो रहे विकास ने बिजली की मांग बढ़ा दी है। लेकिन मांग की तुलना में उत्पादन कम है। इसीलिए बिजली संकट देशव्यापी समस्या है। इस संकट का समाधान खोजने और मांग आपूर्ति के अंतर को पाटने की दिशा में काम न करते हुए हमारे सत्तारूढ़ और विरोधी दल मध्यप्रदेश में लघु और लघुतम जल विद्युत परियोजनाओं की अपार संभावना है। एक निजी सर्वेक्षण के अनुसार 200 मेगावाट क्षमता की कुल सवा तीन सौ परियोजनाएं ताप विद्युत परियोजनाओं की तुलना में कम लागत में एक वर्ष में मध्यप्रदेश में लगायी जा सकती है। तवा परियोजना पर निजी क्षेत्र में एच.ई.जी. ने 8.5 मेगावाट जल विद्युत उत्पादन की जो इकाई कुछ वर्ष पहले स्थापित की थी, वह निरंतर उत्पादन कर रही है। कई बार तो यह इकाई अपनी स्थापित क्षमता से 120 और 125 प्रतिशत तक ज्यादा उत्पादन करती है। इसके बाद भी राज्य विद्युत परियोजनाएं प्रारंभ करने की कोई योजना नहीं बनायी। इससे साफ है कि सरकारें बिजली संकट का हल करने की बजाय केवल संकट का राजनीतिक दोहन ही करना चाहती है। लेकिन इससे विकास प्रक्रिया बाधित होती है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

विद्युत के क्षेत्र में संयुक्त प्रगतिशील सरकार के प्रमुख फैसले तथा पहलें

पांच वर्षों में प्रत्येक घर में बिजली पहुंचाने के राष्ट्रीय साझा न्यूनतम कार्यक्रम के लक्ष्य को पूरा करने के लिए राजीव गांधी विद्युतीकरण योजना को मंजूरी दे दी गई है। इस योजना को ग्रामीण विद्युतीकरण निगम (आरईसी) द्वारा लागू किया जाएगा।

10वीं योजना अवधि के दौरान 5 करोड़ रुपए की सब्सिडी से योजना के पहले चरण को लागू करने की स्वीकृति मिल गई है।

राष्ट्रीय बिजली नीति

विद्युत अधिनियम 2003 के खंड 3 के तहत सरकार को विद्युत प्रणाली के विकास के लिए समय–समय पर राष्ट्रीय विद्युत नीति तथा शुल्क नीति तैयार एवं प्रकाशित करनी होती है। अधिनियम की अपेक्षाओं के अनुसार नीति को राज्य सरकारों, केन्द्रीय बिजली प्राधिकरण तथा अन्य हितधारकों से सलाह करने के बाद तथा केन्द्रीय विद्युत विनियामक आयोग के सुझावों पर विचार करने के बाद तैयार किया गया तथा 12 फरवरी, 2005 को अधिसूचित किया गया।

अधिनियम के अनुसार, अपने कार्यों को पूरा करने के लिए विनियामक आयोग इन्हीं नीतियों का सहारा लेगा। राष्ट्रीय बिजली नीति के अनुसार, केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण के सहयोग योजना तैयार की जाएगी।

राष्ट्रीय विद्युत नीति का लक्ष्य विद्युत क्षेत्र में तेजी से विकास लाना, सभी क्षेत्रों में बिजली उपलब्ध कराना तथा उपभोक्ताओं एवं अन्य दावेदारों के हितों की रक्षा करना है। इस नीति का उद्देश्य अगले पांच वर्ष में प्रत्येक घर में बिजली पहुंचाना, बिजली की मांग को 2012 तक पूरा करना, विशेष मानकों की भरोसेमंद तथा गुणवत्ता वाली बिजली की आपूर्ति, 2012 तक प्रति व्यक्ति बिजली की उपलब्धता को 1000 यूनिट से अधिक करना, 2012 तक जरूरत के लिए कम से कम एक यूनिट प्रत्येक घर में प्रतिदिन बिजली देना, बिजली को व्यावसायिक तथा धन उपार्जन करने वाला क्षेत्र बनाना एवं उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करना है। विद्युत अधिनियम, 2003 की समीक्षा का वायदा पूरा किया जा रहा है तथा हितधारकों की खर्चा वहन करने तथा ग्रामीण गरीबों के लिए बिजली की उपलब्धता संबंधी चिंताओं को विद्युत नीति एवं शुल्क नीति के तहत सुलझाने की कोशिश की जा रही है।

बिजली खरीदने के लिए प्रतिस्पर्धी बोली व्यवस्था

विद्युत अधिनियम 2003 के अनुसार विनियामक आयोग, शुल्क को अपनायेगा बशर्ते कि केन्द्र सरकार के द्वारा दिशा–निर्देश के अनुरूप बोली लगाने की पारदर्शी प्रक्रिया से इन्हें निर्धारित किया गया हो। इसका उद्देश्य शुल्क निर्धारण की लागत तथा पहुंच व्यवस्था को समाप्त करना है और आशा है कि प्रतिस्पर्धी व्यवस्था से निजी क्षेत्रों को निवेश करने का प्रोत्साहन मिलेगा। 19 जनवरी, 2005 को केन्द्रीय विनियामक आयोग तथा अन्य प्रमुख व्यक्तियों से सलाह के बाद केन्द्र सरकार ने वितरण लाइसेंस के द्वारा बिजली उपलब्ध कराने के लिए प्रतियोगी बोली के जरिए शुल्क निर्धारण के दिशा–निर्देश जारी किए हैं।

विद्युत उत्पादन क्षेत्र में वृद्धि

वर्ष 2004–05 के दौरान देश में बिजली का कुल उत्पादन 587.365 अरब यूनिट था जबकि 2003–04 में 558.336 अरब यूनिट था। इस प्रकार इसमें 5.2 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है।

वर्ष 2004–05 के दौरान, पूरे भारत में प्लांट लोड फैक्टर (पीएलएफ) 74.8 प्रतिशत था, जबकि वर्ष 2003–04 के दौरान 72.7 प्रतिशत था। इस क्षेत्र में 2.1 प्रतिशत का सुधार हुआ है।

पन–बिजली क्षेत्र में पहल

वर्ष 2003–04 के दौरान 50.000 मेगावाट पन–बिजली के लिए पहल शुरू की गयी। इसके तहत 16 राज्यों में फैली 1622 परियोजनाओं के पीएफआर तैयार करने का कार्य केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण को सौंपा गया। इस कार्य में प्राधिकरण, नोडल एजेंसी के रूप में और केन्द्र / राज्यों की सात एजेंसियों सलाहकार के रूप में शामिल हैं। प्राधिकरण के द्वारा अगस्त 2004 में कुल 47,930 मेगावाट की स्थापना क्षमता वाली 162 योजनाओं के पीएफआर तैयार करने का पूरा कर लिया गया है।

पीएफआर तैयार करने के सिलसिले में 2.50 रुपये प्रति किलो वाट आवर शुल्क से कम की तथा 34,020 मेगावाट की स्थापना क्षमता वाली 78 परियोजनाओं को विस्तृत परियोजना रिपोर्ट (डीपीआर) तैयार करने के लिए चुना गया। 27816 मेगावाट क्षमता की 57 योजनाओं को डीपीआर मेगावाट क्षमता की 57 योजनाओं को डीपीआर तैयार करने के लिए केन्द्रीय बिजली क्षेत्र की इकाइयों (सीपीएयू) और राज्यों की विद्युत उपयोग कर्ता इकाइयों को सौंपा जा चुका है। इसके लिए संबंधित राज्यों की सहमति भी ली जा चुका है। 415 मेगावाट क्षमता की सात परियोजनाओं को राज्य द्वारा स्वतंत्र बिजली निर्माताओं का डीपीआर तैयार करने के लिए सौंपा गया है।

परियोजनाओं के लिए वित्त की व्यवस्था

मंत्रालय ने स्वतंत्र बिजली उत्पादकों (आईवीपी) की परियोजनाओं के लिए आसानी से पैसा उपलब्ध कराने के वास्ते तथा उनके सामने

आ रही कठिनाइयों का निपटारा करने के लिए संस्थानों ने अंतर–संस्थागत दल के माध्यम से वित्तीय संस्थानों के साथ बैठकें की। इन बैठकों में बैंकों के वरिष्ठ प्रतिनिधि एवं बिजली मंत्रालय के प्रतिनिधि भी शामिल थे। परियोजनाओं के विकास तथा वित्तीय संस्थानों से बकाया राशि के मामले सुलझाने के लिए यह अंतर–संस्थागत दल एक कारगर मंच है। 11 स्वतंत्र बिजली उत्पादकों की 4000 मेगावाट की स्थापना क्षमता वाली योजनाओं की वित्तीय जरूरतों को देखते हुए जनवरी 2004 में 15000 करोड़ रुपये का निवेश सुलभ कराया गया। कुल 11632 मेगावाट की स्थापना क्षमता रखने वाले 11 स्वतंत्र बिजली उत्पादकों की शीघ्र पैसा उपलब्ध कराने पर विचार किया जा रहा है।

सात नए प्रस्तावों के लिए निवेश की मंजूरी

विद्यांचल पारेषण प्रणाली के निवेश को मंजूरी 23 जुलाई, 2004 को दे दी गई। अनुमान है कि इस पर 596.47 करोड़ रुपए की लागत आयेगी। इस निवेश मंजूरी से 36 महीने के भीतर पूरा कर लिया जायेगा। यह पारेषण योजना पश्चिमी क्षेत्र के उपभोक्ताओं के लिए बिजली की आपूर्ति और वितरण का काम आसान बनायेगी।

601.90 करोड़ रुपये की सिपात एसटीपीएस पारेषण व्यवस्था के लिए निवेश को मंजूरी 23 अगस्त, 2004 को दी गई थी। यह पारेषण योजना सिपात एस टीपीएस चरण–II से बिजली से निष्क्रमण तथा पश्चिमी क्षेत्र के उपभोक्ताओं के लिए बिजली के वितरण का काम करेगी।

सिपात एसटीपीएस चरण–II से जुड़े 177.93 करोड़ रुपये की पारेषण व्यवस्था में निवेश को मंजूरी 12 अक्तूबर, 2004 को दी गई थी। पारेषण योजना कहलगांव चरण–II से बिजली की निष्क्रमण तथा पश्चिमी पूर्व एवं पूर्वात्तर क्षेत्र के लिए बिजली का वितरण करेगी।

दक्षिण ग्रिड के मजबूतीकरण–III व्यवस्था के लिए 26 अक्तूबर, 2004 को पूरा निवेश मंजूरी दे दी गई। इसे 284.78 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से पूरा कर लिया जायेगा। पारेषण की योजना मौजूदा पारेषण नेटवर्क को मजबूत करेगी तथा क्षेत्र में राष्ट्रीय ग्रिड के निर्माण का काम पूरा करेगी।

कहलगांव चरण–II फेज–II से जुड़े पारेषण प्रणाली में निवेश के लिए 24 जनवरी 2005 को मंजूरी दे दी गई। इसे 464.02 करोड़ रुपये की लागत से पूरा किया जायेगी। यह पारेषण योजना कहलागांव चरण–II फेज–2 से बिजली के निष्क्रमण तथा विभिन्न उपभोक्तओं के लिए वितरण का काम करेगी।

नैवेली लिग्नाइट निगम–II वितरण योजना से जुड़े प्रसार प्रणाली के लिए 11 जनवरी, 2005 को निवेश की मंजूरी दे दी गई है। इस पर संभावित खर्च 691.83 करोड़ रुपये का आयेगा। यह पारेषण योजना एनएलसी–वितरण योजना से बिजली के निष्क्रमण तथा दक्षिणी क्षेत्र के उपभोक्ताओं को बिजली वितरण करेगी।

कैगा–3 एवं 4 योजना से जुड़े पारेषण प्रणाली के लिए निवेश को 29 मार्च, 2005 को 588.25 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से पूरा करने के लिए मंजूरी मिल गई है। पारेषण योजना कैगा परमाणु बिजली योजना से बिजली के निष्क्रमण तथा दक्षिण क्षेत्र के विभिन्न उपभोक्ताओं को बिजली वितरित करेगी।

निजी नीति के लिए सरकार ने एक विशेष समिति का गठन किया है तथा बिजली विकास सुधार का काम तेजी से आगे बढ़ रहा है। इसका उद्देश्य वितरण प्रणाली में तकनीकी–व्यावसायिक सुधार लाना है। दिसंबर 2004 में ऊर्जा संरक्षण पर एक विस्तृत जागरूकता अभियान शुरू किया गया। ✸

विद्युत उत्पादन क्षमता

सीईए से प्राप्त सूचना के अनुसार हाई टैंशन वाले उद्योगों में एक मैगावाट या इससे अधिक की संस्थापित क्षमता के कैप्टिव विद्युत संयंत्रों की कुल क्षमता 31 मार्च, 2004 की स्थिति के अनुसार लगभग 18,740 मेगावाट है और अंतिम रूप से कैप्टिव विद्युत संयंत्रों (सीपीपी) की 31 मार्च, 2005 की स्थिति के अनुसार संस्थापित क्षमता 19,650 मेगावाट के आसपास है।

सीपीपी से विद्युत का उत्पादन संबंधित हाई टेंशन वाले उद्योगों की विद्युत आवश्यकता से अधिक हो सकता है। यदि इसकी यूनिटों को पूरी क्षमता पर तथा पूरे समय के लिए चलाया जाए।

केन्द्रीय वित्त प्राधिकरण (सीईए) में कराए गए अध्ययन के अनुसार **सीपीपी** द्वारा 70 प्रतिशत प्लांट लोड फैक्टर पर लगभग 46,376 मि.यू. विद्युत अतिरिक्त रूप से पैदा की जा सकती है।

कैप्टिव विद्युत उत्पादन यूनिटों को अधिशेष विद्युत को विद्युत अधिनियम, 2003 के प्रावधानों के अनुसार ग्रिड को बेचना संभव है। राष्ट्रीय विद्युत नीति के अनुसार है कि कैप्टिव विद्युत संयंत्रों की अतिरिक्त ऊर्जा के दोहन के लिए लाइसेंसधारियों एवं कैप्टिव विद्युत उत्पादकों के बीच उचित वाणिज्यिक प्रबंध होना आवश्यक है। अब राज्य यूटिलिटी की जिम्मेवारी है कि वे विद्युत अधिनियम, 2003 तथा राष्ट्रीय विद्युत नीति के समर्थनकारी प्रावधानों का उपयोग करते हुए **सीपीपी** के पास उपलब्ध अतिरिक्त विद्युत क्षमता प्राप्त करने की पहल करें। ✸

ग्रामीण विद्युतीकरण

संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार ने पिछले एक वर्ष में ऊर्जा क्षेत्र में विकास तथा सहायता के लिए कई नीतिगत पहलें की हैं। इनमें राष्ट्रीय विद्युत नीति मानक तैयार करना तथा बिजली खरीद के लिए प्रतिस्पर्धी बोलियां आमंत्रित करना और ग्रामीण विद्युतीकरण एवं घरेलू विद्युतीकरण के लिए एक व्यापक कार्यक्रम शामिल है। अपील अधिकरण के अध्यक्ष तथा सदस्यों का चयन कर लिया गया है। राज्य सरकारों के विनियामक आयोगों तथा अन्य हितधारकों से सलाह के बाद शुल्क नीति का मसौदा तैयार कर लिया गया है।

587.3 अरब यूनिट बिजली का रिकार्ड उत्पादन हुआ जो कि लक्ष्य से 100 प्रतिशत से अधिक है। उन्होंने कहा कि यदि गैस उपलब्ध होती तो 90 प्रतिशत से अधिक प्लांट लोड फैक्टर (पीएलएफ) पर गैस स्टेशनों को चालू करने का काम शुरू हो गया होता। गैस की कमी के कारण 60 प्रतिशत पीएलएफ पर ही स्टेशन कार्य कर रहे हैं। ✸

ग्रामीण क्षेत्रों में पोलियो के प्रति जागरूकता

प्रतिभा राज

रोग और रोगी उतने ही प्राचीन हैं, जितनी कि मानव सृष्टि। मानव आरंभ से विभिन्न प्रकार के रोगों का शिकार होता चला आ रहा है साथ ही क्रम चलता आ रहा है, इन रोगों विजय पाने का। हमारी विज्ञान या चिकित्सा विज्ञान व्यवस्था ने आज अनेक रोगों के निवारण हेतु सफल इलाज ढूंढ़ निकाले हैं। परंतु यह 'रोग और रोगी' का क्रम नित् नये रूप लेकर सामने आ जाता है। आज एक रोग का इलाज ढूंढ़ा गया है कि दूसरा रोग सीना ताने सामने खड़ा है।

इसी क्रम का भयंकर रोग है–पोलियो। विकास की आरंभिक अवस्थाओं में यही आदि मानव की अवधारणा रही है कि, रोगोत्पत्ति देवी–देवताओं की नाराजगी, शैतानी शक्तियो (भूत–पिशाच, चुड़ैल) के दुष्प्रभाव एवं ग्रह–नक्षत्रों के कारण होती है, इसलिए रोगों का इलाज झाड़–फूंक, धार्मिक अनुष्ठान, यज्ञ, तप, पूजा–पाठ, जादू–टोना एवं पशु–बलि के द्वारा किया जाता है। परंतु जैसे–जैसे चिकित्सा विज्ञान का विकास होता गया, वैसे–वैसे मानव का ज्ञान भी बढ़ता गया। रोगोत्पत्ति के अधिक से अधिक कारणों का पता लगने लगा। जैसे कि–जीवाणु, विषाणु एवं अन्य सूक्ष्म जीव। इस प्रकार रोगों का इलाज संभव हो सका। 'पोलियो' भी एक भयानक रोग है जो व्यक्ति को जीवन भर के लिए मानसिक व शारीरिक प्रताड़ना देता है, जो एक बच्चे को जीवन भर के लिए सहारे का मोहताज व असामान्य कर देता है, इस रोग से या तो बच्चे की मौत हो जाती है या वह अपाहिज होकर अपनी जिंदगी किसी के सहारे गुजारता है।

पोलियो

पोलियो माइलाइटिस एक तीव्र वायरल इन्फेक्शन है जो कि आरएनए वायरस से होता है, ये शुरूआती तौर से मनुष्य के एलिमेंटरी ट्रेक्ट में पाया जाता है। पर यह वायरस सेंट्रल नरवस सिस्टम को 1 प्रतिशत से प्रभावित करता है।

सन् 1840 में 'हेइन' तथा सन् 1980 में 'मेडिन' ने इसकी पहचान की तथा इसे अस्पताल में पहुंचाया। जबकि पोलियो के कारण की खोज 'लेंड स्टेइनर' और 'पोप्पर' ने 1909 में कराई। एण्डर्स, वेला और रोबिन्स ने सन् 1949 में इस वायरस का सफलतापूर्वक पता लगाया। जिसकी वजह से इन्हें 'नोबेल पुरस्कार' से सम्मानित किया गया।

सन् 1955 में साल्क ने प्रभावशाली विकसित पोलियो वायरस के बारे में लागों को बताया। सन् 1953 से 1957 के बीच में 'सेबिन' ने जीवित वायरस को ओरल वैक्सिीन के रूप में प्रयोग किया। भारत में 1961 में सर्वप्रथम ओरल पोलियो वैक्सीन का प्रयोग आंध्रप्रदेश में किया गया। सन् 1974 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने एक विस्तृत प्रोग्राम इम्यूनाइजेशन के लिए स्थापित किया। सन् 1978 में भारत सरकार ने इम्यूनाइजेशन का विस्तृत प्रोग्राम शुरू किया, जो कि ईपीआई के नाम से जाना जाता है।

सन् 1982 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने ईपीआई की ऊंची प्राथमिकता के लिए एक नियम प्रस्तावित किया जिसका लक्ष्य सन् 1990 तक विश्व के सारे बच्चों को इम्यूनाइज करना था। पोलियो वैक्सीन का सन् 1954 में जबरदस्त प्रयोग किया गया, जिसके कारण इस रोग से काफी हद तक मुक्ति मिली। सन् 1988 में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने पोलियो से देशों को मुक्त करने का प्रण लिया। आज तक सिर्फ अमेरिका ही ऐसा अकेला देश है जो पोलियो से मुक्त है। दक्षिण पेसीफिक भाग में सिर्फ एक ही पोलियो पीड़ित रोगी पाया गया। और सन् 1999 में पोलियो वायरस टाइप–2 पाया गया। उसके बाद तीन साल तक 0 प्रतिशत पाया गया।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के एसईएआर (दक्षिण पूर्वी एशियाई क्षेत्र) में भाग लेने वाले देशों ने पोलियो से मुक्ति का कार्य 1994 में प्रारंभ किया और काफी हद तक सफलता पाई।

सबसे ज्यादा पोलियो की समस्या भारत में रिपोर्ट की गई। पोलियो के विषाणु संबंधित आंत्र विषाणु है– टाईप 1, टाईप 2, टाईप 3। इन सभी तीनों प्रकारों के कारण पक्षाघात होता है। पोलियो विषाणु अत्यंत या अत्यधिक संरचणीय है। संक्रमण और पक्षाघात शुरू होने में लगभग 4–35 दिन का समय लगता है। इसका पारेषण मुख्यतः व्यक्ति से व्यक्ति को मल–मुख के माध्यम से होता है, अर्थात् पोलियो के विषाणु के फैलने के सर्वाधिक संभावना दो सप्ताहों के दौरान संक्रमित बच्चे के द्वारा होती है।

भारत में पोलियो

सन् 1999 में जो 1126 वाइल्ड पोलियो वायरस केसेस रिपोर्ट किए गए। जिसमें से 730 पोलियो वायरस टाइप–3 थे। जबकि 397 टाइप–1 और 11 टाइप–2 थे। भारत ही 1999 में एक ऐसा अकेला देश था जिसमें पोलियो वाइरस टाइप–2 पाया गया। भारत में दिल्ली, बिहार, उ.प्र. पश्चिमी बंगाल में सबसे ज्यादा समस्या पाई गई। इसी वजह से पोलियो उन्मूलन कार्यक्रम भारत में बहुत तेजी से चलाया गया। और भारत अभी तक पोलियो को जड़ से मिटाने के लिए क्रियाशील है। (देखें तालिका)

अध्ययन के उद्देश्य

प्रत्येक कार्य करने के पीछे कोई न कोई उद्देश्य अवश्य रहता है। इस अध्ययन के कुछ उद्देश्य निम्न है–

- पोलियो के विषय में विस्तृत जानकारी प्राप्त करना।

भारत में पोलियो प्रभावित राज्य वर्ष के आधार पर

क्रं. सं.	राज्य	वाइल्ड पोलियो वायरस मामलों की संख्या				
		1998	1999	2000	2001	2002
1.	आंध्रप्रदेश	96	21	–	–	–
2.	असम	1	–	–	1	–
3.	बिहार	158	123	50	27	121
4.	चंडीगढ़	1	2	1	–	1
5.	छत्तीसगढ़	–	–	–	–	1
6.	दादर और नागर हवेली	1	–	–	–	–
7.	दमन और द्वीव	5	–	–	–	–
8.	दिल्ली	47	73	3	3	24
9.	गोवा	2	–	–	–	–
10.	गुजरात	164	9	2	1	24
11.	हरियाणा	39	19	4	5	37
12.	जम्मू कश्मीर	–	–	–	–	1
13.	झारखंड	–	–	–	2	12
14.	कर्नाटक	71	21	8	–	–
15.	केरल	–	–	1	–	–
16.	म.प्र.	107	17	2	–	21
17.	महाराष्ट्र	121	18	7	4	6
18.	उड़ीसा	49	–	–	–	4
19.	पांडिचेरी	2	–	–	–	–
20.	पंजाब	9	4	–	5	2
21.	राजस्थान	63	18	–	–	41
22.	तमिलनाडु	91	7	–	–	–
23.	उत्तर प्रदेश	881	773	179	216	1242
24.	उत्तरांचल	–	–	–	3	14
25.	पश्चिम बंगाल	26	21	8	1	49
	कुल	1934	1126	265	268	1600

**आंकड़े 17 जुलाई 2003 की स्थिति के अनुसार*

- पोलियोग्रस्त व्यक्ति तथा उसके परिवार की समाजिक–आर्थिक स्थिति का पता लगाना।
- पोलियो के प्रति ग्रामीणों की जागरूकता का पता लगाना।

अध्ययन क्षेत्र

अध्ययन के लिए इन्दौर (म.प्र.) शहर से करीब 6 किमी. की दूरी पर पूर्व में 1/2 किमी अंदर स्थित **'पालदा ग्राम'** का चयन किया गया।

अध्ययन के स्रोत

प्राथमिक समंकों का संकलन साक्षात्कार अनुसूची, अवलोकन एवं सामूहिक चर्चा के माध्यम से प्राप्त किया गया जबकि द्वितीयक समंकों का संकलन पत्र–पत्रिकाओं, सरकारी अभिलेखों, प्रतिवेदनों से प्राप्त किया गया।

परिणाम एवं विश्लेषण

पहले स्वास्थ्य सुरक्षा में भारतीयों के लापरवाह रवैये से ही अनेक बीमारियों के कारण प्रतिवर्ष लाखों लोग मरते थे। किंतु आज इस ओर निरंतर प्रयास किये जा रहे हैं। शोध अध्ययन के परिणाम निम्न हैं।

- इस अध्ययन से पता चलता है कि पालदा ग्राम के चयनित परिवारों में 38 प्रतिशत परिवार अन्य पिछड़ा वर्ग के हैं, 24 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जनजाति के हैं, 22 प्रतिशत जाति के हैं तथा 16 प्रतिशत सामान्य वर्ग के हैं।
- इस अध्ययन में 30 प्रतिशत चयनित अशिक्षित तथा 70 प्रतिशत चयनित उत्तरदाता शिक्षित पाये गए। जिसमें 24 प्रतिशत प्राथमिक शिक्षा, 20 प्रतिशत ने माध्यमिक शिक्षा तथा हायर सेकेण्डरी का 16 साथ ही स्नातक व स्नातकोत्तर का प्रतिशत क्रमशः 6 व 4 पाया गया।
- इस अध्ययन से पाया गया कि पालदामें 58 प्रतिशत उत्तरदाता मजदूरी करके जीवन निर्वाह कर रहे हैं, 16 प्रतिशत परिवार नौकरी पेशा, 20 प्रतिशत परिवार स्वयं के व्यवसाय करते हैं जबकि केवल 6 प्रतिशत परिवार ही ऐसे हैं जो कृषि से संबंधित कार्य कर रहे हैं।
- अध्ययन में पाया गया कि 44 प्रतिशत चयनित परिवार की आय 2000–2500 रुपए प्रतिमाह, 36 प्रतिशत 1500–2000 रुपए प्रतिमाह, 12 प्रतिशत की मासिक आय 1000–1500 प्रतिमाह है जबकि 8 परिवारों की मासिक आय 500–1000 रुपए प्रतिमाह है।
- प्रस्तुत शोध प्रबंध पोलियो के विषय में ग्रामीणों की जागरूकता से संबंधित अल्प जानकारी रखते हैं जबकि 10 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जो पोलियो से संबंधित पूर्ण जानकारी रखते हैं।
- अध्ययन के दौरान में पाया गया कि 98 प्रतिशत परिवार पोलियो टीकाकरण के महत्व को जानते है। जबकि 2 प्रतिशत इसके महत्व को नहीं जानते हैं।
- इस अध्ययन में पाया गया कि 38 प्रतिशत परिवारों को पोलियो बीमारी व पोलियो टीकाकरण के महत्व के विषय में जानकारी टी.वी. के माध्यम से प्राप्त हुई, 24 प्रतिशत परिवारों के स्वास्थ्य केंद्र से, 20 प्रतिशत परिवारों को जानकारी माइकिंग के द्वारा तथा 12 प्रतिशत परिवारों को रेडियो के माध्यम से जबकि 6 प्रतिशत परिवारों को जानकारी समाचार पत्र के माध्यम से प्राप्त हुई।
- पल्स पोलियो टीकाकरण अभियान, जो कि आजकल जोरों से चलाया जा रहा है, पोलियो उन्मूलन के लिए एक बेहतर कदम है। अतः शोध अध्ययन में पाया कि 98 प्रतिशत परिवार इस पल्स पोलियो टीकाकरण अभियान से सहमत है जबकि 2 प्रतिशत परिवार ऐसे भी है जो बार–बार के चरण से सहमत नहीं हैं।
- इस अध्ययन में पाया गया कि 5 प्रतिशत परिवारों में केवल 5 परिवार ही ऐसे हैं जहां पोलियो ग्रस्त पाया गया, जिनकी उम्र लगभग 18 वर्ष से अधिक ही है।
- इस अध्ययन में पाया गया कि 5 पोलियोग्रस्त बच्चों में 20 प्रतिशत पोलियो ग्रस्त बच्चे ऐसे हैं जो अपने पैर से संबंधित कोई कार्य नहीं कर सकते जबकि 20 प्रतिशत ऐसे हैं जो हाथ व पैर दोनों से सबंधित कार्य नही कर सकते। तथा 60 प्रतिशत ग्रस्त बच्चे ऐसे हैं जो हाथ व पैर दोनों से कार्य कर सकते हैं।
- इस अध्ययन में पाया गया कि 100 प्रतिशत पोलियोग्रस्त तनाव में

रहते हैं।

- इस अध्ययन में यह भी पाया गया कि 60 प्रतिशत पोलियोग्रस्त व्यक्ति अपनी जीविका चलाने हेतु कार्य कर रहे हैं जबकि पोलियोग्रस्त आज भी दूसरों पर निर्भर हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव

प्रस्तुत शोध के द्वारा अध्ययन से यह ज्ञात होता कि पल्स पोलियो टीकाकरण अभियान जो कि सन् 1995 से पूरे देश में चलाया जा रहा है उसका ग्रामवासियों पर अच्छा प्रभाव पड़ा है क्योंकि इस अभियान से वे पोलियो बीमारी व पोलियो टीकाकरण के महत्व के विषय में जागरूक हुए हैं। पिछले 8–10 सालों से इस अभियान के चलाये जाने से ग्रामवासियों में जागरूकता का विकास हुआ है। जिसकी वजह से एक भी पोलियोग्रस्त बच्चा 15 वर्ष से कम आयु का नहीं मिला। हम ज्ञान के अभाव में अपने आस–पास के वातावरण के प्रति जागरूक नहीं हो पाते, और अपने स्वास्थ्य व अपने परिवार के स्वास्थ्य के कष्ट पहुंचाने में सहायक होते हैं। आज सरकार भी जागरूकता को बढ़ावा देने को प्राथमिकता दे रही है और यह कार्य विभिन्न माध्यमों से जैसे, समाचार पत्र, टी.वी. विज्ञापन, रेडियो, माइकिंग के द्वारा कार्य सम्पन्न कर रही है। इसके साथ आज भी पूरे देश में सभी 5 साल से छोटे बच्चों को इस बीमारी से सुरक्षा जरूरी है और यह हमारा परम कर्तव्य है कि हम इस अभियान की सफलता में अपना सहयोग प्रदान करें। इसके लिए कुछ सुझाव हैं–

- शहर, नगर के साथ गांवों में विभिन्न माध्यमों से जैसे, नाटक, नौटंकी, माइकिंग, गीत–संगीत के द्वारा लोगों को जागरूक किया जा सकता है।
- पोलियो का उन्मूलन करने के क्रम में वैक्सीनेटरों को भारत में पैदा हुए सभी बच्चों को बार–बार खुराक पिलाने की आवश्यकता है जिससे उनका संरक्षण सुनिश्चित किया जा सके। यदि बच्चे ने नियमित टीकाकरण के दौरान 1 या 2 दिन पहले भी दवा पी हो तो भी उसे पोलियो ड्राप्स पिलानी चाहिए।
- गांवों में शिक्षा के स्तर को बढ़ावा देकर भी इस ओर विशेष जागरूकता लाई जा सकती है। तथा उचित शिक्षा के माध्यम से अपने आस–पास के वातावरण को जागरूक वातावरण बनाया जा सकता है। ✱

(लेखिका डा. बाबा साहेब अम्बेडकर राष्ट्रीय सामाजिक संस्थान, महू, म.प्र. से संबंद्ध हैं)

मां स्वस्थ तो बच्चे और भी स्वस्थ

अहमद नूर खान

विश्व स्वास्थ्य संगठन के 57 वर्ष हो चुके हैं। यह संगठन कुछ दूरदर्शी लोगों की सोच का प्रतिफल है। चूंकि इस संगठन की विधिवत स्थापना 7 अप्रैल को विश्व स्वास्थ्य दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस बार विश्व स्वास्थ्य दिवस का विषय रहा – 'स्वस्थ मां और बच्चे' इससे संबंद्ध अभियान का नारा है – 'हरेक मां और बच्चा महत्वपूर्ण'

महिलाओं का स्वास्थ्य

समाज की समृद्धि के लिए मां और बच्चे का स्वस्थ होना जरूरी है। विश्व में बहुत सारी माताएं और बच्चे या तो मर रहे हैं या कुस्वास्थ्य, कुपोषण और अपर्याप्त स्वास्थ्य सेवाओं का शिकार हो रहे हैं। हरेक साल 5 लाख से अधिक माताएं प्रसव–पीड़ा के दौरान मर जाती हैं। साथ ही एक करोड़ से अधिक बच्चों की मृत्यु 5 वर्ष की उम्र से पहले ही हो जाती है, हालांकि मौजूदा ज्ञान और उपलब्ध उपकरणों के जरिये उन्हें बचाया जा सकता है। ऐसी घटनाएं ज्यादातर कम और मध्यम आय वाले देशों में और खासकर अतिनिर्धन परिवारों में होती हैं।

महिलाओं का स्वस्थ होना न केवल खुद के लिए, बल्कि नई पीढ़ी के लिए भी महत्वपूर्ण है। जरूरी स्वास्थ्य सेवाओं के अभाव में विश्व के विभिन्न भागों में अभी भी महिलाएं या तो प्रसव से जुड़ी समस्याओं का शिकार हो रही हैं या उनकी अकाल मौत हो जाती है। 50 वर्ष पूर्व विकसित देशों में महिलाएं जिन कारणों से मातृत्व संबंधी बीमारियों से मरती थीं, उन्हीं कारणों से महिलाएं आज विकासशील देशों में मर रही हैं। गर्भ से संबंधित मौतें ज्यादा रक्त स्राव और गर्भ के बाद होने वाली बीमारियों और गर्भपात के कारण होती हैं। बच्चे और मां को बचाने के लिए पिछले कुछ वर्षों में बड़े पैमाने पर टीकाकरण चलाया गया।

महिलाओं में साक्षरता से विभिन्न राज्यों में मृत्यु दर और स्वास्थ्य दर में गुणात्मक परिवर्तन आया है। महिलाओं में कम साक्षरता का शिशु मृत्यु दर और माताओं की अकाल मौत से सीधा संबंध है। जन्म एक प्राकृतिक प्रक्रिया है लेकिन जीता वही है जो सक्षम है। अब चिकित्सा विज्ञान की मदद से जन्म से संबंधित बहुत से खतरे या तो कम कर लिए गए हैं या उन पर काबू पा लिया गया है।

सुरक्षित मातृत्व

सुरक्षित मातृत्व न केवल उत्तम सेवाओं से बल्कि गरीबी और अशिक्षा को दूर कर नारी स्वास्थ्य से संबंधित जुड़ी संस्थाओं की भागीदारी सुनिश्चित कर् हासिल किया जा सकता है।

बच्चों के स्वास्थ्य की देखभाल गर्भधारण से पहले ही शुरू हो जाती है। टीकाकरण से बच्चों का खसरा, टेटनस, डिप्थीरिया, कुकुर–खांसी, पोलीमोलाइटिस और तपेदिक से बचाव होता है। साफ–सफाई से डायरिया का खतरा नहीं रहता है। स्तन–पान और उपयुक्त समय पर स्तन–पान छुड़ाकर संतुलित पोषण से बच्चा कुपोषण और बीमारियों का शिकार नहीं बनता। खेलकूद और व्यायाम से बच्चों का संतुलित विकास होता है।

विश्व में 80 लाख से अधिक शिशु अपने जन्म के पहले दिन ही मर जाते हैं। 40 लाख से ज्यादा बच्चे मात्र कुछ महीने या दिन तक ही जिंदा रह पाते हैं। विकासशील देशों में 51 लाख बच्चे तो प्रसव के दौरान ही मर जाते हैं।

प्रसव के दौरान शिशु की मौत के कारणों का पता लगाना आसान नहीं है। विश्व स्वास्थ्य संगठन का कहना है कि 85 प्रतिशत शिशुओं की मौत संक्रमण और समय पूर्व जन्म के दुष्प्रभावों की वजह से ही हो जाती है। ✱

राष्ट्रीय पल्स पोलियो कार्यक्रम

राकेश शर्मा 'निशीथ'

पोलियो एक अत्यंत भयंकर बीमारी है। यह बीमारी अधिकतर बच्चों में ही होती है। पोलियो से बच्चा जीवन भर के लिए अपाहिज हो सकता है। भारत सरकार ने 1995 में राष्ट्रीय पल्स पोलियो कार्यक्रम की शुरुआत की थी और 2002 तक इसे जड़ से मिटाने का लक्ष्य रखा गया था। इसके लिए सरकार प्रत्येक वर्ष विश्व बैंक से करीब 1100 करोड़ रुपये कर्ज लेती है। संयुक्त राष्ट्र और दूसरी अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं से अनुदान भी मिलता है। परंतु 2002 तक इसे जड़ से मिटाना तो दूर इसी वर्ष कुछ राज्यों में कुल 300 से अधिक पोलियो के नए मामले दर्ज हुए। इस कारण सरकार ने इस कार्यक्रम की अवधि दो वर्ष और बढ़ा दी थी। परंतु अभी तक यह लक्ष्य पूरा नहीं हुआ है। केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय ने इस कार्यक्रम को अभी जारी रखने का फैसला किया है।

भारत में आज भी पोलियो के रोगियों की संख्या सबसे अधिक है। बांग्लादेश, श्रीलंका और नेपाल जैसे छोटे देश पोलियो का उन्मूलन कर चुके हैं। पोलियो रोगियों की संख्या की दृष्टि से पाकिस्तान दूसरे तथा नाइजीरिया तीसरे स्थान पर हैं। उत्तर प्रदेश और बिहार में पोलियो के नये मामले सामने आते रहे हैं।

पोलियो का रोग एक विषाणु द्वारा फैलता है, जो रोगी के शरीर से बीमारी के छह से 8 सप्ताह बाद तक मल के जरिये बाहर निकलता रहता है। यदि साफ–सफाई न रखी जाए तो यह विषाणु पुनः भोजन में चला जाता है जिससे यह बीमारी फैलती जाती है। पोलियो के अभी तक तीन विषाणुओं का पता चला है, जिन्हें पी–1, पी–2 तथा पी–3 के नाम से जाना जाता है। भारत में तीनों के ही विषाणु सक्रिय हैं तथा पल्स पोलियो कार्यक्रम में पिलायी जाने वाली ड्रॉप तीनों तरह के विषाणुओं को खत्म करने में कारगर है।

पोलियो के विषाणु केवल मनुष्य की आहार नली में जिंदा रहते हैं और ये विषाणु मुंह के रास्ते और कभी–कभी सांस की नली के जरिए शरीर में प्रवेश करते हैं। यह विषाणु शून्य से पांच साल की आयु तक के बच्चों के शरीर में जीवित रहता है। अगर एक भी बच्चा पोलियो की खुराक पीने से छूट जाता है तो उसके जरिये यह उन बच्चों में भी पुनः फैल सकता है, जो पोलियो ड्रॉप पी चुके हों। पोलियो विषाणु का संक्रमण बरसात के मौसम में अधिक होता है तथा यह संक्रमित भोजन और दूषित पानी के जरिए फैलता है।

पोलियो की बीमारी में रोगी को बुखार आता है और सिरदर्द और कमजोरी की शिकायत होती है। उसकी गर्दन और कमर अकड़ जाती है और वह मांसपेशियों में दर्द महसूस करता है आमतौर पर इस रोग में रोगी की एक टांग या बाजू अथवा शरीर के किसी हिस्से में लकवा या पक्षाघात होने से रोगी अपाहिज हो जाता है। कभी–कभी यह रोग जानलेवा भी हो जाता है।

राष्ट्रीय पल्स पोलियो कार्यक्रम देश का सबसे बड़ा स्वास्थ्य कार्यक्रम है। पोलियो को जड़ से मिटाने के लिए सरकार ने हर तरह के कदम उठाए हैं। पोस्टरों, बैनरों, रेडियो और टेलीविजन पर विज्ञापनों के जरिए जन–जागरूकता अभियान चलाए गए है, जिनमें सिनेमा, खेल और दूसरे क्षेत्रों की बड़ी हस्तियों ने प्रचार किया है।

कुछ व्यक्ति स्वास्थ्य केंद्रों पर बच्चों को ले जाने में असमर्थ रहते हैं या लापरवाही बरतते हैं। इसे ध्यान में रखकर घर–घर जा कर दवा पिलाने के लिए कार्यकर्ता नियुक्त किए गए हैं। बड़ी संख्या में स्कूली बच्चों और स्वयंसेवी संगठनों ने भी इसमें भाग लिया है।

यह कार्यक्रम पूरी तरह सफल नहीं हो पाया है। इसके अनेक कारण हैं– जैसे अंधविश्वास, कुछ अफवाहें, मजदूरी पर निर्भर परिवारों का काम की तलाश में एक जगह से दूसरी जगह जाना और लोगों की लापरवाही। उत्तर प्रदेश सहित कई राज्यों की मुस्लिम आबादी में यह अफवाह फैली कि पोलियो खुराक पीकर बच्चे नपुंसक बन जाएंगे। इस बेबुनियाद अफवाह को समाप्त करने के लिए मुस्लिम नेताओं की मदद ली जा रही है।

पोलियो के नए मामले सामने आना काफी चिंताजनक है, क्योंकि एक भी बच्चे में अगर इसके विषाणु बचे रह गए तो आसपास के दूसरे बच्चों में संक्रमण का खतरा बना रहता है, चाहे वे पोलियो की दवा नियमित क्यों न लेते रहे हों। भारत में विकलांगों की संख्या दुनिया में सबसे अधिक है और पोलियो इसका प्रतीक बन चुका है। इस रोग पर काबू न पाना हमारे समाज के लिए चिंता का विषय तो है ही, दुनिया के सामने शर्म का कारण भी है। अतः इस कार्यक्रम के लिए बड़े व्यापक पैमाने पर सामाजिक भागीदारी की जरूरत है ताकि ऐसे स्थानों पर पल्स पोलियो केंद्र बनाए जा सकें जहां बच्चों को आसानी से लाया जा सके तथा यह संदेश दूर–दराज के ग्रामीण इलाकों में हर घर तक पहुंचाया जा सके।

घुमंतू मजदूरों के जरिये भी पोलियो विषाणु फैल रहा है क्योंकि इनके बच्चे अक्सर दवा पीने से छूट जाते हैं और जब वे किसी नये स्थान पर जाते हैं तो वहां पोलियो फैलने का खतरा रहता है। नये मामलों के प्रकाश में आने से केंद्र सरकार और सभी अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियां चिंतित हैं और इन राज्यों के मुख्य सचिवों को पोलियो प्रभावित जिलों में स्वास्थ्य विभाग को दुरुस्त करने के लिए निर्देश जारी किए गए हैं। अब तक इस कार्यक्रम पर 7,000 करोड़ रुपये खर्च किये जा चुके हैं। रोगियों की संख्या भी बहुत कम हुई है। लेकिन सरकार का निर्धारित लक्ष्य है देश में पोलियो के विषाणु का जड़ से उन्मूलन। यह लक्ष्य अभी असंभव नहीं तो कठिन अवश्य प्रतीत हो रहा है।

देश में 1987 में 28,757 पोलियो रोगी थे, जो 1995 में 3,265 रह गए। वर्ष 2004 में मात्र 150 पोलियो रोगी थे। निःसंदेह पोलियो रोगियों में कमी आयी है लेकिन हम यह स्तर शून्य तक नहीं ला पाए हैं। यदि हमें देश को पोलियो मुक्त देखना है तो इसमें जहां एक ओर सरकार के अथक प्रयासों की जरूरत है वहीं दूसरी ओर आम भारतीय माता–पिता को भी अपने बच्चों के स्वास्थ के लिए जागरूक होने तथा अंधविश्वासों को तिलांजलि देने की आवश्यकता है। तभी हम पोलियो मुक्त हो सकेंगे और अंतर्राष्ट्रीय संस्था **डब्ल्यूएचओ** द्वारा वर्ष 2007 तक पोलियो मुक्त भारत का प्रमाण पत्र प्राप्त करने में सफल हो सकेंगे। ✱

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन

वी मोहन राव

सरकार ने आर्थिक और सामाजिक विकास के महत्व को देखते हुए तथा जनता के जीवन स्तर में सुधार लाने की दृष्टि से राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की शुरूआत की है। मिशन ने अच्छे स्वास्थ्य के लिए पौष्टिक आहार, स्वच्छता और सुरक्षित पेय जलापूर्ति जैसे आवश्यक मुद्दों को लक्ष्य बनाकर एक परस्पर तालमेल वाली स्कीम अपनाई है। इसके अलावा स्वास्थ्य की देखरेख को सुलभ बनाना भी इसका लक्ष्य है। कार्रवाई योजना में स्वास्थ्य पर सार्वजनिक खर्च, स्वास्थ्य सुविधाओं में असंतुलन कम करना, संसाधनों में सहयोग, संगठनात्मक ढांचों का परस्पर विलय, स्वास्थ्य की देखभाल के कार्य से जुड़े कर्मियों की संख्या में वृद्धि, स्वास्थ्य कार्यक्रमों का विकेन्द्रीकरण और जिला स्तर पर प्रबंधन, सामुदायिक भागीदारी व संपति का स्वामित्व, जिला स्तर पर स्वास्थ्य व्यवस्था का प्रबंध और वित्तीय कर्मियों की भर्ती शामिल है। देश के प्रत्येक ब्लॉक में भारतीय जन स्वास्थ्य मानकों के आधार पर सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों को भी अस्पतालों में शामिल किया गया है।

मिशन का प्रमुख उद्देश्य जनता, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में बसने वाले गरीबों, महिलाओं और बच्चों को अच्छी स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराना है। राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम के अंतर्गत संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार का यह एक महत्वाकांक्षी कार्यक्रम है। इस मिशन का उद्देश्य पूरे देश को कवर करना है लेकिन इसमें राज्यों पर विशेष ध्यान दिया गया है। स्वास्थ्य देखभाल संबंधी सुविधाएं ज्यादा मजबूत नहीं हैं। प्राथमिकता स्वास्थ्य केन्द्रों में डाक्टरों की कमी को देखते हुए आयुष यानी आयुर्वेदिक, योग, यूनांनी, सिद्ध और होमियोपैथी चिकित्सा को जनसाधारण के लिए सुलभ कराना इस मिशन का उद्देश्य है। स्वास्थ्य और कल्याण संबंधी कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने के लिए प्रत्येक ब्लॉक में चौबीसों घंटे चलने वाले अस्पताल तथा गरीबों के लिए सामुदायिक स्वास्थ्य बीमा योजना को साकार किया जाएगा। ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के जरिए सरकार ने जिला और उप–जिला स्तरों पर स्वास्थ्य से संबंधित जागरूकता अभियान को चलाने का जिम्मा पंचायती राज संस्थानों को सौंपा है। ग्रामीण स्वास्थ्य योजना को प्रभावी बनाने के लिए प्रत्येक उपकेन्द्र को दस हजार रुपये की राशि उपलब्ध कराई जाएगी। जिला स्वास्थ्य मिशन में स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, शिशु स्वास्थ्य, तपेदिक, मलेरिया, दृष्टिहीनता, फाइलेरिया, कालाअजर, आयोडीन की कमी जैसी बीमारियों की रोकथाम के लिए आपस में मिलाकर एक समेकित स्वास्थ्य मिशन के तहत चलाया जाएगा।

मिशन की एक और प्रमुख विशिष्टता जननी सुरक्षा योजना है। मौजूदा राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना में कुछ फेरबदल कर इस लागू करने का प्रस्ताव है। इस योजना में गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों में महिलाओं को गर्भावस्था के दौरान पौष्टिक आहार उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई है। इसमें जननी सुरक्षा योजना में प्रसूतिपूर्व स्वास्थ्य की देखभाल के लिए नगद सहायता राशि प्रदान करने की व्यवस्था है। इस योजना के लिए केन्द्र करेगा। शिशु तथा मातृत्व मृत्यु दर में कमी लाना और माताओं को अस्पतालों के लिए प्रसव कराने के लिए प्रेरित करना इस मिशन का लक्ष्य है।

इस मिशन की एक बड़ी खूबी यह है कि केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री इसके अध्यक्ष होंगे जबकि योजना आयोग, ग्रामीण विकास, पंचायती राज, मानव संसाधन विकास और स्वास्थ्य तथा चार राज्यों के स्वास्थ्य और परिवार कल्याण सचिव और प्रधानमंत्री द्वारा सार्वजनिक स्वास्थ्य से जुड़े प्रतिनिधि मिशन की संचालन समिति के सदस्य होंगे। राज्य स्तर पर मुख्यमंत्री स्वास्थ्य मिशन की बागडोर संभालेंगे। जिला स्तर पर जिला परिषद अध्यक्ष और स्वास्थ्य विभाग के प्रमुख इसका संचालन करेंगे। इसके अतिरिक्त संबंधित विभागों, गैर–सरकारी संगठनों और निजी स्वयंसेवी संगठनों के प्रतिनिधि इसमें सहायक, नर्स, दाइयों, आंगनवाड़ी, सेवकों तथा स्वयंसेवी वर्गों का भी सहयोग लिया जाएगा। राज्यों के पंचायती राज संस्थानों को उचित अधिकार और धनराशि प्रदान की जाएगी।

राज्य और जिला स्तर की योजनाओं को पहली छमाही में और ग्रामों के स्तर पर कार्य योजना को दूसरे वर्ष में पूरा करने का प्रस्ताव है।

सरकार को आशा है कि योजना के क्रियान्वयन से गांव के हर घर में स्वास्थ्य देखभाल सेवा उपलब्ध कराई जा सकेगी ताकि गांव, समाज और कुल मिलाकर देश के स्वास्थ्य सेवा स्तर में आमूल परिवर्तन लाया जा सके।

आशा की नई किरण

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने पिछले वर्ष अपनी रिपोर्ट में यह तथ्य प्रकट किया कि सार्वजनिक स्वास्थ्य सुविधाओं पर खर्च होने वाले धन के करीब 60 प्रतिशत शहरी और उच्च वर्ग के लोगों पर व्यय हो जाता है, जबकि गांवों में रहने वाली करीब दो तिहाई आबादी को सिर्फ एक तिहाई हिस्से का ही लाभ मिल पाता है।

गांवों में चिकित्सा सेवाओं की सबसे बड़ी समस्याओं की सबसे बड़ी समस्या है कि वहां प्रशिक्षित डाक्टरों का अभाव है। गांवों में जाने के लिए न सरकारी चिकित्सक तैयार हैं और न ही निजी डाक्टर। इसी कारण वहां डाक्टर–मरीज का अनुपात बिगड़ता जा रहा है। गांवों और आर्थिक रूप से कमजोर लोगों तक बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं पहुंचाना बड़ी चुनौती है।

अधिकतर गांवों में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र नहीं हैं। जहां है भी, वहां धन के अभाव में पर्याप्त सुविधाएं नहीं हैं। लगभग 48 प्रतिशत प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र बिना डाक्टर के हैं। इस कारण गांवों में शिशु और मातृ मृत्यु–दर अधिक है। प्रसव के दौरान जान गवां देने वाली दस में से आठ महिलाओं की मृत्यु ग्रामीण प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में होती हैं जो महिलाएं और बच्चे प्रसव के लिए बाद जीवित रह जाते हैं उनमें से भी अधिकतर कुपोषण और बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

सार्वजनिक स्वास्थ्य केंद्रों के अभाव और उनमें चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध न होने के कारण लगभग 40 प्रतिशत व्यक्ति कर्ज लेकर या अपनी जमीन–जायदाद बेचकर चिकित्सा का खर्च उठाने पर मजबूर होते हैं। इसी कारण लगभग 2 करोड़ व्यक्ति प्रत्येक वर्ष गरीबी रेखा से नीचे चले जाने पर मजबूर हैं।

ग्रामीण इलाकों में स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध न होने के कारण वहां के अधिकतर व्यक्ति पारंपरिक उपचार पद्धतियों और झाड़–फूंक जैसे अंधविश्वासों का सहारा लेते हैं। साफ–सफाई, पेयजल और पोषण संबंधी सावधानियों के प्रति उनमें जागरूकता नहीं होती। इसी सब को मद्देनजर रखते हुए संप्रग सरकार के साझा न्यूनतम कार्यक्रम के अनुसार वर्तमान बजट में लगभग 2,000 करोड़ रुपये की वृद्धि की गई। इसी के कारण अनुसार राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन की शुरूआत की जा रही है। इससे ग्रामीण और निर्धन लोगों के लिए बुनियादी स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध हो सकेंगी।

ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सकों की कमी को दूर करने के लिए केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय ने मौजूदा चिकित्सा शिक्षा पाठयक्रम में व्यापक परिवर्तन करने का निर्णय लिया गया है, जिसके तहत ग्रामीण क्षेत्रों की आवश्यकता के अनुसार एक नया मेडिकल कोर्स शुरू करने और एमबीबीएस पाठयक्रम में देशी चिकित्सा पद्धतियों के प्रबंध से जुड़े कुछ नये अध्याय शामिल करने का प्रस्ताव है। इसके लिए देशभर के 200 से अधिक मेडिकल कालेजों के संचालकों की एक बैठक भी चिकित्सा परिषद् आयोजित कर चुकी है।

राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के उदघाटन–अवसर पर प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने अपने भाषण में कहा कि "भारतीय स्वास्थ्य सेवा में सार्वजनिक स्वास्थ्य के मुद्दों और निरोधक चिकित्सा की अब तक उपेक्षा की गई है। यह मिशन सार्वजनिक स्वास्थ्य सेवाओं के इस दृष्टिकोण को पूरी तरह बदल देगा। आजादी के इतने साल बाद भी स्वास्थ्य के क्षेत्र में हम बहुत मजबूत नहीं हो पाए हैं। खासकर देश के कई गांवों में बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं का पूरी तरह अभाव है। उन्होंने कहा कि सरकार न्यूनतम साझा कार्यक्रम के तहत स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्रति व्यक्ति खर्च में दो प्रतिशत की बढ़ोतरी करने के लिए प्रतिबद्ध है।"

ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का लक्ष्य विशेषकर ग्रामीण बच्चों और महिलाओं को केंद्र में रखकर तय किए गए हैं। इसमें 18 राज्यों पर खासतौर से ध्यान केंद्रित किया गया है। प्रत्येक खंड में 24 घंटे खुला रहने वाला कम से कम एक अस्पताल तथा निर्धनों के लिए सामुदायिक स्वास्थ्य बीमा आदि सुविधाएं उपलब्ध कराने की योजना है।

सरकार ने **जननी सुरक्षा योजना** शुरू की है, जो ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का एक भाग है। दसवीं पंचवर्षीय योजना में इसके लिए सरकार ने 500 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इस योजना के अंतर्गत गरीब वर्ग की गर्भवती महिलाएं प्रसव के लिए ज्यादा से ज्यादा संख्या में अस्पताल आएं, इसके लिए बच्चे के जन्म पर ग्रामीण क्षेत्रों में सात सौ और शहरी क्षेत्रों में छह सौ रुपये की राशि नकद प्रदान करने की व्यवस्था है। इससे प्रसव स्वास्थ्य कार्यकर्ता की देखरेख में होंगे। अस्पताल या स्वास्थ्य केंद्र में आने पर उन्हें जरूरी दवाएं और टीकाकरण सुविधा भी मिल सकेंगी। जो नकद धनराशि उन्हें दी जाएगी उससे नवजात शिशु के लिए पोषाहार की व्यवस्था भी हो सकेगी।

यह योजना दो बच्चों के जन्म तक सीमित है। स्वास्थ्य सेवाओं की दृष्टि से कमजोर दस राज्यों उत्तर प्रदेश, बिहार, राजस्थान, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, झारखंड, छत्तीसगढ़, उत्तरांचल, असम और जम्मू कश्मीर में इसे तीन बच्चों तक विस्तारित किया गया है। लेकिन इसके साथ यह शर्त रखी गयी है कि तीसरे बच्चे के जन्म पर आर्थिक सहायता तब मिलेगी जब महिलाएं नसबंदी कराएंगी। इस योजना के अंतर्गत यह भी प्रावधान किया गया है कि गर्भवती महिला को निकटतम स्वास्थ्य केंद्र तक ले जाने के लिए सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता को नकद धनराशि दी जाएगी। कमजोर दस राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य कार्यकताओं को प्रति महिला छह सौ रुपये दिए जाएंगे। प्रत्येक एक हजार की आबादी पर एक मान्यता प्राप्त सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं (आशा) की नियुक्ति की जाएगी। जिन्हें जरूरी प्रशिक्षण भी दिया जाएगा।

प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में डाक्टरों की कमी को देखते हुए आयुर्वेद, चिकित्सा, यूनानी, सिद्ध और होमियोपैथी चिकित्सा पद्धतियों को मुख्यधारा में शामिल करने की भी योजना है। आवश्यकता पड़ने पर निजी डाक्टरों की सेवाएं लेने का भी प्रावधान किया गया है।

ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं और अधिक बेहतर बनाने के उद्देश्य से युवकों को बुनियादी चिकित्सा संबंधी प्रशिक्षण कार्यक्रमों की योजना बनाई गई है। ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन में केंद्र ने सकल घरेलू उत्पाद का दो से तीन प्रतिशत खर्च करने का प्रावधान किया गया है। कई पंचायतों ने स्वच्छता और स्वास्थ्य संबंधी जनजागरूकता अभियान चलाने में मिसाल कायम की है। उनके सहयोग से ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के प्रभावी होने की उम्मीद की जा सकती है। ✱

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो और उसके साथ मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655/661, विंग 'ए' गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

धूम्रपान : स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए घातक

गोपालसिंह बिष्ट

विश्व का शायद ही कोई देश या हिस्सा होगा जहां तम्बाकू या इससे बनी चीजों का सेवन नहीं होता हो। एक मादक द्रव्य के रूप में तम्बाकू का सेवन लोग चार सौ से भी अधिक वर्षों से करते आ रहे हैं। चिकित्सा शास्त्रियों और वैज्ञानिकों द्वारा इसके सेवन से स्वास्थ्य तथा पर्यावरण पर पड़ने वाले हानिकारक और गंभीर दुष्प्रभावों की जानकारी दिए जाने के बावजूद इसके इस्तेमाल में निरन्तर वृद्धि हो रही है। यह गंभीर चिन्ता का विषय है।

विकासशील देशों में तम्बाकू की खेती फायदे का सौदा मानी जाती है, क्योंकि उन्हें इसकी खेती से बहुमूल्य विदेशी मुद्रा मिलती है। लेकिन दीर्घकालीन परिणामों की दृष्टि से तम्बाकू की खेती को उचित नहीं ठहराया जा सकता। इसका उत्पादन पर्यावरण को बेहद क्षति पहुंचाता है। सिगरेट के लिए तम्बाकू तैयार करते वक्त उसे भट्टियों में भूना जाता है। एक टन तम्बाकू भूनने के लिए करीब ढाई टन तम्बाकू का इस्तेमाल होता है, जो जंगल–कटाई का एक प्रमुख कारण है। दुनिया में प्रतिवर्ष लगभग छह हजार अरब रुपए की सिगरेट फूंकी जाती है, जिसका विषैला धुंआ प्राणियों और पर्यावरण के लिए घातक है। फिर इससे पैदा होने वाले रोगों के उपचार में जो धनराशि खर्च होती है, वह भी तम्बाकू द्वारा होने वाले अप्रत्यक्ष नुकसानों में से एक है।

शोधों से यह स्पष्ट हो गया है कि धूम्रपान से हृदय रोग, ब्रान्काइट्सि, तपेदिक, दमा, उच्च रक्तचाप, स्नायु दुर्बलता, मोतियाबिन्द, पेट का अल्सर तथा सभी तरह के कैंसर की संभावना बढ़ जाती है। सिगरेट के धुएं में कम से कम 22 कैंसरजन्य तत्व और क्लोराइड जैसे कई विषैले रासायनिक पदार्थ समाहित होते हैं जो स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक माने गए हैं। इनमें भी तम्बाकू की पत्तियों में पाए जाने वाले निकोटिन और टार सबसे अधिक घातक हैं। चिकित्सा वैज्ञानिकों का यह भी मानना है कि तम्बाकू के सेवन से लगभग एक दर्जन बीमारियां हो सकती हैं, जिनमें फेफड़ों, मुख, गले और आंतों का कैंसर, हृदय संबंधी रोग श्वास संबंधी परेशानी, दमा, तपेदिक, इन्फ्लूएंजा और ब्रान्काइट्सि प्रमुख हैं।

गर्भवती महिलाओं के लिए तो धूम्रपान एक अभिशाप ही है। एक अध्ययन के अनुसार जो महिलाएं गर्भावस्था के दौरान धूम्रपान करती हैं, उनके शिशु के विकलांग होने की आशंका ज्यादा रहती है। इसका मुख्य कारण धूम्रपान की वजह से शिशु को गर्भ में पोषक तत्वों का कम मिलना और शरीर में विटामिन "सी" की कमी होना है। इसके अतिरिक्त महिलाओं में धूम्रपान की लत, फेफड़ों के कैंसर व बांझपन को भी जन्म देती है। वर्ष 1996 में तम्बाकू के उपयोग के कारण विकासशील देशों में एक लाख से भी अधिक महिलाओं की मृत्यु हुई थी। इनमें 20 से 30 प्रतिशत महिलाओं की मृत्यु धूम्रपान या तम्बाकूजन्य पदार्थों के कारण हुई। यही स्थिति आज भी बनी हुई है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार की एक रिपोर्ट के अनुसार दुनिया के लगभग डेढ़ करोड़ बच्चे तम्बाकू–जनित रोगों से मरते हैं। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से धूम्रपान से होने वाली बीमारियों से अधिकतर बच्चे पीड़ित होते हैं। इससे बच्चों में अपंगता, लम्बाई का कम होना, हृदय तथा दमे की बीमारियां मुख्य हैं।

धूम्रपान करने से कहीं घातक होता है अप्रत्यक्ष धूम्रपान। यानी एक धूम्रपानी तो इससे प्रभावित होता ही है साथ ही उसके सम्पर्क में आने वाला व्यक्ति भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। सिगरेट या बीड़ी का कश लेकर मुंह से छोड़े गए धुंए में भी तो वे सभी घातक रसायन बचे रहते हैं, जो न पीने वाले के शरीर में पहुंचकर कैंसर व दमा जैसे घातक रोगों को जन्म देते हैं। श्वास द्वारा लिए गए धुंए में कम से कम पांच गुना कार्बन–मोनोक्साइड, तीन गुना टार व निकोटिन तथा 46 गुना अन्य हानिकारक पदार्थ होते हैं। इन विषैले धुएं को उनके आसपास के व्यक्ति को बाध्य होकर अपनी श्वास के साथ खींचना ही पड़ता है। इस तरह अप्रत्यक्ष धूम्रपान के कारण फेफड़े के कैंसर से विश्व में 3,000 मौतें प्रतिवर्ष होती हैं तथा हृदय रोग के लगभग 43,000 मामले सामने आये हैं।

एक वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार धूम्रपान द्वारा वायुमंडल में 10.5 टन कैडमियम, 14.8 टन सीसा, 48.5 टन तांबा तथा अन्य रसायन फैलते हैं। इससे वायुमंडल की स्थिति का सहज ही अन्दाजा लगाया जा सकता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन का अनुमान है कि दुनिया में लगभग 1.1 अरब स्त्री–पुरुष धूम्रपान करते हैं। इनमें 80.0 करोड़ विकासशील देशों में 50 प्रतिशत पुरुष और 12 प्रतिशत महिलाएं धूम्रपान की आदी हैं। इस संगठन के आकड़ों के अनुसार तम्बाकू के प्रयोग से प्रति 10 सैकेंड में एक व्यक्ति की, प्रतिदिन दस हजार और प्रतिवर्ष 35 लाख लोगों की मृत्यु धूम्रपान या इससे बने पदार्थों से होती है। अगर इस पर अंकुश न लगाया गया तो आने वाले वर्षों में तम्बाकू या धूम्रपान से मृत्यु दर बढ़ती ही जाएगी। संगठन का कहना है कि 1990 के दशक जहां तीस लाख व्यक्ति तम्बाकू या धूम्रपान के कारण मरे, वहीं 2020 के दशक में यह संख्या एक करोड़ को पार कर जाएगी। इनमें 70 प्रतिशत लोग विकासशील देशों के होंगे।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के आंकड़े बताते हैं कि तम्बाकू चबाने की वजह से मुख का कैंसर होने की घटनाओं में विश्व के एक तिहाई मामले भारत में होते हैं। भारत में 15 वर्ष से अधिक आयु की लगभग 3 करोड़ 70 लाख महिलाएं और 14 करोड़ 20 लाख से भी अधिक

पुरुष किसी न किसी रूप से तम्बाकू सेवन करते हैं। 15 वर्ष से कम आयु के बच्चे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से तम्बाकू का सेवन करते हैं। एक अनुमान के अनुसार शहरी क्षेत्रों में 40 वर्ष से अधिक उम्र के लगभग 25 प्रतिशत व्यक्ति धूम्रपान के कारण श्वास संबंधी रोगों से और 1 करोड़ 30 लाख मामले हृदय तथा फेफड़ों संबंधी बीमारियों के होते हैं।

धूम्रपान में कार्बन मोनोक्साइड नामक गैस होती हैं। ये गैस हमारे रक्त में पाये जाने वाले हिमोग्लोबिन से जुड़ जाती हैं जिससे हिमोग्लोबिन मे निहित आक्सीजन शरीर में संचरित नहीं हो पाता। इस प्रकार हृदय तथा शरीर के अन्य महत्वपूर्ण अंगों तक आक्सीजन नहीं पहुंच पाता है।

सरकार ने तम्बाकू से बने उत्पादों के सेवन में कमी लाने के लिए ठोस कार्रवाई करने की योजना बनाई है। इसमें कई केंद्रीय मंत्रालयों व राज्य सरकारों को शामिल किया गया है। देश में सिगरेटों के उत्पादन, उपभोग एवं व्यापार को विनियमित और नियंत्रित करने के संबंध में सख्त नियम मौजूद हैं।

केंद्र ने राज्य सरकारों से तम्बाकू–वर्जन अधिनियम को बेहतर ढंग से लागू करने को कहा है। मई, 2004 से लागू तम्बाकू–वर्जन अधिनियम के तहत तम्बाकू उत्पादों का किसी भी रूप में विज्ञापन करना, सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान करने और बेचने पर प्रतिबंध है। पकड़े जाने पर सजा तथा जुर्माना या दोनों का प्रावधान है। साथ ही नाबालिगों को तम्बाकूजन्य पदार्थों की बिक्री करना वर्जित कर दिया गया है। इसी का परिणाम है कि कुछ राज्य सरकारों ने धूम्रपान तथा पान मसाला, गुटका आदि पर पाबन्दी लगा दी है। लेकिन सिगरेट के पैकटों पर मोटे अक्षरों में वैधानिक चेतावनी के बावजूद भी इसका बाजार बढ़ रहा है। यह चिन्ता का विषय है। ✱

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

सरकार ने तम्बाकू नियंत्रण कानूनों को सख्त बनाया

सरकार ने वर्तमान तम्बाकू नियंत्रण अधिनियम के प्रावधानों की कमियों को दूर करने के उद्देश्य से कानूनों और नियमों में संशोधन अधिसूचित किए हैं और अतिरिक्त नियम भी बनाए हैं। आज अधिसूचित किए गए संशोधन पहली अगस्त, 2005 से लागू होंगे। अधिनियम में किए गए अतिरिक्त संशोधन निम्नलिखित हैं :–

- नाबालिगों को तम्बाकू उत्पाद बेचने पर प्रतिबंध।
- तम्बाकू उत्पादों को वेंडिंग मशीनों के माध्यम से बेचने पर प्रतिबंध।
- तम्बाकू उत्पादों का विक्रय स्थान पर 18 वर्ष से कम उम्र के लोगों की पहुंच से बाहर रखना।
- तम्बाकू उत्पादों को प्रदर्शित करने अथवा सिनेमा और टी.वी. में कलाकारों द्वारा उनके इस्तेमाल पर प्रतिबंध।
- धूम्रपान अथवा तम्बाकू के अन्य ब्रांडों के इस्तेमाल वाले दृश्य से जुड़े कार्यक्रम में स्वास्थ्य संबंधी चेतावनी अनिवार्य रूप से दर्शाना।
- किसी छपे हुए चित्र या इलेक्ट्रानिक माध्यम से प्रसारित चित्र में तम्बाकू उत्पादों के ब्रांडों अथवा लोगों को स्पष्ट दिखाने पर प्रतिबंध।
- अप्रत्यक्ष विज्ञापन की स्पष्ट परिभाषा के अंतर्गत अन्य बातों के अलावा तम्बाकू उत्पादों के विज्ञापन पर प्रतिबंध।

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/ चाहती हूं/ चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 70 रुपये, दो वर्ष के लिए 135 रुपये, तीन वर्ष के लिए 190 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

.... पिन ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066

*कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर **निदेशक, प्रकाशन विभाग** को नई दिल्ली में देय हो।*

बुटिक में है रोज़गार के अवसर

अनिता वर्मा

देश की बढ़ती जनसंख्या तथा बेरोजगारी ने इंसान को कुछ–न–कुछ करने पर मजबूर कर दिया है, यही वजह है कि अब हाथ पर हाथ रखकर जिंदगी नहीं गुजारी जा सकती। आज शिक्षा में विषय ज्ञान के साथ प्रोफेशनल कोर्सों को भी शामिल करना सरकार ने अनिवार्य कर दिया है। भविष्य में नौकरी मिल ही जाए, यह जरूरी नहीं। अतः यदि लोगों ने अपनी पढ़ाई के साथ टेक्निकल एवं प्रोफेशनल कोर्सों की पढ़ाई की है तो वह भविष्य में कोई न कोई रोजगार में जा सकते हैं और किसी भी प्रकार के अवसाद तथा कठिनाइयों से दूर रह सकते हैं।

वर्तमान में प्रोफेशनल कोर्सों की सुलभता ने रोजगार के अवसरों को बढ़ावा है यही वजह है कि आप इन कोर्सों को करने के बाद खाली नहीं बैठेगें बल्कि आप स्वरोजगार की दिशा में अपने कदम बढ़ा सकते हैं साथ ही अन्य बेरोजगार लोगों को रोजगार तथा प्रशिक्षण प्रदान कर उनको भी ऊंचा उठा सकते हैं बशर्ते कि आप में निष्ठा, ईमानदारी, धैर्य और जुझारूपन का जज़्बा हो।

यदि आपको कपड़ो के डिजाइन, रंग, उनके आकार आकर्षित करते हैं तो आप निःसंदेह ही फैशन डिजाइनिंग क्षेत्र में व्यवसाय के रूप में "बुटिक" खोल सकते हैं। अभी तक सिर्फ विदेशों में शापिंग मॉल हुआ करते हैं किंतु अब भारत में कई शापिंग मॉल खुल चुके है और यहां उनके खुलने से बुटिक व्यवसाय और भी अधिक निखरा है। बुटिक की खासियत होती है कि वह ग्राहकों की खर्च, पसंद, मांग के अनुरूप उनको डिजाइन करके कपड़े देती है। यहां पर डिजाइनों की विविधता पर विशेष ध्यान देना होता है अर्थात डिजाइन का रिपीटेशन न हो। आज हर इंसान औरों से अलग दिखना चाहता है, कहीं भी अपनी प्रस्तुति को आकर्षक और प्रभावी बनाना चाहता है, यही वजह है कि आज फैशन डिजाइनिंग का यह क्षेत्र फायदेमंद और विकल्पों से भरपूर लचीला कैरियर साबित हो रहा है। इसमें हर स्टेट्स के लोग रुचि ले रहे हैं, किसी वर्ग विशेष का व्यवसाय नहीं रह गया है। अतः इस व्यवसाय को आप तीन तरीके से संचालित कर सकते हैं–

क. स्वयं की दुकान खोलकर,

ख. घर के किसी हिस्से को बुटिक का रूप देकर, और

ग. ग्राहकों के घर, हॉस्टल जाकर उनसे आर्डर लेकर।

बुटिक की शुरुआत

एक मध्यम स्तर का बुटिक खोलने में कम से कम 20 हजार रुपये की आवश्यकता होती है। इसमें आपको दो सिलाई मशीन, एक कढ़ाई मशीन, एक पीको मशीन तथा एक ओवरलॉक मशीन की आवश्यकता होती है। इसके साथ ही वर्क टेबिल, विभिन्न प्रकार के कैंची, सुइयां इत्यादि को मिलाकर इस व्यवसाय को आरंभ किया जा सकता है। यदि कारीगर रख रहे हैं तो उन्हें तनख्वाह या कमीशन के आधार पर रखा जा सकता है। तैयार किए गए कपड़ों की कीमत उनकी डिजाइनिंग तथा क्वालिटी पर निर्भर करती है। आकर्षक "विंडो डिसप्ले" बुटीक का एक अहम् हिस्सा है इसके लिए विभिन्न प्रकार के आधुनिक हैंगर, स्टैंड, कपड़ों के सजीव प्रदर्शन हेतु मैनक्वीन आदि भी रखा जाना चाहिए। बुटिक आकर्षक व सुन्दर दिखे इसके लिए आवश्यक है कि वहां रोशनी का बढ़िया इंतजाम हो। चेंजिग रूप को भी प्रकाशमान तथा हवादार होना चाहिए।

शो–केस

किसी भी बुटिक की काम के गुणवत्ता के साथ–साथ उसके बाहरी साज–सज्जा पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए जैसे–शीशे के दरवाजे, व शो केस। शो केसों में सजे अच्छे डिजाइन किए कपड़े, डिजाइंस, शो–बटन, डिजाइन के एक्सेसरीस् आदि।

प्रशिक्षण

आज भारत में विभिन्न संस्थानों पर ड्रेस डिजाइनिंग, टेक्सटाइल डिजाइनिंग तथा इससे संबंधित सभी प्रकार के कोर्सों की व्यवस्था उपलब्ध है। निफ्ट, सिफ्ट इन्हीं कोर्सों में विशेषज्ञता प्रदान करते हैं। यदि कोई व्यक्ति इन संस्थानों में किन्हीं कारणों से प्रवेश नहीं भी ले पाता तो उनके लिए भी व्यवस्था है। आज हर शहर में सरकार ने प्रशिक्षण केंद्र खोले हैं जैसे– जन शिक्षण संस्थान, पालिटेक्निक आदि। जहां कटिंग एण्ड टेलरिंग, ड्रेस डिजाइनिंग से संबंधित कोर्स कराये जाते हैं। प्रशिक्षण के उपरांत आप अपना 'बुटिक' खोल रोजगार आरंभ कर सकती हैं।

कोर्स का महत्व

फैशन डिजाइनिंग के क्षेत्र में फैशन के ऐतिहासिक प्रारूपों से लेकर समकालीन विविधताओं के बारे में जानकारी रखना आवश्यक है। अच्छे तथा बड़े संस्थानों में पाठ्यक्रम के दौरान कपड़ों के हर पहलू के बारे में बताया जाता है। कपड़ों की बुनाई, रंगाई, छपाई, प्रिंटिंग के तकनीकों से लेकर कपड़ों की कटाई, सिलाई, पैटर्न, लेआऊटस् आदि के बारे में गहन जानकारी दी जाती है। एक्सपोर्ट मार्केट में प्रेजेंटेशन, मर्केनडाइजिंग, पब्लिक रिलेशन, क्लाइंटस, पैटर्न की सही जानकारी, अंतर्राष्ट्रीय फैशन शो एवं प्रदर्शनी आयोजित कराने इत्यादि की जानकारी दी जाती है। इसके साथ ही फैशन फोटोग्राफी, विंडो डिसप्ले के बारे में भी पूर्ण जानकारी प्रदान की जाती है। इसके लिए कम से कम बारहवीं तक की शिक्षा अनिवार्य है। हर संस्थानों में प्रवेश प्रक्रिया अलग–अलग होती है। कहीं सीधे प्रवेश तो कहीं लिखित और साक्षात्कार के आधार पर दाखिला मिलता है।

बुटिक का प्रचार–प्रसार

अपना बुटिक आरंभ करने से पहले ही आप उसका प्रचार–प्रसार आरंभ करें। अपने बुटिक के आस–पास के इलाकों में पर्चे बंटवा दें तथा विभिन्न जगहों पर छोटे–छोटे बोर्ड तथा बैनर लगवा दें। स्थानीय केबल चैनल पर भी विज्ञापन अपनी आर्थिक स्थिति को देखते हुए दे सकते हैं। जो भी ग्राहक आए उन्हें संतुष्ट करने की कला आपमें होनी चाहिए साथ ही संयम भी। यदि ग्राहक आपसे संतुष्ट हो जाता है तो समझिए कि वह आपका नियमित ग्राहक हो गया। ग्राहक एक बार फिटिंग व सूट कर जाने वाले स्टाइल को बाद में जल्दी–जल्दी प्रयोग नहीं करना चाहता है। ✱

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार है)

जूट उद्योग का विकास

सरकार ने पटसन उद्योग के समग्र विकास ओर वृद्धि को हासिल करने के लिए 15 अप्रैल 2005 को राष्ट्रीय पटसन नीति का एक उद्देश्य निर्यात को 1000 करोड़ रुपये के वर्तमान स्तर से 2010 तक 5000 करोड़ रुपये तक बढ़ाना है।

इस उद्देश्य से : ● डब्ल्यू.टी.ओ. से संबंधित योजनाओं सहित विशिष्ट कार्य योजनाएं और नीतिगत उपाय तैयार करने के लिए तथा वित्त पोषण संबंधी प्रस्तावों की बारीकी से मानीटरिंग के लिए एक बहु–विषय–संस्थागत तंत्र स्थापित किया जाएगा। ● प्रौद्योगिकी तक पहुंच प्राप्त करने के उद्देश्य से ऋणनीतिक गठबंधन आगे बढ़ाए जाएंगे। विशिष्ट रूप से पटसन और पटसन उत्पादों के लिए ब्रांड इक्विटी निधि गठित की जाएगी। यह डब्ल्यू.टी.ओ. मानदंडों के अनुसार होगी। ● प्रस्तावित पटसन बोर्ड निर्यात संवर्धन परिषद को शामिल करेगा जो डब्ल्यू.टी.ओ. के विभिन्न करारों के तहत विवादों का निपटान करने, प्रमुख पटसन एवं पटसन उत्पाद आयातक देशों के भंडारण की सुविधाओं की स्थापना करने और भारतीय अनुसंधान एवं विकास प्रयासों को पेटेंट कराने के दृष्टि से मौजूदा पेटेंट संबंधी मुद्दों का पता लगाने के लिए सुविधादाता और व्यवसायिक परामर्शदाता की भूमि निभाएगी।

विभिन्न क्षेत्र के आधुनिकीरण और प्रौद्योगिकीय उन्नयन के लिए कार्यक्रम में (1) गुणवत्ता एवं लागत प्रतिस्पर्धात्मकता के मुद्दों का समाधान करते हुए वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुसार पटसन सामानों के विनिर्माण का पुनः अभिमुखीकरण, (2) पटसन विविधकृत उत्पादों की मांग में वृद्धि के मद्देनजर पटसन यार्न एवं ट्वाइन निर्यात क्षेत्र को शक्तिशाली बनाना, (3) पर्यावरण के अनुकूल विनिमार्ण प्रक्रिया को अपनाया तथा (4) जैव–वस्तुओं सहित पटसन तकनीकी वस्त्रों का वाणिज्यकीकरण करने के लिए अनुसंधान एवं विकास संबंधी प्रयास बढ़ाना शामिल है। पटसन उद्योग के आधुनिकीरण के लिए प्रौद्योगिकरण के लिए प्रौद्योगिकी उन्नयन निधि योजना (टीयूएफएस) और पटसन विनिर्माण विकास परिषद (जेएमडीसी) प्रोत्साहन योजना जैसी मौजूदा योजनाओं को सुदृढ़ किया जाएगा। ✱

जवार की पैदावार बढ़ाने के लिए कुछ नुस्खे

सरकार ने जवार उगाने वाले किसानों को जुलाई के पहले सप्ताह तक या मानसून की पहली बारिश के तुरंत बाद जवार की बुआई पूरी करने की सलाह दी है। खरीफ के मौसम के दौरान जवार महाराष्ट्र, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश व हरियाणा में बोई जाती है।

नमी का अधिक उपयोग करने व अधिक पैदावार करने के लिए कृषि विशेषज्ञों ने क्यारीदार बुआई का तरीका अपनाने की सलाह दी है। अधिक पैदावार देने के वाले उच्च गुणवत्ता के प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें। ये बीज एक हेक्टेयर में 8 कि.ग्रा. के हिसाब से बोये जाने चाहिए। बीजाई से पहले बीजों को फफूंदी और ट्रिकोडरमा से उपचारित करें, इससे बीज जनित बीमारियों से बचा जा सकेगा। जवार के लिए प्रति हैक्टेयर 80 किलोग्राम नाईट्रोजन का 50 प्रतिशत तथा शत–प्रतिशत फास्फेट 205 डालें और शेष नाईट्रोजन 50 प्रतिशत बीजाई के 30 दिन बाद डालें।

कृषि विशेषज्ञों ने अधिक पैदावार व संभावित नुकसान से बचने के लिए लाल चने/हरे चने/काले चने या किसी ऐसी ही बीच की अन्य फसल लेने की सलाह दी है। खेतों के तालाबों में वर्षा का पानी इकट्ठा करें तथा लंबे सूखे की स्थिति में फसल की रक्षा के लिए इसके जरिए सिंचाई करें। बारिश न होने तथा सूखे गंभीरता को देखते हुए प्लांट स्टेंड को कम करें। भूमि की नमी को बचाने के लिए उखड़े हुए पौधों का मल्च के रूप में प्रयोग करें।

कीटाणुओं की रोकथाम के लिए मिलेजुले कीटाणु नाशक का प्रयोग करें विशेषकर ऐसी किस्मों को इस्तेमाल में लाएं जो आम बीमारियों व कीटाणुओं से खुद को बचा सकें। ✱

नगरपालिका के ठोस अपशिष्ट आधारित ऊर्जा परियोजनाओं को 50 प्रतिशत सब्सिडी

अक्षय ऊर्जा स्रोत राज्य मंत्री ने यहां घोषणा की कि नगरपालिका के ठोस अपशिष्ट पर आधारित ऊर्जा परियोजनाओं को आगे से 50 प्रतिशत सब्सिडी दी जाएगी। इक्विटी में योगदान के रूप में ऋण की पहली किस्त मिलते ही उसे जारी कर दिया जाएगा। निवेशक का इक्विटी भार कम करने के लिए पहली बार सब्सिडी का इस्तेमाल किया जा रहा है। इससे जनता को बहुत फायदा होगा क्योंकि नगरपालिका के ठोस अपशिष्ट सभी शहरों की प्रमुख समस्या है।

आसानी से एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाए जाने वाले और यातायात में उपयोग होने वाली वैकल्पिक ईंधन प्रणाली के लिए बाजार में पैठ बनाना प्रथम प्राथमिकता है। बायो-ऊर्जा द्वारा ग्रामीण ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करना द्वितीय प्राथमिकता है। औद्योगिक, वाणिज्यिक और शहरों के लिए नई और अक्षय ऊर्जा प्रणाली विकसित करना तृतीय प्राथमिकता है तथा कोयले के स्थान पर ग्रिड आधारित अक्षय विद्युत विकसित करना चतुर्थ प्राथमिकता है। जिन 25,000 दूरस्थ गांवों को ग्रिड विद्युत से नहीं जोड़ा जा सकता, वहां वर्ष 2009 तक अक्षय ऊर्जा स्रोतों से ग्रिड गुणवत्ता वाली बिजली उपलब्ध करवाई जाएगी।

भारत और पाक ग्रामीण अर्थव्यवस्था में सुधार लाने पर सहमत

भारत और पाकिस्तान ने पंचायती राज के क्षेत्र में दोनों देशों के गांवों और गरीब जनता को सशक्त बनाने के लिए मिलकर कार्य करने पर सहमति व्यक्त की। पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस व पंचायती राज मंत्री, श्री मणिशकर अययर तथा पाकिस्तान के पंचायती राज संस्थान, राष्ट्रीय पुनर्निर्माण ब्यूरो के अध्यक्ष के बीच इस संबंध में विचार–विमर्श के बाद यह फैसला लिया गया।

दोनों नेताओं ने द्विस्तरीय और सार्क सहित बहुपक्षीय स्तर पर काम करने का निर्णय लिया है। इसके अलावा यह भी फैसला लिया गया। श्री डेनियल तीन महीनों में स्थानीय प्रशासनिक 50 सदस्यीय दल के साथ दिल्ली आएंगे और इस क्षेत्र की समस्याओं तथा मुद्दों का जायजा लेंगे। ✱

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

आर्थिक समृद्धि का सम्बल - हस्तशिल्प

नन्दिता मिश्र

भारतीय हस्तशिल्प अपनी सांस्कृतिक परंपरा और विरासत के लिए प्रसिद्ध है। हाथ की बनी चीजें यानी हस्तशिल्प। रोजमर्रा के उपयोग की शायद ही कोई ऐसी चीज होगी जिसे गांव वालों ने न बनाया हो। वे अपनी जरूरत का सब समान खुद बना लेते थे। आज भी कम ज्यादा यहीं परिस्थिति है। निर्माण जब खुद के लिए किया जाता है तो उसका कोई आर्थिक आकलन नहीं होता है, पर जब वही वस्तु किसी को उपहार में देने या विक्रय के लिए बनाई जाती है तो उसका रूप थोड़ा परिष्कृत होता है। यही सुधरा और निखरा रूप उसे शिल्प की श्रेणी में ले आता है। हस्तशिल्प का संसार बड़ा विशाल है। आज हस्तशिल्प शिल्पकारों की आर्थिक समृद्धि की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। वे पिछले कुछ वर्षों में पनपी हैं और शहरी पैठ हो रही है। इसका लाभ केंद्र और राज्य सरकारों को हो रहा है तथा कारीगरों के जीवनस्तर में कुछ सुधार आया है। यह उनकी जीविका का साधन बन गया है। कुछ शिल्प जो भुलाये जा रहे थे, उन्हें पुनर्जीवन मिला है।

हस्तशिल्प वैसे तो राज्य का विषय है लेकिन केंद्र सरकार का वस्त्र मंत्रालय देश की सांस्कृतिक परम्परा और विरासत के उन्नयन के लिए सतत प्रयत्नशील रहा है। वर्ष 1950–51 में इस क्षेत्र से लगभग तीन लाख लोग जुड़े हुए थे। करीब 1600 करोड़ रुपये का उत्पादन होता था। आज 75 लाख से अधिक कारीगर इससे जुड़े हैं और 33 हजार करोड़ रुपये की विदेशी मुद्रा अर्जित करने में अपना योगदान दे रहे हैं।

केंद्र की सरकार की ओर से विकास आयुक्त (हस्तशिल्प) यह काम संभालता है। यह एक नोडल एजेंसी है जिसके क्षेत्रीय कार्यालय हैं। 6 क्षेत्रीय तकनीक विकास केंद्र हैं जिनके 60 से भी अधिक फील्ड अफसर अपना कार्य बखूबी निभाते हैं। विकास आयुक्त के कार्यालय की ओर से केंद्रीय स्तर पर विभिन्न विकासात्मक योजनाएं लागू की जाती हैं और हस्तशिल्पों को मदद दी जाती है। नौवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान 34 योजनाएं कार्यान्वित की गयीं। 10वीं पंचवर्षीय योजना में 8 नई योजनाएं अनुमोदित की गयी हैं। इन सभी का मुख्य उद्देश्य कारीगरों के समूहों को व्यवसायिक रूप से व्यवस्थित और आत्म–निर्भर बनाकर उनका उद्यमियों के रूप में विकास करना है। कुछ प्रमुख योजनाएं हैं–बाबा साहेब अम्बेडकर हस्तशिल्प विकास योजना, विपणन सहायता और सेवाएं, डिजाइन और तकनीकी उन्नयन, निर्यात संवर्धन अनुसंधान और विकास, प्रशिक्षण और विस्तार। इनके आलावा केंद्र एक योजना के तहत राज्य हस्तशिल्प विकास निगमों को वित्तीय सहायता देता है।

हस्तशिल्प के व्यापार के पनपने के पीछे इन योजनओं की बड़ी भागीदारी है। केंद्र और राज्य सरकारों के अपने एम्पोरियम बड़े शहरों में हैं। छोटे शहरों के उपभोक्ताओं को उनका लाभ नहीं मिलता था। इस अभाव को दूर किया–प्रदर्शनी, मेले और हाट बाजारों ने। आज दिल्ली का प्रगति मैदान, सूरज कुंड का मेला और दिल्ली हाट में लगभग वर्ष भर चलने वाले विशिष्ट मेलों से शिल्पियों को लाभ मिला और उनका उत्साहवर्धन हुआ। अब जगह–जगह राष्ट्रीय हस्तशिल्प प्रदर्शनी लगती है। शिल्पबाजार, शहरी हाट, स्थानीय हाट, एम्पोरियम और शिल्प विकास केंद्र लोगों के आकर्षण का केंद्र बन गये हैं। राष्ट्रीय राज्य और स्थानीय स्तर पर विपणन विस्तार आदि की कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। इससे हस्तशिल्प का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

केंद्र सरकार ने गुरू शिष्य परंपरा के तहत प्रशिक्षण के लिए सहायता का प्रावधान रखा है। इससे लुप्त होते हस्तशिल्प की विभिन्न धाराओं को फिर से मंच मिला। केंद्र सरकार हस्तशिल्प के क्षेत्र में राष्ट्रीय पुरस्कार देती है इससे शिल्पियों को सम्मान और प्रसिद्धि मिलती है।

घरेलू उपायों के साथ–साथ हस्तशिल्प निर्यात ने भी इस क्षेत्र के विकास में बड़ा योगदान किया है। निर्यात के क्षेत्र में मुख्य रूप से ऊनी और रेशमी कालीनों तथा फर्श का कवर निर्यात किया जाता है। कलात्मक धातुपात्र, काष्ठ कला, हाथ के वस्त्र, स्कार्फ, क्रोशिया, कसीदाकारी, शाल, जरी और जरदोजी, नकली आभूषण तथा अन्य हाथ की बनी बहुत सी चीजों के विदेशी खरीददार हैं। हस्तशिल्प निर्यात संवर्धन परिषद ने निर्यात बढ़ाने के लिए कई काम किए हैं। 1998–99 में 7 हजार 158 करोड़ रुपये का निर्यात किया गया। एक अनुमान के अनुसार दसवीं योजना में हर वर्ष औसतन बीस प्रतिशत वृद्धि का लक्ष्य रखा गया है। आस्ट्रेलिया, कनाडा, फ्रांस, जर्मनी, इटली, जापान, नीदरलैंड, सउदी अरब, स्विटजरलैंड, अमेरिका और इंगलैंड भारत से हस्तशिल्प की वस्तुएं खरीदने वाले प्रमुख देश हैं। 2002–03 में इन देशों को लगभग 8400 करोड़ रुपये का निर्यात किया गया। 2003–04 में यह धनराशि बढ़कर 10465 करोड़ रुपये हो गयी। पिछले वित्तीय वर्ष में केंद्र के प्रयत्नों और शिल्पकारों की मेहनत ने निर्यात को 13102 करोड़ रुपयों तक पहुंचा दिया।

हस्तशिल्प के क्षेत्र में चीन, ताइवान, कोरिया, फिलीपीन्स और पाकिस्तान हमारे प्रतिस्पर्धी हैं। लेकिन केंद्र सरकार निर्यात संवर्धन के लिए हर संभव कदम उठा रही है। देश में कार्यशालाएं, प्रदर्शनी आदि के आयोजन के अलावा हांगकांग, श्रीलंका, ब्रिटेन, जर्मनी, थाईलैंड, स्पेन, अमेरिका आदि में आयोजित कार्यक्रमों में हमारे निर्यातकों की अच्छी भागीदारी रही। उन्हें खूब वाह–वाही मिली और व्यापार के रास्ते खुले।

हस्तशिल्प के क्षेत्र में देश और विदेश में प्रगति इस क्षेत्र को मिलने वाली सुविधाओं की परिचायक है। हमारे हस्तशिल्प की मांग दिनोंदिन बढ़ रही है। भारतीय हस्तशिल्प की लोकप्रियता ने सांस्कृतिक परम्परा और विरासत को बनाये रखने में मदद की है। यह क्षेत्र आज लाखों लोगों को रोजगार देने में सफल हो रहा है तथा सामाजिक और आर्थिक संपन्नता की धुरी बन गया है। ✱

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

राष्ट्रीय जूट नीति

संदीप दासगुप्ता

सुनहरे रेशे के नाम से पुकारा जाने वाला जूट, अन्य महंगे रेशों की तुलना में ज्यादा फायदेमंद और उपयोगी है। इसका आसानी से जैविक प्रक्रिया द्वारा क्षरण हो जाता है और अपेक्षाकृत कम कीमत पर मिल जाता है। आज जूट न केवल मुख्य वस्त्र रेशा है, बल्कि विनिर्मित उत्पादों के लिए कच्चे माल के रूप में भी इसका उपयोग होता है। जूट से पर्यावरण संरक्षण व पारिस्थितिकी संतुलन में मदद मिलती है।

भारत में कच्चे जूट व जूट से तैयार माल का उत्पादन विश्व के अन्य देशों की तुलना में सबसे ज्यादा होता है। यहां अन्य देशों के मुकाबले अधिक क्षेत्रफल में जूट उगाई भी जाती है। भारत में प्रतिवर्ष औसतन 1620 हजार टन की उपज होती है और औसतन 200 हजार टन प्रति वर्ष निर्यात किया जाता है। जूट के निर्यात से देश को 75 हजार लाख रुपये की आमदनी होती है।

भारत में एक लाख हेक्टेयर भूमि में हो रही जूट की खेती में, 73 प्रतिशत भूमि अकेले पश्चिम बंगाल में पड़ती है। क्षेत्रफल के हिसाब से यह भूमि 5.8 लाख हेक्टेयर के करीब है। देश के कुल जूट का 80 प्रतिशत हिस्सा बंगाल में उगाया जाता है। देश में चल रही 78 जूट मिलों में 61 मिलें बंगाल में स्थित हैं। जूट उद्योग में 2.4 लाख श्रमिक कार्य करते हैं और 5 लाख व्यापारी इस उद्योग का लाभ उठा रहे हैं। सबसे महत्वपूर्ण बात है कि हमारे देश में जूट के विभिन्न उत्पाद बनाने वाली 1154 कंपनियों में 696 ईकाइयां मात्र बंगाल में हैं।

जूट उद्योग आज कई समस्याओं से जूझ रहा है। इस उद्योग में आधुनिकीरण उत्पाद विविधीकरण, श्रमिक हड़ताल, मिल मालिकों द्वारा खड़ी की गई समस्याएं और इस तरह की कई अनेक समस्याएं हैं। ऐसे परिदृश्य में राष्ट्रीय जूट नीति से इस क्षेत्र की समस्याओं को दूर किया जा सकेगा।

राष्ट्रीय जूट नीति की प्रस्तावना में कहा गया है–सरकार का राष्ट्रीय साझा न्यूनतम कार्यक्रम किसानों व श्रमिकों के लिए जूट का महत्व व जूट उत्पादन वाले राज्यों की अर्थव्यवस्था और विश्व स्तर पर इसके पारिस्थितिकीय महत्व को ध्यान में रखकर यह प्रस्ताव पारित करता है कि जूट उद्योग को सभी मामलों में नयी गति प्रदान की जायेगी।

भारत की अर्थव्यवस्था में जूट का विशेष स्थान है। इससे 40 लाख लोगों की जीविका चलती है, जिसमें जूट किसान, मजदूर, श्रमिक, स्वरोजगार वाले शिल्पी और बुनाई करने वाले खासकर पूर्व व पूर्वोत्तर भाग के लोग शामिल हैं। पर्यावरण के अनुकूल व सस्ती होने की वजह से विश्व स्तर पर इसकी पहचान बनी है। अब भारत ने भी इस तथ्य की ओर ध्यान दिया है कि अर्थव्यवस्था के इस महत्वपूर्ण क्षेत्र की ओर हाल के वर्षों में उचित महत्व नहीं दिया गया।

राष्ट्रीय जूट नीति में इस क्षेत्र को मजबूत और सुनहरा बनाने की बात कही गई है। इस बात पर बल दिया गया है कि जूट किसानों को लाभकारी मूल्य दिया जाए, राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय मांग के अनुसार अच्छी गुणवत्ता, पूर्ण कच्चे जूट उत्पादन व जूट उत्पादकता के विनिर्माण को प्रोत्साहित किया जाए। सरकार को उम्मीद है कि इससे जहां दीर्घकालीन रोजगार व देश का आर्थिक विकास होगा वहीं विश्व बाजार में ज्यादा हिस्सेदारी के लिए देश प्रतिस्पर्धा करेगा।

इस नीति में इस बात की चर्चा है कि प्रति हेक्टेयर जूट के उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि लाई जाए। इसके तहत जूट क्षेत्र को विनिर्माण व जूट उत्पादक की दृष्टि से वैश्विक स्तर पर एक पहचान दिलायी जाए और पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए इसे अत्याधुनिक बनाया जाए। इन उद्देश्यों के लिए इस क्षेत्र में विदेशी निवेश के साथ–साथ अनुसंधान व विकास पर भी पर्याप्त ध्यान देने की जरूरत है। इन गतिविधियों से जहां जूट उद्योग के क्षेत्र में पारंपरिक ज्ञान व कौशल का संरक्षण होगा, वहीं इस क्षेत्र में नवीनता आयेगी। नीति में सूचना प्रौद्योगिकी को जूट उद्योग का अभिन्न अंग बनाने की भी बात कही गयी है। इस नीति में जूट व जूट उत्पाद को प्रतिवर्ष 15 प्रतिशत बढ़ाने की चर्चा की गयी है। राष्ट्रीय जूट नीति का उद्देश्य 2010 तक जूट का निर्यात व्यापार 100 लाख रुपये से बढ़ाकर 500 लाख रुपये तक कर दिया जाए, हालांकि यह कठिन अवश्य है, पर असंभव नहीं। इसके लिए ईमानदार व सार्थक प्रयास करने की जरूरत है।

जूट उद्योग में विभिन्न समस्याएं सिथेंटिक कपड़ों से प्रतिस्पर्धा, ऊंची पारिश्रमिक, पुरानी मशीनें और आर्थिक रूप से पिछड़े होना जैसी समस्याओं को दूर करने के लिए कई तकनीकी उन्नयन, कच्चे जूट के भंडारण व विपणन के लिए मूलभूत ढांचे का विकास व जूट के विविध उत्पाद निर्माण करने होंगे। जूट उद्योग को जीवंत बनाये रखने के लिए खाद्यान्नों व चीनी की पैकेजिंग के लिए आरक्षण बने रहना चाहिए, हालांकि सरकार इसकी समय–समय पर समीक्षा करती रहती है। इस नीति का मुख्य बिंदु राष्ट्रीय जूट बोर्ड की स्थापना है जो जूट उद्योग से जुड़ी हरेक संस्था के बीच समन्वय स्थापित करेगा। सरकार इस दिशा में राष्ट्रीय प्राकृतिक रेशा संस्थान स्थापित करने पर विचार कर रही है जिससे किसानों को उन्नत किस्म के जूट के उत्पादन व जूट उत्पादों के विविधिकरण में सहयोग प्राप्त होगा। इसके अलावा योजना आयोग द्वारा अनुमोदित जूट तकनीकी मिशन भी कार्यशील बनाये जायेंगे।

नई राष्ट्रीय जूट नीति से बीमार जूट उद्योग को विकसित होने में काफी मदद मिलेगी और एक सुनहरे आर्थिक वातावरण का निर्माण होगा। ✱

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

जटरोफा उगाएं, बायोडीजल बनाएं

आर.सी. जोशी

भारत की सबसे बड़ी संसाधन संबंधी जिम्मेदारी पेट्रोलियम उत्पादों में इसके निवेश से जुड़ी है। भारतीय अर्थव्यवस्था में उच्च विकास दर बनाए रखने के लिए ये उत्पाद अति आवश्यक हैं। आज भारत में हर वर्ष करीब 111 मिलियन टन पेट्रोलियम उपादों का उपयोग किया जाता है। इसमें से केवल 33 मिलियन टन ही देश में कच्चे तेल के रूप में उत्पादित होता है, जिसका अर्थ है कि घरेलू साधनों से केवल 30 प्रतिशत तक जरूरतें पूरी होती हैं। मांग और आपूर्ति में यह अंतर आगे और भी बढ़ सकता है क्योंकि भारतीय अर्थव्यवस्था प्रति वर्ष लगभग आठ प्रतिशत की दर से बढ़ने की उम्मीद है। 2020 तक आयात पर हमारी निर्भरता 85 प्रतिशत तक होने का अनुमान है।

कच्चे तेल का शोधन करने पर हमें विभिन्न पेट्रोलियम उत्पाद मिलते हैं तथा उपभोग के लिहाज से इनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण है हाई स्पीड डीजल। एचएसडी। जिसे आम भाषा में डीजल कहा जाता है। भारत में हर वर्ष करीब 40 मिलियन टन डीजल की खपत होती है। सभी पेट्रोलियम उत्पादों के कुल खपत को देखा जाए तो लगभग 36 प्रतिशत बैठता है। इसलिए इस खर्च को वहन करने के लिए निश्चित रूप से कुछ अतिरिक्त या वैकल्पिक साधनों की खोज के लिए पहल करनी होगी। इसी को ध्यान में रखते हुए विश्व की सरकारों विशेषकर यूरोप व अमरीका का ध्यान खाद्य एवं गैर-खाद्य तेल बीजों से बायो-डीजल तैयार करने की ओर आकर्षित हुआ है। भारत में भी पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय के तत्वाधान में सरकारी स्तर पर तथा व्यापार जगत द्वारा विशेषकर तेल क्षेत्र के सार्वजनिक उपक्रमों द्वारा कई ऐसे कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। पेट्रोलियम मंत्रालय के निर्देश पर पेट्रोलियम कन्जर्वेशन एंड रिसर्च एसोसिएशन। पीसीआरए। ने दिल्ली स्थित अपने मुख्यालय में एक बायो-फ्यूल सेंटर खोला है जिससे जटरोफा बायो-डीजल बनाने का संदेश जनता को दिया जाता है। तेल के सरकारी उपक्रम, भारतीय तेल निगम। आईओसी। तथा हिन्दुस्तान पेट्रोलियम निगम। एचपीसीएल। हरियाणा, गुजरात तथा मुम्बई की राज्य परिवहन बसों में बायो-डीजल के विभिन्न मिश्रणों को डीजल में मिलाकर प्रायोगिक तौर पर इसका इस्तेमाल कर रहे हैं।

आईओसी। आरएंडडी। द्वारा विभिन्न खाद्य तेलों, जिनमें चावल की भूसी, जटरोफा करकस, पाम, करंजिया, सनफ्लावर आदि शामिल हैं, से बायो-डीजल बनाने की कृत्रिम विधि का गहन अध्ययन किया गया और विकसित तकनीक को गोआ की मैसर्ज विनस इथोसिदर्स को साधारण तकनीक शुल्क पर हस्तांतरित किया गया। आईओसी। आरएंडडी। ने फरीदाबाद में एक गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगाशला स्थापित की है, इसमें सभी गुणवत्ता नियंत्रण उपकरण लगा दिए गए हैं जो एएसटीएम/बीआईएस विशिष्टताओं के अनुरूप गुणवत्ता की जांच कर सकेंगे।

आईओसी ने बायो-डीजल का पूर्ण अध्ययन करने के लिए भारतीय रेलवे के साथ एक समझौता किया है। इस समझौते के अनुरूप आईओसी ने गुजरात के सुन्दर नगर में 70 हेक्टेयर भूमि पर जटरोफा की खेती शुरु की है। जटरोफा के एक लाख पौधे इस भूमि पर उगाए गए हैं। यह देश में अपने किस्म का पहला ऐसा प्रोजेक्ट है जिसमें जटरोफा बायो-डीजल के हर पहलू पर अध्ययन किया जाएगा। आईओसी ने रेल इंजनों में बायो-डीजल का इस्तेमाल सफलतापूर्वक किया है।

बायो-डीजल कृषि पर आधारित डीजल ईंधन का विकल्प है तथा इसे अप्रयुक्त व प्रयुक्त दोनों प्रकार के खाद्य तथा अखाद्य तेलों के बीजों व पशुओं की चर्बी से तैयार किया जाता है और इसे डीजल के विकल्प के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। बायो-डीजल तैयार करने के कार्य को अहमियत देते हुए सरकार ने योजना आयोग की सहमति के लिए एक राष्ट्रीय मिशन व विस्तृत परियोजना रिपोर्ट। डीपीआर। तैयार की है। पंचायती राज संस्थाएं भी बायो-डीजल तैयार करने की प्रक्रिया में मदद कर सकती हैं। पंचायती राज मंत्रालय ने बचे-खुचे क्षेत्रों, पंचायती भूमि तथा खेतों की पगडन्डी पर जटरोफा की खेती करने के लिए जागृति पैदा करने का काम उनके जिम्मे सौंपा है। पसूका।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए जटरोफा फसल लगाने पर जोर

हरित क्रांति की तरह ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए व्यावसायिक गतिविधि के रूप में जटरोफा सकर्स की फसल उगाने पर जोर दिया जा रहा है। पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस तथा पंचायती राज मंत्रालय की संयुक्त सलाहकार समिति को संबोधित करते हुए केंद्रीय मंत्री श्री मणिशंकर अय्यर ने कहा कि ग्रामीण क्षेत्रों में यह पंचायती राज संस्थानों की मदद से किया जा सकेगा। श्री अय्यर ने घोषणा की कि उन्होंने पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस तथा पंचायती राज मंत्रालयों की एक संयुक्त समिति गठित की है जो जटरोफा पौधों की पैदावार में पंचायती राज संस्थानों की भागीदारी के बारे में अपनी सिफारिश देगा। उन्होंने कहा कि ग्रामीण क्षेत्रों में बिना फसल पद्धति को बदले इस फसल की पैदावार सामुदायिक भूमि पर एक अतिरिक्त फसल के रूप में की जा सकती है।

बायो डीजल जैसे वैकल्पिक ईंधन की व्यवस्था संभव करना अपने आप में एक महत्वपूर्ण बात है जब भारतीय अर्थव्यवस्था दर का लक्ष्य 7 प्रतिशत रखा गया है। इसके पीछे हमारा लक्ष्य ऊर्जा सुरक्षा यानी ईंधन के क्षेत्र में आत्म निर्भर होना है। भारत वर्तमान में 70 प्रतिशत तेल आयात करता है और 2020 तक इसके 85 प्रतिशत हो जाने की संभावना है। इसके अलावा पंचायती राज संस्थानों की मदद से जटरोफा सर्कस और पोनमोमिया जैसी फसलों की पैदावार कर ग्रामीण इलाकों में अतिरिक्त आय की व्यवस्था का स्रोत तथा रोजगार पैदा करने के साथ–साथ बेकार पड़ी भूमि का उपयोग किया जा सकता है। गौरतलब है कि पौधों से बायो–डीजल पैदा किया जाता है जो पर्यावरण की दृष्टि से भी काफी सहयोगी है।

पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस मंत्रालय के ऊर्जा स्रोत के परिदृश्य की ही तरह पंचायती राज मंत्रालय नें बायो डीजल तैयार करने वाले पौधों की खेती के लिए अपने तीन स्तरीय ढांचे को विभिन्न कार्यों की जिम्मेदारी सौंपी है। इसमें मीडिया के सहयोग से लोगों में जागरूकता पैदा करना, इस कार्यक्रम में विभिन्न पंचायतों को चिन्हित करना, नावेड वार्ड से सहयोग, राष्ट्रीय दूध विकास बोर्ड तथा कृषि एवं वन विभाग को शामिल करना है। ✱

मोबाइल टेलीफोनी का जादू

सतीश पांडया

एक बड़ी पुरानी कहावत है, जादू वह जो सर पर चढ़ कर बोले। इसका, सब से ठोस और जीता–जागता प्रमाण है – मोबाइल फोन। अपने देश में मोबाइल फोन का जन्म अगस्त, 1995 में हुआ। इससे पहले 1881 में भारत में सामान्य टेलिफोन आ चुका था। इसका सीधा सादा सरल नाम था – टेलिफोन।

परन्तु 1995 में मोबाइल फोन के जन्म लेते ही, इस 114 वर्ष पुराने नाम को रातों–रात बदल कर स्थिर (फिक्स्ड) लाइन रख दिया गया। साथ ही इसका कार्य क्षेत्र भी निर्धारित किया गया – बुनियादी (बेसिक) सेवा प्रदान करना। इसीलिए यह बेसिक फोन भी कहलाने लगा।

लगभग 125 वर्ष पूर्व, भारत में टेलिफोन प्रणाली शुरू होने के बाद भी बेसिक सर्विस प्रदान करने के लिए, आज भी सड़कें खोदी जाती हैं। तार बिछाए जाते हैं और फिजीबिलिटी रिपोर्ट तैयार की जाती है जिसके आधार पर यह तय किया जाता है कि आपके घर तक टेलिफोन का केबल पहुंच सकता है या नहीं, अर्थात आपका निजी फोन लग सकता है या नहीं। इतना ही नहीं, बारिश के मौसम में टेलिफोन केबल में पानी चला जाता है, और आपका फोन कभी–कभी तो कई सप्ताह तक **डेड** पड़ा रहता है।

लेकिन मोबाइल फोन ने तो वास्तव में जादू कर दिया। बेतार–का तार (वायरलेस) होने के कारण मोबाइल फोन के लिए न तो सड़कें खोदी जाती है, न फिजीबिलिटी रिपोर्ट तैयार की जाती, न वर्षों तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है। प्रतीक्षा की घड़ियों का अन्दाजा आप इसी से लगा सकते हैं कि 31 मार्च, 2000 को स्थिर लाइन फोन लगवाने के कारण लिए 36 लाख 80 हजार से अधिक व्यक्तियों के नाम प्रतीक्षा सूची में थे। लेकिन जैसे–जैसे मोबाइल फोन का चलन बढ़ता गया, वैसे–वैसे यह प्रतीक्षा सूची भी कम होती गई। फिर भी 31 मार्च, 2004 को 17 लाख 91 हजार लोग एक सरल फोन की प्रतीक्षा कर रहे थे।

इसके विपरीत, मोबाइल प्रणाली के कोष में प्रतीक्षा नामक कोई शब्द है ही नहीं। इधर फोन के लिए प्रार्थनापत्र भरिए, उधर आनन–फानन, जादू की तरह आपका फोन हाजिर। यह फोन जीएसएम (ग्लोबल सर्विस मोबाइल) टेक्नोलॉजी पर आधारित है। आपकी हथेली के बराबर यह छोटा–सा फोन (हैंड सेट) आपके साथ कहीं भी चला जाता है। घर के अंदर, इस कमरे से उस कमरे में, छत पर, बाजार में, दफ्तर में, अस्पताल में, स्कूल में या फिर आप जहां कभी भी जा रहे हों, इसके द्वारा आपसे संपर्क किया जा सकता है, और आप भी सम्पर्क कर सकते हैं। इमरजेन्सी में संपर्क करने के लिए इससे अच्छे और किसी साधन का आज तक आविष्कार नहीं हुआ है।

यही कारण था कि हर एक व्यक्ति के मन में मोबाइल फोन लेने की लालसा जाग उठी। प्रारंभ में यह फोन आम आदमियों की पहुंच से बहुत दूर था। इसके दो प्रमुख कारण थे – एक तो हैन्डसेट के दाम लगभग 15 से 20 हजार रुपये और दूसरे इसके द्वारा फोन करने की दर, लगभग 16 रुपये प्रति मिनट। जो फोन करता था और जो व्यक्ति अपने हैन्डसेट पर फोन रिसीव करता था, दोनो को एक मिनट तक बात करने और सुनने के 16 रुपये देने पड़ते थे। इसके विपरीत फिक्स्ड फोन पर तीन मिनट तक बात करने के लिए केवल एक रुपया 20 पैसा देना पड़ता था। फोन रिसीव करने वाले के लिए यह सेवा निःशुल्क थी और आज भी है। इसलिए शुरू में चार वर्षों, यानी 1999 तक, मोबाइल फोन धनी व्यक्तियों की पहचान बना रहा, बल्कि यूं कहिए कि उनका एक **स्टेटस सिम्बल** था।

इसी बीच भारत में सीडीएमए (कोड डिवीजन मल्टीपल एक्सेस) नामक टेक्नोलॉजी का मान्यता मिल चुकी थी और एमटीएनएल द्वारा इस टैक्नोलॉजी पर आधारित लगाए गए लगभग एक हजार फोन राजधानी दिल्ली में प्रयोगात्मक रूप में काम भी कर रहे थे। सीडीएमए टेक्नालॉजी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि सबसे फिक्स्ड तथा मोबाइल दोनों सेवाएं प्रदान करने की क्षमता है। वायरलेस होने के कारण घरों में फिक्स्ड फोन भी उसी शीघ्रता से लगने लगे जैसे मोबाइल फोन। इस फिक्स्ड फोन का नाम है एफडब्ल्यूटी (फिक्स्ड वायरलेस टरमिनल)। इसका सबसे बड़ा लाभ है इसका शुल्क– तीन मिनट तक बात करने वही एक रुपया 20 पैसे, और इनकमिंग कॉल मुफ्त।

जनवरी, 2001 में भारत सरकार ने सीडीएमए टेक्नोलॉजी को लिमिटेड मोबाइल सेवा प्रदान करने की अनुमति दे दी। अर्थ यह कि इस टेक्नोलाजी द्वारा लगभग 25 किलोमीटर अर्ध व्यास के सीमित क्षेत्रफल में ही मोबाइल सेवा उपलब्ध कराई जा सकती है। परन्तु यह क्षेत्रफल इतना बड़ा था कि लगभग हर बड़े शहर में इस टेक्नोलॉजी पर आधारित मोबाइल फोन लगने लगे।

जीएसएम के साथ सीडीएमए द्वारा भी मोबाइल सेवा प्रदान करने की प्रतिस्पर्धा का एक नया दौर शुरू हुआ। एक ओर उदारीकरण और दूसरी ओर निजी क्षेत्र की बढ़ती हुई भागीदारी। देखते–देखते मोबाइल सेवा प्रदान करने वाली कंपनियों की संख्या बढ़ने लगी। वर्ष 1995 में 16 रुपये प्रति मिनट से घटकर वर्ष 2001 में मोबाइल सेवा की दर 4 रुपये तक पहुंच चुका था। इसी के साथ हैन्ड सेट के दामों में भी भारी गिरावट आई। परिणामस्वरूप सेवाओं का तेजी से विस्तार होने लगा।

वर्ष 2003 मोबाइल सेवा के इतिहास में एक स्वर्णिम वर्ष बन गया। इस वर्ष दो महत्वपूर्ण घटनाएं घटी। पहली मई, 2003 से मोबाइल फोन पर भी फिक्स्ड फोन की भांति **इनकमिंग काल** फ्री हो गई और 11 नवंबर, 2003 से बेसिक सेवा प्रदान करने वाली कंपनियों को मोबाइल सेवाएं प्रदान करने की छूट दे दी गई। सारांश यह है कि सीडीएमए टेक्नोलॉजी को भी सीमित के बजाए जीएसएम टेक्नोलॉजी की भांति **फुल मोबिलिटी** प्रदान करने की अनुमति मिल गई।

फिर तो मोबाइल सेवाओं में जैसे बाढ़–सी आ गई। पहले, दूसरे और तीसरे गियर से निकल कर मोबाइल सेवा चौथे गियर में चल रही थी कि तभी सीडीएमए टेक्नालॉजी ने पांचवां गियर लगाकर मोबाइल सेवाओं को अभूतपूर्व गति प्रदान कर दी। हर महीने, 10 लाख से भी अधिक मोबाइल फोन लगने लगे। यहां तक कि अक्तूबर, 2004 में एक ऐसी घटना घटी जिसकी कल्पना भी नहीं की गई थी। 13 अक्तूबर, 2004 को मोबाइल फोन धारक, बेसिक फोन धारकों को पीछे छोड़ कर आगे निकल गए।

टेलिफोन के इतिहास में भारत ने 13 अप्रैल, 2005 को एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। उस दिन टेलिफोन धारकों की कुल संख्या 10 करोड तक पहुंच गई। इनमें मोबाइल फोन धारकों की संख्या पांच करोड़ 40 लाख थी जबकि बेसिक (फिक्स्ड) फोन धारकों की संख्या चार करोड़, 60 लाख।

यही है मोबाइल का जादू। 124 वर्षों में जितने बेसिक फोन लगे उनसे लगभग एक करोड़ अधिक मोबाइल फोन केवल 10 वर्षों में लग गए। मोबाइल फोन के कारण ही टेलीडेन्सिटी (प्रति 100 व्यक्तियों पर टेलिफोन की संख्या) में भी वृद्धि हुई। आज से 10 वर्ष पहले, मुश्किल से डेढ़ प्रतिशत लोगों के पास टेलिफोन थे। लेकिन आज यह टेलिडेन्सिटी बढ़कर नौ प्रतिशत हो गई है। यानी प्रति 100 व्यक्तियों में से अब नौ व्यक्तियों के पास फोन है।

इस समय निजी क्षेत्र की पांच कंपनियां सीडीएमए सेवाएं और सात कंपनियां जीएसएम सेवाएं प्रदान कर रही हैं। इनके अतिरिक्त सार्वजनिक क्षेत्र की दोनों कंपनियां– बीएसएनएल तथा एमटीएनएल–सीडीएमए और जीएसएम दोनों सेवाएं प्रदान कर रही हैं।

सारांश यह है कि मोबाइल फोन की इस तेज दौड़ती हुई गाड़ी को सीडीएमए और जीएसएम नामक दो इंजन इतनी तीव्र गति से चला रहे हैं कि शीघ्र ही एक कीर्तिमान स्थापित हो जाएगा। आने वाले दो वर्षों में मोबाइल फोन धारकों की संख्या आज के पांच करोड़ की तुलना में 20 करोड़ तक पहुंच जाएगी, और सारे देश में लगभग 30 करोड़ लोगों के पास टेलिफोन हो जाएंगे। ★

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

दूर गांवों में बिजली पहुंचाने का कार्यक्रम

बुनियादी सुविधाओं में बिजली एक प्रमुख आवश्यकता है। इससे मानव की आधारभूत जरूरतें पूरी होती हैं और ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों का जीवन स्तर सुधरता है। कृषि और औद्योगिक विकास के लिए भी बिजली जरूरी है। 2001 की जनगणना के अनुसार 43.5 प्रतिशत ग्रामीण घरों को बिजली का कनेक्शन दिया गया है। 1991 की जनगणना के समय 30.5 प्रतिशत ग्रामीण घरों में बिजली थी। अक्तूबर 2004 तक देश में 90,344 गांवों में बिजली नहीं पहुंची थी। जिन गांवों का विद्युतीकरण हो चुका है, उनमें भी बड़ी तदाद में ऐसी बस्तियां हैं जहां बिजली नहीं है। इस तरह ग्रामीण आबादी की बहुत बड़ी संख्या बिजली से वंचित है और प्रकाश जैसी बुनियादी सुविधा के लिए मिट्टी के तेल वाले लैम्पों और लालटेनों पर निर्भर है। सरकार ने राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम के तहत वर्ष 2009 तक देश के सभी घरों में बिजली पहुंचाने का निर्णय लिया है।

पहले यह आकलन किया गया था कि जंगलों, पहाड़ों, रेगिस्तानों और द्वीपों जैसे दूरस्थ और दुर्गम स्थानों पर स्थित लगभग 18,000 गांवों का विद्युतीकरण नहीं हुआ है। इस सिलसिले में निर्णय लिया गया था कि ऐसे दूरस्थ गांव जहां पारंपरिक ग्रिड विस्तार के जरिए बिजली नहीं पहुंचाई जा सकती है वहां गैर-पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों की मदद ली जाए। लेकिन इन गांवों के नाम और उनकी अवस्थिति के बारे में अभी ठोस जानकारी नहीं है। इसलिए ऊर्जा मंत्रालय ने दूर-दराज के ऐसे गांवों का पता लगा कर उनकी सूची बनाने का काम शुरू किया है। यह सूची राज्यवार होगी।

सुदूर गांवों के विद्युतीकरण परियोजना कार्यक्रम के तहत उनके विद्युतीकरण के लिए सरकारी मदद दी जाती है। यह मदद गैर-पारंपरिक ऊर्जा स्रोतों यथा सौर ऊर्जा, बायोमास ऊर्जा, छोटे -छोटे जल-विद्युत, संयंत्र लगाने और जैव ईंधन पर आधारित योजनाओं के लिए दी जाती है। मंत्रालय ऐसी योजनाओं के लिए तकनीकी सलाह कुल लागत का 90 प्रतिशत खर्च और प्रारंभ के दस वर्षों के लिए रखरखाव खर्च उपलब्ध कराता है। इसके तहत बिना बिजली वाले गांवों की पहचान, परियोजना रिपोर्ट तैयार करने, विद्युत संयंत्रों को सम्मुन्नत और उनका विस्तार करने, ज्यादा से ज्यादा परिवारों को बिजली उपलब्ध कराने, प्रशिक्षण, प्रबंधन सुविधाओं का विकास, व्यावसायिक बैठकों और जागरूकता से संबंधित प्रोत्साहन गतिविधियों के लिए दिया जाता है।

परियोजनाओं के प्रभावी संचालन, प्रबंधन और स्थायित्व के लिए प्रारंभ से ही स्थानीय लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की जाती है। इन परियोजनाओं के दीर्घकालीन संचालन और प्रबंधन के लिए पर्याप्त उपाय किए गए हैं जिससे गांवों व बस्तियों में बिजली की आपूर्ति लगातार बनी रहे। इस कार्यक्रम के तहत 31 दिसंबर 2004 तक 1744 सुदूर गांवों और 572 सुदूर बस्तियों को बिजली दी जा चुकी थी। इस समय 1350 गांवों और 724 बस्तियों में इस योजना का कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों में है। ये परियोजनाएं 23 राज्यों में या तो पूरी हो चुकी हैं या कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों में हैं।

मंत्रालय ने देश के सभी गांवों को बायोमास और दूसरे नवीनीकरण युक्त स्रोतों द्वारा ऊर्जा सुरक्षा प्रदान करने की रूपरेखा तैयार की है। इसका उद्देश्य विद्युतीकरण से कहीं आगे जाकर परिवारों की सभी ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करना है। बायोमास से बिजली पैदा करने के क्षेत्र में नवीनतम खोजों से अब गांवों की सभी ऊर्जा आवश्यकताओं को बायोमास आधारित संयंत्र लगाकर पूरा किया जा सकता है। इससे लोगों को भरोसेमंद और सस्ती बिजली मिलेगी। ✱

ग्रामीण क्षेत्रों में 53 प्रतिशत लोगों के पास बिजली और 4 प्रतिशत के पास फ्रिज

देश में 51 प्रतिशत ग्रामीणों के लिए पेयजल का प्रमुख स्रोत ट्यूबवेल और हैंडपंप हैं। 27 प्रतिशत लोग कुंओं पर और 3 प्रतिशत लोग अन्य स्रोतों पर निर्भर हैं। तमिलनाडु में 77 प्रतिशत ग्रामीण, कर्नाटक में 60 प्रतिशत, गुजरात में 58 प्रतिशत और आंध्र प्रदेश में 54 प्रतिशत ग्रामीण लोगों के पेयजल का मुख्य स्रोत नल है। शहरों में पीने के पानी के लिए 74 प्रतिशत लोग (80 प्रतिशत लोग झुग्गी वासी) नलों पर, 20 प्रतिशत लोग ट्यूबवेल और हैंडपंपों पर और केवल पांच प्रतिशत लोग कुंओं पर निर्भर करते हैं। बिहार (69 प्रतिशत लोग), उत्तर प्रदेश (50 प्रतिशत) और असम (49 प्रतिशत) के शहरी क्षेत्रों में नलों की अपेक्षा ट्यूबवेल और हैंडपंपों का इस्तेमाल ज्यादा प्रचलन में है।

1993 के दौरान केवल 36 प्रतिशत ग्रामीण घरों में बिजली थी। 2002 में यह बढ़कर 53 प्रतिशत हो गई। 1993 के दौरान 81 प्रतिशत शहरी घरों में बिजली थी। इसकी तुलना में 2002 में 92 प्रतिशत लोग बिजली का इस्तेमाल प्रकाश के लिए कर रहे थे।

59 प्रतिशत शहरी लोग कूड़े–कचरे के नियमित निपटान के लिए नगर पालिका पर निर्भर करते हैं। 18 प्रतिशत लोगों कूड़े–कचरे के निपटारे के लिए खुद अपनी व्यवस्था कर रखी है जबकि 20 प्रतिशत लोगों के लिए कूड़े–कचरे के निपटान के लिए कोई प्रबंध नहीं है।

जहां तक यातायात साधनों का संबंध है, ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में करीब 48 प्रतिशत लोगों के पास साईकिल है। केवल सात प्रतिशत ग्रामीणों और 24 प्रतिशत शहरी लोगों के पास मोपेड या स्कूटर है। करीब 4 प्रतिशत शहरी लोगों के पास कार या जीप है वहीं करीब 2 प्रतिशत ग्रामीणों के पास ट्रैक्टर हैं। जहां तक मनोरंजन और संचार के साधनों का संबंध है, 26 प्रतिशत ग्रामीणों के पास टी वी है। और 10 प्रतिशत घरों में केबल कनेक्शन है। शहरी घरों में 41 प्रतिशत केबल सुविधा के साथ टी वी है और 66 प्रतिशत लागों के पास टी वी सैट हैं। केवल 26 प्रतिशत शहरी और 6 प्रतिशत ग्रामीणों के पास सैलफोन समेत टेलीफोन सुविधा उपलब्ध है। (2 प्रतिशत लोगों के पास लैंडलाइन और सैल्यूलर कनैक्शन हैं।)

केवल 1.4 प्रतिशत शहरी लोगों के पास इंटरनेट सुविधा सहित पीसी (पर्सनल कंप्यूटर) उपलब्ध थे जबकि 1.7 प्रतिशत लोगों के पास पीसी थे पर इंटरनेट नहीं था। ग्रामीण भारत में आम तौर पर इंटरनेट सुविधा सहित पीसी न के बराबर थे, जबकि 0.6 प्रतिशत ग्रामीणों के पास बिना इंटरनेट सुविधा के पीसी थे।

28 प्रतिशत शहरी घरों में फ्रिज, 15 प्रतिशत के पास कूलर और 11 प्रतिशत के पास वाशिंग मशीन है जबकि 4 प्रतिशत ग्रामीणों घरों में फ्रिज, 2.5 प्रतिशत के पास कूलर और एक प्रतिशत से भी कम ग्रामीणों के पास वाशिंग मशीन है। ✱

(कवर 2 का शेष भाग)

न्यूनतम समर्थन मूल्य

बुआई के मौसम में बहुत पहले ही न्यूनतम समर्थन मूल्य की घोषणा करना आवश्यक होता है ताकि किसान इन मूल्यों के आधार पर फसलों का चुनाव कर सकें। इस आवश्यकता को ध्यान में रख कर सरकार ने 20 अप्रैल 2005 को, 2005–06 की खरीफ फसलों के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्यों की घोषणा कर दी। कई वर्षों में यह पहली बार है कि बुआई के मौसम (जो मई जून में आरंभ होता है) से ठीक पहले न्यूनतम समर्थन मूल्य घोषित कर दिए गए हैं।

सरकार ने फसलों की विभिन्नता को प्रोत्साहित करने के लिए कई कदम उठाए हैं। खाद्यान, खासकर गेहूं और चावल की तुलना में दालों और तिलहनों के लिए अधिकतम समर्थन मूल्य निर्धारित किये गए। वर्ष 2004–05 में दालों में 1.501 करोड़ टन की रिकार्ड पैदावार हुई। इसी प्रकार तिलहन का उत्पादन 2.515 करोड़ टन की पैदावार से रिकार्ड स्तर के नजदीक पहुंच गया है। हालांकि 2004 में दक्षिण–पश्चिम मानसून से वर्षा कम हुई।

कपास का रिकार्ड उत्पादन

कपास मंत्रालय के कपास सलाहकार बोर्ड के अनुसार वर्ष 2003–04 में कपास के जहां 177 लाख गठ्ठों का उत्पादन हुआ, वहीं 2004–05 में 232 लाख गठ्ठों का उत्पादन हुआ। इस अवधि के दौरान कपास की उत्पादकता 394 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर से बढ़कर 440 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर हो गई और कपास कृषि क्षेत्र 76.3 लाख हेक्टेयर से बढ़कर 89.70 लाख हेक्टेयर हो गयी। भारी मात्रा में उत्पाद की दशा में किसानों को सस्ते दामों में कपास की बिक्री करने को बाध्य होने से बचाने के लिए सरकार ने भारतीय कपास निगम के अलावा नेफेड को भी कपास की खरीद के लिए नियुक्त किया है।

कृषि बाजार सुधार

कृषि बाजार में सुधार एक अन्य क्षेत्र है। जिसे वर्तमान सरकार बहुत महत्व दे रही है। कटाई के बाद की प्रक्रियाओं और विपणन के ढांचे जिसमें वर्गीकरण पैकेजिंग, परिवहन और विस्तृत स्तर पर भंडारण करने की जरूरत थी। विपणन और में पिछले वर्ष 2 योजनाओं को स्वीकृति दी गईः (1) ग्रामीण भंडारण योजना (2) कृषि बाजार ढांचे, श्रेणीकरण और मानकीकरण को विकसित करना। दूसरी योजना, सुधार से संबंधित है। उन राज्यों–केंद्र शासित क्षेत्रों को धन उपलब्ध कराया जायेगा जो अपने कृषि उत्पाद विपणन समिति अधिनियम में आवश्यकतानुसार सुधार करेंगे। प्रत्यक्ष विपणन, संविदा खेती को प्रोत्साहन मिल सकेगा और निजी तथा सहकारी क्षेत्रों में बाजारों की स्थापना हो सकेगी। 7 राज्यों तथा 4 केंद्र शासित क्षेत्रों में अब तक अपने अधिनियमों में संशोधन कर लिया है और अन्य राज्य भी इस दिशा में कार्यवाही शुरू कर चुके हैं।

किसानों पर राष्ट्रीय आयोग

किसानों पर राष्ट्रीय आयोग की पुनः स्थापना 2004 में की गई। इसमें किसानों के कार्यक्रमों और योजनाओं की जांच करने, नीतियां बनाने, सिफारिशें करनें और किसानों से जुड़े कई अन्य मुद्दों के बारे में उचित सलाह और हस्तक्षेप करने का अधिकार शामिल है। इससे कृषि के आर्थिक आधार और इससे जुड़ी गतिविधियों को बढ़ाने में मदद मिलेगी। आयोग ने अपनी पहली अंतरिम रिपोर्ट 'खेतों की देखभाल और बचाव' संबंधी रिर्पोट 2004 में जारी की है। आयोग अपनी अंतिम रिपोर्ट 13 अक्टूबर, 2006 में दे देगा। ✱

(साभार : प्रेस सूचना कार्यालय)

धान की बेहतर पैदावार के लिए स्री अपनाएं

सरकार ने किसानों को धान की बेहतर पैदावार के लिए जहां भी व्यावहारिक हो "सिस्टम ऑफ राइस इन्टेफिकेशन" (स्री) अपनाने की सलाह दी है। कृषि विशेषज्ञों ने किसानों को सलाह दी है कि आगामी खरीफ फसल के दौरान मिट्टी में जिंक की पोषक मात्रा को देखते हुए जिंक सल्फेट का इस्तेमाल करें। नाइट्रोजन (एन), फास्फोरस (पी) और पोटास (के) उर्वरक की मात्रा इस्तेमाल करने के लिए प्रति हेक्टेयर 10 टन हरी खाद का इस्तेमाल करें। उत्पादन लागत में कमी लाने के लिए ड्रम–सीडर उपयोग में लाएं। 12–24 घंटे तक पुडिंग के बाद अंकुरित बीजों को ड्रम सीडर के जरिए बोएं और निराई के लिए कोनोवीडर का इस्तेमाल करें। इससे पैदावार बढ़ेगी।

क्लोरोफिल के इस्तेमाल से नाइट्रोजनजनित उर्वरकों की कम जरूरत होगी। प्रति हेक्टेयर 10 टन गोबर की खाद के इस्तेमाल से खेतों की उर्वराशक्ति बढ़ती है और लंबे समय तक धान की अच्छी फसल ली जा सकती है।

कृषि वैज्ञानिकों ने किसानों को सलाह दी है कि वे धान के लिए केवल अनुशंसित संकर किस्म उगाएं। राज्यों के कृषि विभागों, कृषि विज्ञान केंद्रों और ऐसी ही अन्य संस्थाओं को सलाह दी गई है कि वे खेती के लिए धान की संकर किस्मों के इस्तेमाल के लिए किसानों में जागरूकता पैदा करें और उन्हें प्रेरित करें।

जहां तक बासमती चावल की खेती का संबंध है, इसमें फसल कटाई के लिए समय का काफी महत्व है, क्योंकि इससे बासमती चावल की सुगंध और गुणवत्ता पर प्रभाव पड़ता है। यदि फसल देर से काटी जाए तो बाली से धान झरने लगता है और फटने लगता है। इसकी वजह से धान की मड़ाई के दौरान चावल टूटने लगता है।

जब दाने में 20–22 प्रतिशत की नमी हो उस समय फसल काटने से ज्यादा से ज्यादा धान मिलता है और साबुत चावल भी ज्यादा मात्रा में प्राप्त होता है। ✱

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. 12057/2003-05
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.) -55/2003-5

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL 12057/2003-05
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2003-05
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रो. उमाकांत मिश्र, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया-II, नई दिल्ली-20 : संपादक : स्नेह राय